मानव-हृदयकी कथायें

मानव-हृदयकी कथायें।

फ्रान्सके सर्वश्रेष्ठ कहानी-लेखक गई-ड-मोपासाँकी
चुनी हुई कहानियोंका अनुवाद।

अनुवादकर्त्ता—

श्रीयुत बाबू मदनगोपालजी

बी० ए०, एलएल० बी०, वकील।

प्रकाशक,

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-कार्यालय,
हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई।

आषाढ़, १९८६ वि०।

जुलाई, १९२९।

प्रथम वार] [मूल्य एक रुपया

सजिल्दका १॥)

विषय-सूची ।

पृष्ठांक

मोपासाँकी कहानियाँ ५

ग्रन्थकारका परिचय ७

कहानियाँ १-१२७

१ क्या यह स्वप्न था ? १

२ लक्कड़ ७

३ चन्द्र-प्रकाश १४

४ आदर्श २०

५ नये वर्षकी भेट २९

६ घातक ३७

७ यात्रा-प्रसंग ४५

८ किसान-पत्नी ५३

९ मेरी पत्नी ६३

१० वैवाहिक उपहार ७२

११ हीरेका कंठा ८०

१२ नकली आभूषण ९१

१३ तिरिया-चरित १००

१४ क्षमा ११०

१५ मारटाइन ११९

मोपासाकी कहानियाँ।

हिन्दीमें जो अधिकांश कहानियाँ हैं, वे प्रायः बंगलासे अनुवादित हैं। अभी अनेक हिन्दी पाठक यह नहीं जानते कि पाश्चात्य साहित्यमें यह कला कितनी बढ़ गई है, क्यों कि हिन्दीमें उन कहानियोंके बहुत कम अनुवाद निकले हैं। बाबू मदन गोपालजीका मोपासाँकी कहानियोंका अनुवाद करना स्तुत्य है।

मोपासाँ फ्रान्सका नामी कहानी-लेखक था। योरपमें कथा-साहित्यकी कलाका उत्कर्ष जितना फ्रान्सकी कल्पनामय भूमिमें हुआ है उतना किसी दूसरे देशमें नहीं। फ्रान्सीसी उपन्यास तथा आख्यायिका-लेखकोंके जोड़के साहित्यिक दूसरी जगह नहीं मिलते। यदि उपन्यास लिखनेमें विक्टर ह्यूगो, और बालज़ैक अद्वितीय हैं, तो आख्यायिका-लेखकोंमें मोपासाँका कोई सानी नहीं है। अनातोल फ्रान्सने भी इस मैदानमें अच्छा नाम पैदा किया है। भारतीय आख्यायिका-साहित्यमें जो स्थान शरत् बाबू, रवि बाबू, और प्रभात बाबूको प्राप्त है; या हिन्दीमें जिस स्थानपर मित्रगण प्रेमचन्दजीका कब्ज़ा कराना चाहते हैं, संसारके आख्यायिका-साहित्यमें वही स्थान मोपासाँका है। मोपासाँ आख्यायिका-जगत्‌का सम्राट् है। विदेशके अनेक पत्रोंमें मोपासाँ और अनातोल फ्रान्सकी कहानियोंके भावापहरण देखे जाते हैं। मोपासाँकी इन कहानियोंका विषय स्त्री-पुरुषोंके साधारण प्रेमसे लिया गया है; किन्तु भाव-जगत्‌में उससे भारी क्रान्ति उत्पन्न हो गई है। 'क्या यह स्वप्न था?' का विह्वल प्रेमी अपनी स्वर्गगता प्रेयसीके लिए निरन्तर व्याकुल रहकर कल्पना-जगत्‌में उसकी समाधिपर अपनी प्रीतिका अर्घ्य देनेके लिए पहुँचता है; परन्तु अन्तमें वह जो कुछ देखता है उसे देखकर सहृदय पाठककी आँख झेंप जाती है। उसका विजय गर्व टूट जाता है और भावका प्रवाह एक नितान्त विपरीत दशामें जा पड़ता है। मोपासाँ इस प्रकार अन्त करनेकी अनन्त शक्ति रखता है और वह सब कुछ कहकर जो नहीं कहना चाहता वह बड़ा मार्मिक होता है। मोपासाँ वह सम्राट् है जिसके इच्छा-शासनके विरुद्ध पाठक-प्रजा एक

कदम इधर उधर नहीं रख सकती। उसमें निर्दयता भी बहुत है। क्यों कि वह रुलाता है और आश्चर्यमिश्रित भावुकताकी स्थितिमें अकेला छोड़कर भाग जाता है। स्त्री-जातिपर उसकी आस्था नहीं है। उसे दलित करके ही मानो वह समाजकी मर्यादाहीन रसिकताका नाश करना चाहता है।

प्रेमचन्दजीकी 'प्रेम-पूर्णिमा' और 'सप्तसरोज'में मोपासाँकी कलाकी छाप दिखाई देती है। उनकी साधनशैली, उनका विचारक्रम, उनका घटना-विकास और अन्तमें घटनाओंकी लौटके साथ भावुकताका तोड़ मोपासाँ—लोककी किसी विस्मृत अनुभूतिकी याद दिला देते हैं।

प्रेमचन्दजीका 'कौशल' मोपासाँकी 'डायमंड—नेकलेस' (हीरेका कंठा) कहानीसे न मालूम कैसे टक्कर खा गया है। वहाँ मामला छापसे भी अधिक बढ़ गया है। इस रूपमें प्रेमचन्दजीने और 'आश्चर्यजनक घंटी'में स्वामी सत्यदेवजीने सीधे साधे रूपमें मोपासाँके साथ हिन्दी पाठकोंका थोड़ा बहुत परिचय करा दिया है। अब बाबू मदनगोपालजीने उनकी कुछ उत्तम कहानियोंका अनुवाद किया है, जिससे हिन्दी पाठकोंका इस बड़े भारी साहित्यिकसे यथार्थ परिचय होगा। उन्होंने मोपासाँके जीवन और कामपर भी जो थोड़ासा लिखा है, वह बड़े महत्त्वका है। आशा है, बाबूसाहब मोपासाँकी अन्य कहानियोंका अनुवाद भी हिन्दी पाठकों तक पहुँचायँगे। इसके लिए हिन्दी जनताको उनका उपकार मानना चाहिए।

मुरादाबाद,
श्रावणकृष्णा ६
संवत् १९८५

ज्वालादत्त शर्मा।

ग्रन्थकारका परिचय।

संसारके असंख्य पाठक गई-ड-मोपासाँके ग्रन्थ आज भी बड़े चावसे पढ़ते हैं। विशेषभाव-प्रदर्शक, उच्च कोटिकी आख्यायिकाओंके लेखकके नाते इनका नाम बड़े आदरसे लिया जाता है। महाबली कालको इस साहित्यमहारथीके चरणोंमें प्रतिष्ठारूपी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करनी पड़ी है। पन्द्रहवीं शताब्दिमें पश्चिमीय जगतमें जो स्थान वोकेशियोको प्राप्त था, वही उन्नीसवीं शताब्दिमें मोपासाँको दिया जाता है। यह कहना तो कठिन है कि भविष्यमें भी इनका आसन ऐसा ही उच्च बना रहेगा; परन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इनका देहान्त हुए ३५-३६ वर्ष वीत गये हैं; फिर भी इनकी कीर्त्ति अबतक न केवल अक्षुण्ण बनी हुई है, प्रत्युत इनके ग्रन्थोंका सम्मान करनेवालोंकी संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। प्रसिद्ध ग्रन्थकारोंकी पुस्तकोंकी बिक्री उनके जीवन-कालमें बहुत अधिक होनेपर भी उनकी मृत्युके उपरान्त प्रायः कम हो जाती है; परन्तु इनके विषयमें ऐसा नहीं हुआ। ज्यों ज्यों समय वीतता जाता है, समसामयिकोंकी भाँति अन्य पाठक भी इनकी प्रतिभाका लोहा मानते जाते हैं। कहानी-लेखक तो इनके नामको अपने दलका ध्वजचिह्न समझते हैं।

इन्होंने अपने विचार ऐसी वास्तविक, शुद्ध तथा सुन्दर भाषामें प्रकट किये हैं कि आजतक उनकी वैसी ही प्रतिष्ठा बनी हुई है। इनकी लेखन-शैली निराले ढँगकी—अपनी निजी—है और उसपर इनके व्यक्तित्वकी छाप सी लग गई है। वह लोक-प्रिय भी है और पुरानी पड़ जानेपर भी नयी-सी भासती है। इन्ही गुणोंसे आज इनका आसन साहित्य-महारथियोंमें बहुत ऊँचा है।

मोपासाँका जीवन भी उनकी कहानियोंके समान अल्प एव दुःखान्त ही हुआ। यदि वह गुप्तरूपसे अपनी जीवनसम्बन्धी कथा लिख डालते, तो वह भी सहजहीमें उनकी अन्य कृतियोंमें ऐसी मिल जाती कि लोग उसे भी उन्हींकी एक उपयोगी कृति समझने लगते। ऐसा प्रतीत होता है मानो जीवनके अधिष्ठाता दैवने उनकी कलाका अनुसरण करके उन्हें सम्मानित किया है। उनका जन्म

फ्रांस देशके सेन-ऑं-फैरियर जिलेके मीरोम्जनीब नामक स्थानमें, ५ अगस्त सन् १८५० ईस्वीको हुआ था। उनकी माता श्रीमती लौर-ल-प्वाटवैं नारमंडी (फ्रांसके प्रान्त विशेष) की रहनेवाली थीं, और पिता श्रीयुत गुस्टाव-ड-मोपासाँ लोरेन (फ्रांसका प्रान्तविशेष) के एक उच्चकुलोद्भूत होनेपर भी नारमंडीहीमें आकर बस गये थे। मोपासाँके पितामहकी रुआँ नामक नगरके निकट न-वील-शाँड्वा-जैल स्थानमें कुछ ज़मींदारी भी थी, जो उनकी मृत्युके उपरान्त उनके पिताको मिली थी। पैतृक सम्पत्ति साधारण होनेके कारण वह पैरिसमें दलालीका काम किया करते थे।

मोपासाँकी शिक्षा यीव-टो नामक स्थानमें प्रारम्भ हुई और इसके पश्चात् इन्होंने रुआँ नामक नगरके एक हाईस्कूलमें जाकर अध्ययन किया। इनकी गणना साधारण श्रेणीके विद्यार्थियोंमें थी; परन्तु उन दिनों भी इनका साहित्य-प्रेम विशेषरूपसे प्रसिद्ध था—और जैसा कि प्रायः इस अवस्थामें हुआ करता है वह प्रेम कविताके रूपमें प्रकट होता था। विद्यार्थी-जीवनमें इन्होंने जो काव्यरचना की थी वह अबतक सुरक्षित है और ल-ड्य-क्रेअटर (सृष्टि-कर्त्ता) के नामसे प्रकाशित की गई है।

कहाँ साहित्य-प्रेम और कहाँ दलाली! दोनोंमें बड़ा अन्तर है। साधारणतया ये दो व्यवसाय एक स्थानमें एकत्रित नहीं रहते; परन्तु मोपासाँकी परिस्थितिमें ऐसा ही हुआ और इसका एक कारण था। नॉरमन जातिके प्रसिद्ध साहित्यिक श्री गुस्टाव-फ्लाबेर—जिनकी गणना बड़े बड़े मेधावियोंमें होती थी—मोपासाँकी माताके अभिन्नहृदय मित्र थे। इन दोनोंकी मित्रता इतनी घनिष्ठ थी कि बहुतसे लेखकोंने तो धोखा खाकर इनको निकटवर्ती सम्बन्धी तक लिख मारा है; परन्तु इसमें जरा भी सत्यता नहीं है। बात यह थी कि इनके पूर्वजोंमें भी आपसमें बड़ी घनिष्ठता थी और यह सम्बन्ध सन्तानोंने भी आजीवन खूब निभाया, इसी कारण यह भ्रम फैल गया। इस तरह मोपासाँ और फ्लाबेरका रक्त सम्बन्ध न होनेपर भी, हमारे दृष्टिकोणसे, दोनोंका एक अपूर्व और अद्भुत सम्बन्ध स्थापित हो गया था—अर्थात् मोपासाँकी लेखन-शैलीका जन्मदाता फ्लाबेर ही था।

यदि मोपासाँ फ्लाबेरको प्रकट रूपसे अपना आचार्य्य न भी मानते और हमारे पास इनके शिष्यत्वके यथेष्ट प्रमाण न भी होते, तो भी इनकी रचनाओंपर

गुरुका प्रभाव, उनकी छाप, बहुत ही सुगमतासे मालूम हो जाती। परन्तु इन बातोंकी अब आवश्यकता ही क्या है? फ्लाबेर और मोपासाँ एक ही कलाके पिता-पुत्र हैं। मोपासाँका परिचय यदि फ्लाबेरसे न होता, तो भी यह एक प्रतिभाशाली व्यक्ति गिने जाते। क्योंकि प्रतिभाशाली व्यक्ति उत्पन्न ही होते हैं, बनाये नहीं जाते। यह और बात है कि उस दशामें इनकी प्रतिभा इतनी नहीं चमकती।

फ्लाबेर ही इनके पथ-प्रदर्शक, निर्णायक और मित्र थे। यही महाशय इनके प्राथमिक लेखोंको पढ़ते और उनकी समालोचना करते थे। अनुचित उचित देखकर यथावसर भर्त्सना और प्रशंसा भी करते थे। इन्हींके कारण इन्हें निर्दय होकर आत्मालोचन करनेका अभ्यास हुआ, इनकी निरीक्षणशक्ति विकसित हुई, और यह शुद्ध शब्दविन्यासद्वारा वस्तुका वर्णन करनेमें सिद्धहस्त हो सके।

हाँ, तो माताहीके कारण इस दलालके पुत्रका विद्वानोंसे आश्चर्य्यजनक रूपसे परिचय हुआ। यह तो सहज ही ध्यानमें आ सकता है कि श्री फ्लाबेर इनके व्यापार करनेके विरुद्ध थे।

आजकलकी भाँति उस समय भी विद्वान् पुरुषोंकी सिविल-विभागमें नौकरी करनेकी चाल थी। अतएव मोपासाँके इस विभागमें नौकरी कर लेनेपर दोनों पक्षोंमें समझौता हो गया। प्रथम प्रवेश तो इनका नौ-विभागके मंत्रीके दफ्तरमें हुआ; परन्तु कुछ काल बाद ही इनकी वहाँसे बदली हो गई और यह शिक्षाविभागके मंत्री-मंडलमें जा पहुँचे।

क्लर्ककी दशामें इनकी योग्यता तथा दक्षताका किसीको कुछ भी भान न हुआ, उलटा इनकी लेखन-शैली तक महकमेके स्टैण्डर्डसे कहीं नीची समझी जाती थी। कहा जाता है कि एक बार तो इनके अफसरों तकने यह बात लिख मारी थी।

उस समय यह केवल व्यायाम तथा साहित्यहीमें अपना शेष समय व्यतीत करते थे। नाव खेने और कविता करनेके अतिरिक्त इनको और कोई काम नहीं सुहाता था। कौटुम्बिक मैत्रीके कारण इनको एलफौंस, डौडे, कव्यूल, ऐमील ज़ोला इत्यादि प्रसिद्ध विद्वानोंके पास बैठने तथा उनसे परिचित होनेका भी

अवसर था; परन्तु पूर्वोक्त प्रतिभाशाली लेखक मोपासाँको केवल साहित्य-प्रेमी, बलिष्ट और व्यायामप्रिय युवक ही समझा करते थे । पहले पहल तो फ्राबेरको भी इनकी प्रतिभाका पता न चला था; परन्तु फिर भी वह इनको लिखनेका प्रयत्न करनेके लिए सदा उत्साह दिलाते रहते थे और तब कुछ काल पश्चात् उन्हें इनकी प्रतिभाका प्रत्यक्ष अनुभव हुआ था । फ्रांस-जर्मन युद्धमें भाग लेनेके पश्चात् उसका अन्त होनेपर इन्होंने बड़े उत्साहसे उक्त आचार्य्यका विधिवत् शिष्यत्व भी स्वीकार कर लिया था ।

मोपासाँकी प्रतिभा शनैः शनैः परिपक्व हुई । सन् १८१७ में तो वह नौसिखुये ही थे और कुछ कवितायें तथा आख्यायिकायें लिखा करते थे। कवितायें तो मध्यम श्रेणीसे कुछ अच्छी होती थीं; परन्तु आख्यायिकायें ऐसी भी न होती थीं । इसी कालमें इन्होंने एक नाटक भी लिखा था—जिसकी अनुचित होनेके कारण ही बहुत प्रसिद्धि हुई । सन् १८७३ में इस नाटकका 'ऑनट्र-टा' नगरमें दो बार अभिनय हुआ, जिसमें फ्राबेर तथा टौर्जनीफ आदि साहित्यिक दर्शक-समूहमें थे और स्वयं ग्रन्थकारने रंगमंचपर स्त्रीका अभिनय किया था । सन् १८८० में इनकी प्रतिभा सहसा ऐसी अद्भुत रीतिसे परिपक्व हुई कि साहित्यके इतिहासमें उसका जैसा उदाहरण ही नहीं मिलता । जिस समय इनकी अवस्था पूरे ३० वर्षकी थी, उस समय इनकी कहानी-लेखन-प्रणाली और कवित्त्वशक्ति दोनों ही पूर्णावस्थाको प्राप्त हो गई थीं । कविताका तो यह अन्तिम काल ही समझिए । इनकी गणना मध्यमश्रेणीके कवियोंमें होती है; परन्तु कहानियाँ लिखनेमें यह ऐसे सिद्धहस्त निकले कि आचार्य पदको प्राप्त करके ही इन्होंने विश्राम लिया और अबतक भी इनको इस आसनसे कोई च्युत नहीं कर सका है । सन् १८८० में इनके डे-वेयर नामक कविता-संग्रहकी निन्दाके कारण ही बहुत प्रसिद्धि हुई । फ्रेंच सरकार तो इसको जब्त कर लेना चाहती थी; परन्तु सैनेटर (कौंसिलसदस्य) कॉर-डि-एकी कृपासे जब्ती होते होते रह गई । इस कार्य्यमें भी यह सिंह-शावक वृद्ध साहित्य-केसरीका ही अनुकरण कर रहा था । इस कारण फ्राबेरको बहुत ही हर्ष हुआ और उन्होंने मोपासाँको यह लिखकर बधाई दी कि मेरी 'मैडेम वोवारी' नामक पुस्तकपर भी पुलिसकी ऐसी ही कृपादृष्टि रही थी ।

इसी वर्ष ज़ोला, एलक्सिस, ऊ-ईज़माँ, ऑरीक इत्यादिके ऐतिहासिक ख्याति-प्राप्त 'ले-स्वारे-डे-मैडाँ'नामक कहानी-संग्रहमें कहानी-लेखकके नाते यह जनताके सम्मुख आये। इसमें इन्होंने बूल-ड-स्वीफ़ नामक कहानी लिखी थी। निर्दोष शब्दविन्यास, सुन्दर पात्रनिदर्शन और उनके गुण-दोषोंका यथा-विधि विवेचन, तथा उच्च कोटिका व्यंग इस आख्यायिकामें इस प्रकार व्यञ्जित किया गया है कि आधुनिक साहित्यके इतिहासमें ऐसी प्रौढ़ विधिसे उत्तम कोटिकी गल्प लिखनेवाले किसी एक भी नवीन गल्प-लेखकका उदाहरण नहीं मिलता। सन् १८८१ में ल-मे-ज़ाँ-टैलिये नामसे इनका एक और ग्रन्थ प्रकाशित हुआ, जिससे इनकी ख्याति और भी बढ़ गई। सन् १८८३ में इन्होंने 'फिफ़ी' नामक कहानी लिखी और लम्बी कहानियाँ लिखना भी प्रारम्भ कर दिया। इनका एक यूनवी (जीवनी) नामक उपन्यास भी उसी वर्ष प्रकाशित हुआ। इसमें एक ऐसी दोषरहित लड़कीका चित्र खींचा गया है कि जिसको विवाह, पुत्र तथा जीवन-संग्रामकी प्रत्येक स्थितिके कारण दुःख ही दुःख उठाने पड़े। अकालहीमें वृद्धा हो जाने पर भी इस भग्नहृदयाकी अन्त तक यही धारणा बनी रही कि किसीसे सुख न मिलनेपर भी मुझे पौत्रसे अवश्य ही सुख मिलेगा और इसी दशामें ग्रन्थकार इससे बिदाई ले लेता है। सदा धोखा खानेवाली, साधारण कोटिकी स्त्रीके इस चित्रका नाम मोपासाँने यूनवी—अर्थात् एक जीवनी—हृदयकी कथा—ठीक ही रक्खा है। आधुनिक साहित्यमें निर्दय आलोचनका इससे उत्तम न तो उदाहरण ही मिलता है और न इससे अधिक करुणाजनक कोई पुस्तक ही उपलब्ध होती है। इसमें प्रत्येक बात ऐसी शुद्ध, सत्य और सरल रीतिसे लिखी गई है कि इसका दूसरा नाम 'लम्वल वैरीटे', अर्थात 'शुद्ध सत्य' भी सार्थक ही प्रतीत होता है।

परन्तु इनके साहित्यक परिपाककी कथा लम्बी चौड़ी नहीं है। दस वर्ष—केवल दस वर्ष तक—ही द्रुतगतिसे इनके ग्रन्थोंका प्रकाशन हुआ। इस कालमें इनकी उत्तमोत्तम कहानियोंके ग्रन्थपर ग्रन्थ निकले। इनमें यदि कुछ कहानियाँ क्लब अथवा भंगड़खानोंकी गप्पोंके समान छोटी थीं, तो कुछ उपन्यासोंकी भाँति लम्बी भी थीं। आख्यायिकाओंके अतिरिक्त इन्होंने एक या दो लेखोंमें साहित्यपर भी अपने विचार प्रकट किये हैं और दो जिल्दोंमें यात्रा-वर्णन लिखे हैं। इनके समकक्ष विद्वानोंने तो इनकी प्रतिभाका लोहा पहलेसे ही मान लिया था; परन्तु

अब सर्वसाधारणपर भी इनका सिक्का ऐसा बैठा कि मोपासाँ और गल्प एक दूसरेके पर्यायवाची शब्द समझे जाने लगे और यह बात आज तक चली जाती है। आजतक इनकी महान् प्रतिभाकी समता शायद ही किसीने की हो; इनकी लेखन-कलाको अधिक उन्नति-शील और पूर्ण तो भला कोई कर ही कैसे सकता था।

परन्तु इनकी यह कीर्त्ति थोड़े ही दिनोंकी थी। बहुत सम्भव है कि आसन्न-मृत्यु होनेके कारण 'भावी' ही अज्ञातरूपेण द्रुतगतिसे ग्रन्थ प्रकाशित करनेमें इनको सहायता दे रही थी। वैसे तो यह खूब हृष्ट-पुष्ट और बलिष्ठ दिखते थे, परन्तु इनकी तो प्रत्येक बात ही असाधारण थी। विधिका यही विधान था कि इनके जीवनकी समाप्ति भी दुःखान्त हो। पिछले कुछ वर्षोंसे इनको यह भय होने लगा था कि मैं धीरे धीरे पागल हो रहा हूँ। काम-काज और सभा-सोसाइटी तथा देशाटनद्वारा इन्होंने मन-बहलावका यत्न किया, परन्तु वह सब व्यर्थ हुआ। रोग घटनेके स्थानमें और बढ़ गया। यहाँतक कि इनकी बुद्धि बिल्कुल जाती रही। यह कहना चाहिए कि जनवरी १८९१ के प्रारम्भमें आइक्स-ले-वैं नामक नगरमें इनका अन्तिम काल आगया। एक दिन रात्रिको २ बजे घंटीके निरन्तर तीव्र शब्दके कारण इनके खानसामाकी आँख खुल गई। दौड़कर कमरेमें जानेपर उसने मोपासाँको घोर पागलकी दशामें पाया। उनके गलेमें एक घाव हो रहा था, जिससे रुधिरकी धारा बह रही थी और वह बुरी तरह चिल्ला रहे थे।

जीवन—तुषवत् जीवन—तो किसी तरह बच गया, परन्तु फिर इनके शेष दिन पागलखानेहीमें बीते और वहींपर छठी जुलाई सन् १८९३ को ४३ वर्षकी अवस्थामें इनका देहान्त हो गया।

मोपासाँ कलाविज्ञ थे और अन्ततक अपने इसी कार्य्यमें लगे रहे। इनके रचना-सम्बन्धी अपने कुछ नियम थे। पीयर-ए-जाँ नामक ग्रन्थकी भूमिकामें यह लिखते हैं कि "विचारोंको नवीन प्रकारसे प्रकट करनेको मौलिकता नहीं कहते, वरन् किसी विचार, घटना तथा वस्तुको नवीन दृष्टिकोणसे निरीक्षण कर तत्सम्बन्धी ज्ञानमें वृद्धि करना ही मौलिकता है। धैर्यपूर्वक मनन करनेसे ही पुरुष गुणवान् हो सकता है। विचार प्रकट करनेकी आवश्यकता आपड़ने-पर तबतक मनन करना चाहिए जबतक कोई ऐसी नई बात न मालूम हो

जाय जो औरोंको न सूझी हो। फिर उसको स्पष्ट, शुद्ध और तार्किक विधिसे प्रकट करना चाहिए।" फ्लाबेर एक स्थानपर लिखते हैं कि "एक बग्घीका घोड़ा आगे पीछे खड़े हुए अन्य पचास घोड़ोंसे किस प्रकार भिन्न है, यह बात मैं एक शब्दद्वारा जानना चाहता हूँ।" आचार्य्य और शिष्य दोनोंका एक आदर्श ध्येय है।

मोपासाँ भी अन्य कलाविज्ञोंके समान थे। परन्तु जिस प्रकार वह असाधारण और विलक्षण थे उसीके अनुरूप उनकी कृतियाँ भी थीं। उनके समान कोई और लेखक इन्द्रियोंद्वारा जीवनका इतना पूर्णतया निरीक्षण नहीं कर सका। उनकी दर्शनेन्द्रिय तथा श्रवणेन्द्रिय तो चिड़ियोंकी भाँति थी और घ्राणशक्ति कुक्कुटके सदृश। समसामायिक विचार तथा संस्कृतिके यह गुलाम न थे। इनकी दृष्टिमें तो पुरुष निर्दय एवं बुद्धिहीन, जीवन मूर्खतासे भरा हुआ तथा दुःखान्त और पेरिस—मूर्ख पुरुषोंके एकत्रित होनेका स्थान पेरिस—दुःख एवं ......का भांडार था।

मोपासाँ अपनी असाधारण बुद्धिसे जीवनका विधिवत् निरीक्षण एवं अनुभव किया करते थे। उनकी कहानियाँ इसी आलोचन और अनुभवका स्वरूप हैं। अन्य छायावादी लेखकोंकी भाँति यह न तो सुहावने दृश्योंकी भूमिका ही बाँधते हैं और न कहानी प्रारम्भ करनेके लिए महान् व्यक्तियों या दकियानूसी पात्रोंहीकी सृष्टि करते हैं। कथानकोंमें पर्वतमाला या झरने, सूर्य्यास्त या चन्द्रोदय, राजभवन या जमीन्दारोंकी पिशाचग्रस्त कोठियाँ, राजा रानी तथा उच्चकुलोद्भूत व्यक्तियोंका वर्णन करना इनको नहीं रुचता। इनके दृश्य तथा पात्र ऐसे साधारण कोटिके होते हैं कि नागरिक तो क्या प्रत्येक देहाती तक उनसे परिचित होता है। इनकी सफलताका तो रहस्य ही यह है कि इन्होंने ऐसे ही मनुष्यों तथा स्थानोंका वर्णन किया है जो जन-साधारणकी समझमें सुगमतासे आसकें। सब कुछ वर्णन करके भी इन्होंने कलाको हाथसे नहीं जाने दिया है और इसी लिए सरस्वतीने इनका वरण किया है।

इनकी समस्त रचनाओंकी दस वर्षमें कोई ३० जिल्दें प्रकाशित हुई हैं—जिनमें पीयर-ए-जाँ सर्वश्रेष्ठ उपन्यास गिना जाता है। कहानियोंकी संख्या २०० से भी ऊपर है। उनमें कुछ एक साधारण श्रेणीकी भी हैं, परन्तु निरी-

क्षणशक्तिमें अपना सादृश्य न रखनेके कारण तथा त्रुटिहीन छोटी छोटी आ-ख्यायिकाओंके आचार्यके नाते साहित्यमें इनका स्थायी रूपसे उच्च स्थान है।

इस जगत्प्रसिद्ध फ्रेंच विद्वान्‌की रचनाओंका जहाँतक हमको ज्ञान है भारत-वर्षकी किसी भी भाषामें अनुवाद नहीं हुआ है, अतएव हिन्दी-भाषा-भाषि-योंको उनका कुछ रसास्वादन करानेके लिए हमने समस्त ग्रन्थावलीका अवलोकन करके, उसमेंसे स्त्री-पुरुषोंके उचित तथा अनुचित प्रेम-सम्बन्धी १५ श्रेष्ठ कहानियोंको चुनकर अनुवाद किया है। इसमें इनकी 'चन्द्रप्रकाश' नामक प्रसिद्ध कहानी भी दी गई है। प्रायः इस एक ही समस्यापर प्रत्येक कहानीमें नवीन कोणसे विचार-रश्मि डाली गई है। घटनायें साधारण होनेपर भी पाठकों-को उनसे न केवल स्थान स्थानपर इस महाकविकी उग्र प्रतिभाका परिचय मिलेगा, प्रत्युत फ्रांसके रीति-रिवाज़, रहन-सहन, संस्कृति तथा सभ्यता, सभीकी जानकारी होगी। यदि पाठकोंको ये कहानियाँ रुचिकर प्रतीत हुईं तो शीघ्र ही अगले भागमें इनकी अन्य विषयकी भाव-सौन्दर्यपूर्ण कुछ और कहानियाँ भी प्रकाशित की जायँगी।

हिन्दीके सुप्रसिद्ध कहानी-लेखक पण्डित ज्वालादत्तजी शर्माका मैं बड़ा आभारी हूँ जो उन्होंने इस संग्रहको पढ़कर यत्र तत्र संशोधित कर दिया है और साथ ही एक महत्त्वपूर्ण भूमिका लिख देनेकी भी कृपा की है।

मुरादाबाद,
ता० ७-५-२८ }

मदनगोपाल।

मानव-हृदयकी कथायें।
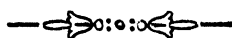
क्या यह स्वप्न था?

मैं उसके प्रेममें पागल था। मनुष्य प्रेम क्यों करता है? हृदयमें प्रेमकी कामना क्यों उत्पन्न होती है? क्या ही आश्चर्यकी बात है कि संसारमें एक ही व्यक्ति दिखाई दे, मस्तिष्कमें एकहीका ध्यान बना रहे, हृदयमें एकहीकी कामना उत्पन्न हो और ओठोंपर एकहीका नाम रहे और नाम भी ऐसा जो अन्तरात्मासे जलस्रोतकी भाँति निरन्तर निकलता रहे और मन्त्रकी भाँति—धीरे धीरे बारम्बार—जपा जा सके।

मैं अपनी कहानी सुनाने नहीं बैठा हूँ। प्रेम तो सर्वत्र एक सा ही होता है। बात केवल इतनी ही है कि देखते ही मैं उससे प्रेम करने लग गया। निरन्तर एक वर्ष तक मैं उसके प्रेमपाश—स्नेहबन्धन तथा बाहु-युगुलहीमें आवेष्ठित रहा। शब्दों, दृष्टिविन्यासों तथा भ्रू-भंगियोंपर ही रीझा किया, वस्त्रोंहीको चावसे देखा किया। निष्कर्ष यह कि उसकी प्रत्येक बातमें ऐसा तल्लीन, अवरुद्ध या यों कहो कि कैद हो गया था कि मुझे यह बोध ही नहीं होता था कि दिन है या रात, जीता हूँ या मरा, इस लोकमें हूँ या परलोकमें।

फिर उसका देहावसान हो गया। कैसे? यह न तो मैं जानता हूँ और न मुझे अब याद है। घोर वर्षामें एक दिन सन्ध्या-समय वह भीगी हुई घरमें आई, दूसरे ही दिनसे कफ जाने लगा; एक सप्ताह तक यही दशा रही और इसके उपरान्त वह रोग-शय्यापर पड़ गई। क्या रोग था यह तो अब याद नहीं रहा, परन्तु डाक्टर बहुतसे आये, नुसखे लिखे और चले गये। एक नौकरानी औषध देनेपर नियत थी। उसके हाथ सदा गर्म रहते

थे, माथा जलता था और नेत्र चमकीले और खेदयुक्त दिखाई देते थे। मेरे कुछ कहने या पूछने पर वह उत्तर दे देती थी; परन्तु मुझे अब वे बातें भी याद नहीं रहीं। मैं सब कुछ भूल गया हूँ। उसकी मृत्यु हो गई। क्षणिक, मन्द उच्छ्वास—उसके अन्तिम उच्छ्वास—मुझे अभीतक खूब याद हैं। धात्रीके मुखसे 'आह' निकलते ही मैं समझ गया कि उसका प्राणान्त हो गया।

इससे अधिक कुछ और मुझे मालूम नहीं। मैंने एक पादरीको बुलवाया, उनके यह कहते ही कि 'क्या वह आपकी प्रेमिका है?' मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि वे उसका अपमान कर रहे हैं। उसकी तो मृत्यु हो गई थी, अब किसीको हमारे सम्बन्ध जाननेका क्या अधिकार था, यह सोचकर मैंने उनको मकानसे निकाल बाहर किया। उनके स्थानमें एक दूसरे महाशयको बुला भेजा। उनकी प्रकृति दयालु और हृदय कोमल था। उनके प्रेमिकासम्बन्धी बातें प्रारम्भ करते ही मेरे आँसुओंकी झड़ी बँध गई।

शव-संस्कारके सम्बन्धमें मुझसे भी मशविरा किया गया; परन्तु उन बातोंको भी मैं अब भूल गया हूँ। केवल उस सन्दूकका रंग रूप कि जिसमें उसका शव रक्खा गया था और उसमें कीलें जड़ते समय जो हथौड़ेकी चोटें की गई थीं, वे मुझे अब भी खूब अच्छी तरहसे याद हैं। हे भगवान्, वह भी कैसा दृश्य था!

वह गाड़ दी गई! दबा दी गई! वह! और उस गड़हेमें! कुछ मित्र—स्त्री-पुरुष—शोक प्रदर्शनके लिए आये भी; परन्तु मैं बचकर निकल भागा। प्रथम तो वेगसे भागा—और फिर धीरे धीरे गलियोंकी राह अपने घर लौट आया। अगले ही दिन मैं देशाटन करनेके लिए बाहर निकल गया।

* * *

मैं कल पेरिसमें लौटकर आगया, परन्तु ज्यों ही मैंने अपने कमरेमें पैर रक्खा त्यों ही अपने वासस्थान, मृतककी शय्या तथा जीवनसम्बन्धी अन्य वस्तुओंके दर्शनमात्रहीसे मेरे हृदयमें ऐसी तीव्र वेदना उत्पन्न हुई कि मैं प्रायः खिड़की खोलकर सड़कपर कूदने तकको तैयार सा हो गया। मेरे लिए यहाँपर, इन वस्तुओंके मध्यमें, अब क्षणभर भी रहना असम्भव था। ये वे ही दीवारें थीं, जिनका उसने आश्रय लिया था। उसके चर्मके,

उसके श्वासके, सहस्त्रों अणु इनके अज्ञात रन्ध्रोंमें भरे हुए थे। मैंने यहाँसे निकल भागनेके लिए अपनी टोपी उठाई, परन्तु द्वारपर पहुँचनेसे प्रथम ही मेरी दृष्टि हॉलमें रक्खे हुए उस बड़े दर्पणपर पड़ी, जो उसने वहाँ इस कारणसे रक्खा था कि बाहर जाते समय, वह उसमें अपने पूर्ण शृंगारको, सुन्दर एवं शुद्ध वेशविन्यासको, नखशिखपर्यन्त देख ले कि कहीं कुछ कमी तो नहीं रह गई।

मैं दर्पणके सम्मुख सहसा रुक गया। इसीमें उसकी छाया सदा प्रतिबिम्बित होती थी और वह भी इतनी अधिकतासे कि मुझे उसमें उसके सर्वांशमें विद्यमान होनेका भान होने लगता था। काँपता हुआ मैं खड़ा हो गया, पर मेरी दृष्टि उसी दर्पण—उसी चपटे, विस्तृत एवं शून्य दर्पण—की ओर थी कि जिसने मेरी प्रेमिकाको मेरी भाँति—मेरी स्नेहभरी दृष्टिकी भाँति—समूचा धारण किया था। उस दर्पणके प्रति भी मुझे सहानुभूति हो चली। मैंने उसका स्पर्श किया, वह शीतल था। आह! स्मृति पुनः लौट आई। मैं अब समझा कि केवल दुःखित दर्पण, संतप्त दर्पण, सचेष्ट दर्पणके कारण ही हम क्लेश उठाते हैं, मर्माहत होते हैं। साधारण दर्पण समान हृदयवाले पुरुष तो सदा ही सुखी रहते हैं। उनके हृदयरूपी दर्पणमें तो चित्र सदा बनते बिगड़ते ही रहते हैं। पूर्व प्रतिबिम्बित चित्रोंका—स्नेहानुरंजिता प्रेमिकाका,—साधारणसा ध्यान भी भला कहीं उनमें रह सकता है!

मैं बाहर निकल आया। विना किसी संकल्पके, विना जाने हुए कि कहाँ जा रहा हूँ मैं समाधिस्थानकी ओर चल दिया और उसकी समाधिपर जा पहुँचा। समाधि सादी बनी हुई थी, केवल स्फटिकका एक सलीब उसपर लगा हुआ था, जिसमें ये कतिपय अक्षर खुदे हुए थे।

"वह प्रेमिका तथा प्रेमपात्री थी। उसका देहान्त हो गया।"

वह इसी स्थानपर पृथ्वीके भीतर पड़ी हुई सड़ रही है! कैसा बीभत्स व्यापार है! अपना मस्तक पृथ्वीपर टेककर मैं सिसकियाँ भरने लगा और दीर्घकाल तक—सुदीर्घ काल तक—ऐसे ही पड़ा रहा। अब चारों ओर धीरे धीरे अन्धकार बढ़ने लगा। इस समय मेरे हृदयमें एक अद्भुत विचार—निराश एवं भग्न-हृदय प्रेमीका मत्त विचार—उत्पन्न हुआ। मैंने निश्चय किया

कि यह रात्रि—यह अन्तिम रात्रि—इसी समाधिपर रोते हुए बिताऊँ। परन्तु मुझको तो देखते ही यहाँसे निकाल दिया जायगा। इससे बचनेका उपाय क्या है? मैं चालाक तो था ही, बस उठ खड़ा हुआ और लगा उस मृतक-नगरीमें चक्कर लगाने। बहुत देर तक यों ही घूमता रहा। मृतक-संख्या जीवितोंसे कहीं अधिक होनेपर भी जीवितोंके नगरसे यह कितना छोटा था! हमें तो आवश्यकता होती है ऊँचे मकानोंकी, चौड़ी सड़कोंकी और इतने विशद स्थानोंकी कि चार चार पीढ़ी तक उसमें एक साथ सुखसे रह सकें! इसके अतिरिक्त जीवनयात्राके लिए हमको झरनोंके जल, अंगूरी मदिरा तथा खेतोंसे अनाजकी भी आवश्यकता होती है; परन्तु मृतक-संसारके लिए,—इस अनन्त मानविक जगतके लिए—एक खेत—केवल एक ही खेतके अतिरिक्त किसी भी अन्य वस्तुकी आवश्यकता नहीं होती। माता पृथ्वी उनको अपनी गोदमें फिर धारण कर लेती है और फिर वह अतीतमें विलीन हो जाते हैं।

इस समाधि-स्थानके छोरपर मेरी दृष्टि सहसा एक पुराने समाधि-स्थल-पर जा पड़ी। इसमें तो मृतक देह भी बहुत पूर्व कालसे ही धरातलमें मिल गये थे। भविष्यतमें मृतकोंको यहाँ पुनः स्थान मिलेगा। इस विषादजनक, परन्तु सुन्दर उद्यानमें जंगली गुलाब तथा सुदृढ़ और ऊँचे सरूके वृक्ष नर-मांसके खादके कारण खूब लहलहा रहे थे।

मैं अकेला तो था ही, बस झटसे एक दृढ़ वृक्षकी घनी पल्लवयुक्त शाखा-ओंपर चढ़कर लुक गया। जहाज़ डूबनेपर जिस प्रकार यात्री समुद्रमें बहते हुए तख्तोंसे चिपट जाते हैं, मैं भी उसी प्रकार उन शाखाओंको दृढ़तासे पकड़कर बैठ गया।

घनीभूत अन्धकार हो जानेपर मैं अपने आश्रयसे निकला और उस मृतक-पूरित पृथ्वीपर धीरे धीरे, निःशंक, हल्के पैर डालता हुआ चलने लगा। परन्तु बहुत कालपर्यन्त घूमने पर भी मैं उसको—प्रियाकी समाधिको—पुनः न पासका। हाथ पसारे हुए मैं बहुत काल तक घूमा किया; मेरे हाथ, पैर, छाती, घुटने यहाँ तक कि सिर भी कई बार समाधियोंसे टकराया, पर उसका कहीं पता न था। अन्धेकी नाईं मैं टटोलकर चलता था। पाषाण, सलीब, लोहेके जंगले, धातुओंकी जंजीरें तथा सूखे हुए फूलोंकी मालायें तक

मैंने टटोल डालीं। पाषाणपर खुदे हुए अक्षरों तकको अँगुलियोंके सहारे मैंने पढ़ा; परन्तु सब बेकार, वह इसपर भी मुझे न मिली। ओह ! कैसी रात्रि थी ! कैसी भयंकर रात्रि थी ! आकाशमें चन्द्र नहीं था, भयानक अन्धकार चारों ओर छा रहा था । समाधियोंके बीच उन सुकड़े रास्तोंपर चलनेमें मुझे अब भय—अत्यन्त भय—लगने लगा ! समाधि! समाधि! सिवाय समाधियोंके यहाँ और था ही क्या! दायें बायें, आगे पीछे, चारों ओर, समाधि ही समाधि बनी हुई थीं ! घुटनोंके निर्बल हो जानेके कारण मुझमें अब और चलनेकी शक्ति नहीं रह गई थी। अतएव मैं एक समाधिपर बैठ गया। अब मुझे हृदयकी धड़कन तक सुनाई दे रही थी—और सुनाई दे रहा था कुछ अस्फुट और अज्ञात शब्द। इस अभेद्य रात्रिमें क्या यह शब्द मेरे मस्तिष्कका विकार मात्र ही था ? किंवा धरातलके नीचे मानविक शवोंसे पूरित मेदिनीमें ही हो रहा था? मैंने इधर उधर देखा, पर कुछ निश्चय न कर सका। मैं यहाँ कितनी देर रहा, इसका कुछ पता नहीं है। भयके कारण मेरा बुरा हाल हो रहा था, देह शिथिल हो गई थी, जीमें आता था कि चिल्ला उठूँ या मृत्यु ही आ जावे। सहसा मुझको स्फटिक-शिला—जिसपर मैं बैठा हुआ था—हिलती हुई प्रतीत पड़ी। निस्सन्देह वह हिल रही थी, मानों उसे कोई ऊपरको उठा रहा हो। कूदकर मैं दूसरी समीपस्थ समाधिपर जा बैठा। तब प्रत्यक्षतया क्या देखता हूँ कि पाषाण-शिला जिसपर मैं अभी बैठा हुआ था, सीधी खड़ी हो गई और एक मृत पुरुष, नग्न-अस्थिपंजर मात्र समाधिसे निकलकर उसको अपनी पीठके बल ऊपरको धकेल रहा है ! अँधेरी रात्रि होनेपर भी मैंने उसको भली भाँति देख लिया। उस समाधिपर लगे हुए सलीबपर यह लिखा हुआ थाः—

"जैक्स-ऑलिवेण्ट, जिनका ५१ वर्षकी अवस्थामें देहान्त हुआ था, यहाँ विश्राम करते हैं। वे पूजनीय और दयालु थे। अपने कुटुम्बसे उनको अतीव स्नेह था। परमेश्वरका ध्यान करते हुए उन्होंने शान्तिपूर्वक शरीर त्याग किया।"

समाधिपरके खुदे हुए अक्षरोंको मृतकने भी पढ़ा और फिर उसने दूर पड़े हुए पत्थरके—नुकीले पत्थरके—टुकड़ेको उठाकर उन अक्षरोंको उससे छीलना प्रारम्भ कर दिया। जब वे खुरच गये, तो उसने अपनी आँखके गड्हेसे उसी स्थानको देखकर जहाँपर पहले अक्षर खुदे हुए थे अपनी अँगुलीकी

नोकसे—जो अब अस्थिमात्र अवशेष थी, दीवारपर स्फुरक दिया सला-ईकी भाँति, चमकदार अक्षर, समाधिपर फिर लिखने प्रारम्भ किये—"जैक्स-ऑलिवेन्ट, जिनका ५१ वर्षकी अवस्थामें देहान्त हुआ, यहाँ विश्राम करते हैं। शीघ्र जायदाद पानेके लोभसे अपनी क्रूरतावश वे पिताकी शीघ्र मृत्युके कारण हुए। उन्होंने स्त्रीको पीडित किया, सन्तानोंको विविध कष्ट दिये, पड़ोसियोंको धोखा दिया और जहाँ तक बन पड़ा प्रत्येक व्यक्तिको लूटा। उनका अन्त भी चाण्डालकी भाँति हुआ।"

सब कुछ लिखनेके पश्चात् वह अपनी कृतिको देखने लगा। इतनेमें मैंने जो दृष्टि फेरी तो क्या देखता हूँ कि सब समाधियाँ खुली हुई हैं और मृतक उनमेंसे निकल निकलकर सम्बन्धियोंद्वारा उल्लिखित मिथ्या लेखोंको मिटाकर उनके स्थानमें सत्य वार्त्ता लिख रहे हैं। प्रायः सभीने अपने पड़ेसियोंको कष्ट दिया था; सभी द्रोही, कपटी, पाखण्डी, मिथ्या-वादी, धूर्त्त, कलङ्की और ईर्षालु थे। इन समस्त प्रिय पिताओंने, सती नारियोंने, आज्ञाकारी पुत्रोंने, पवित्र कुमारियोंने, खरे दूकानदारोंने, कहाँ तक गिनाऊँ संक्षेपतः सभी स्त्री पुरुषोंने, जिनको सर्वथा निर्दोषी बताया गया था, चोरियाँ की थीं; धोखे दिये थे अथवा कोई अन्य निन्दनीय और कुत्सित कार्य्य किये थे। यह देख मेरे मनमें विचार उठा कि उसने—मेरी प्रेमिकाने—भी अपनी समाधिपर कुछ न कुछ अवश्य लिखा होगा। विचार आते ही मैं निःशंक हो, अधखुली समाधियों, शवों और नर-कंकालोंके बीच, उससे मिलनेके लिए दौड़ पड़ा। कफनसे ढका होनेके कारण यद्यपि मैं उसका मुख न देख सका, तो भी उसको पहचाननेमें मुझे लेशमात्र भी कष्ट न हुआ।

थोड़ी देर पहले जिस स्फटिक सलीवपर मैंने पढ़ा था कि—"वह प्रेमिका तथा प्रेमपात्री थी और उसकी मृत्यु हो गई।" वहाँ अब यह खुदा हुआ था कि—

"अपने प्रेमीको धोखा देकर एक दिन बाहर जानेके कारण शीत लग जानेसे उसका प्राणान्त हो गया।"

मालूम होता है कि अगले दिन प्रातःकाल समाधिके निकट ही मैं बेहोश पड़ा मिला।

लक्कड़ ।

—❀—
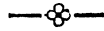
'ड्राइंग रूम' था तो छोटा, पर सुगन्धसे बस रहा था; भारी पर्दे पड़े हुए थे । चिमनीके नीचे अँगीठीमें अग्निसूत्र धधक रही थी, क्यर्निसके छोरपर मिट्टीके तेलका लैम्प जल रहा था, जिसका प्रकाश दो व्यक्तियोंके मुखोंपर पड़ रहा था, जो इस समय यहाँ बैठे बातें कर रहे थे।

इन दोनोंमें एक तो गृहस्वामिनी ही थीं जो वृद्धा थीं। इनके सब केश पक गये थे; परन्तु वर्षोंतक स्नानके समय सुगन्धित द्रव्योंके उपचारके कारण इनकी त्वचामें अबतक भी झुर्री न पड़ती थी; सुन्दर, बढ़िया काग़ज़की भाँति वह खूब चिकनी हो रही थी ।

दूसरे व्यक्ति इनके एक बहुत पुराने मित्र थे; यह आजन्म कुँवारे ही रहे। गृहिणीकी जीवनयात्रामें यह महाशय चिरसंगी, सलाहगीर और सहायक थे। दोनोंकी सदा विशुद्ध मैत्री रही।

लगभग एक मिनटसे ये दोनों चुप थे, दोनोंहीकी दृष्टि अग्निकी ओर थी। किसी गहन विषयपर विचार कर रहे हों सो बात नहीं थीं; ये तो ऐसे अभिन्न-हृदय मित्र थे कि इनके लिए यह आवश्यक ही न था कि सुखोल्लास लूटनेके लिए प्रत्येक क्षण कुछ न कुछ वार्त्तालाप होता ही रहे। इतनेमें एक बड़ासा जलता हुआ लक्कड़ अँगीठीसे निकल पड़ा और लुढ़कता हुआ कालीन तक आ गया। लक्कड़मेंसे बड़ी बड़ी चिनगारियाँ निकल रही थीं । गृहस्वामिनी तो एक दम चीख मारकर उछल पड़ीं और भागनेको ही थीं कि उनके मित्रने ठोकर मार कर लक्कड़को फिर अँगीठीहीमें ढकेल दिया और अपने जूतोंसे फर्शकी सब अग्नि बुझा दी।

अग्निकाण्ड तो समाप्त हो गया, परन्तु उसकी दुर्गन्ध सारे कमरेमें भर गई। पुरुषने वृद्धाकी ओर मुस्कुराते हुए देखकर लक्कड़की ओर इंगित कर कहा—

" इसी कारणसे मैंने आज तक विवाह नहीं किया।"

गृहस्वामिनी आश्चर्यसे उनकी ओर देखने लगीं। उनके नेत्र स्त्री-सुलभ कौतूहलसे भर गये, हृदयमें कारण जाननेकी उत्कट अभिलाषा उठ खड़ी हुई। प्राप्तवयस्का स्त्रियोंके नेत्रोंकी भाँति उनके नेत्रोंमें भी विचित्र, धूर्त्ततामयी उत्सुकता प्रतिबिम्बित होने लगी और उन्होंने पूछा—

" यह कैसे ?"

वह बोले, यह भी एक लम्बी गाथा है। इस विषादमयी कथाको सुनकर तुम्हें प्रसन्नता न होगी; परन्तु फिर भी कहता हूँ—

" हमारे एक बड़े प्रिय मित्र थे, उनका नाम था ज्यूलियन। हम दोनोंका सहसा स्नेह-विच्छेद हो जानेपर मेरे बहुतसे पुराने मित्रतक आश्चर्य्यमें पड़ गये। हम दोनों ऐसे गाढ़े मित्र किस प्रकार एक दूसरेसे एकदम अपरिचितकी भाँति हो गये, यह बात उनकी समझमें न आती थी। आज मैं इसका कारण तुमको बताता हूँ।

" पहले वह और मैं दोनों एक ही स्थानमें रहा करते थे। हम दोनों कभी एक दूसरेसे जुदा न होते थे। उस समय हमारी ऐसी दृढ़ मैत्री थी कि किसी प्रकार भी उसका टूटना असम्भव मालूम पड़ता था।

" एक दिन सन्ध्यासमय घर लौटने पर वह मुझसे कहने लगे कि— 'मैं अब विवाह करनेवाला हूँ।' यह सुनते ही मैं धकसा रह गया। मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा कि उन्होंने मुझे लूट लिया, अथवा मेरे साथ कोई विश्वासघात कर डाला। किसी मित्रका विवाह होते ही समझ लेना चाहिए कि मित्रता बिदा हो गई। स्त्रीका प्रेम तो विषय-वासनासे भरा होता है। उसमें ईर्षा, सन्देह और बेचैनीके सिवाय कुछ और नहीं होता। वह दो पुरुषोंके सच्चे, दृढ़ प्रेमको, हृदय तथा मस्तिष्कके दृढ़ विश्वासजन्य बन्धनको कब सहन कर सकता है ?

' देखो, स्त्री-पुरुषोंका सम्मेलन चाहे कितने ही अगाध प्रेमके कारण हो, परन्तु उनके मन तथा बुद्धि एक दूसरेसे सदा अपरिचितकी भाँति ही रहते हैं, वे एक दूसरेके विरुद्ध सदा लड़नेको उतारू रहते हैं। उनकी तो जाति ही एक दूसरेसे भिन्न है। उनका सम्बन्ध विजेता और विजितकासा है। कभी एक एकका स्वामी है तो दूसरा उसका दास।

उन दोनोंमें समता कभी नहीं हो सकती । प्रेमावेशमें वह दोनों एक दूसरेका काँपता हुआ हस्त-मर्दन करते हैं, परन्तु उनका यह दाब भी प्रथम तो वैसे ही दृढ़, सच्चा और चिरस्थायी नहीं होता, दूसरे उनके हृदयके कपाट भी इससे नहीं खुलते। यही कारण है कि उनका स्नेह दृढ़, सत्य और दीर्घस्थायी नहीं होता ।

"बुढ़ापेमें सान्त्वना पानेकी आशासे विवाह करना और सन्तान उत्पन्न करना प्राचीन कालके दार्शनिकोंको प्रिय न था; क्योंकि सन्तान बहुधा माता-पिताको वृद्धावस्थामें त्याग देती है। अतएव वह सच्चे और विश्वस्त पुरुषोंसे मैत्री करने और उसको आजन्म पारस्परिक विचार-विमर्शद्वारा दृढ़ करनेके लिए सदा उत्सुक रहा करते थे।

"हाँ, तो फिर मेरे मित्र ज्यूलियनका विवाह हो गया। उनकी स्त्रीका मुख अत्यन्त सुन्दर, केश काले घुंघराले और देहकी गठन दृढ़ एवं मांसयुक्त थी। अपने पतिमें उनकी असीम भक्ति मालूम पड़ती थी। उनका मुख सदा प्रसन्न रहा करता था । अपनेको बाहरी समझ पहले ही मैंने उनके यहाँ जाना कम कर दिया, परन्तु वह कब माननेवाले थे । मुझे बार बार आग्रहपूर्वक निमन्त्रित करने लगे । अन्तमें धीरे धीरे उनके जीवनका मोहनमन्त्र मेरे ऊपर भी प्रभाव उत्पन्न करने लगा । मैं बहुधा उनके यहाँ ही भोजन करता था। रात्रिको घर लौटने पर कभी कभी अब मेरे मनमें भी मित्रकी भाँति विवाहकी—अपने घरको बसानेकी—जो मुझे अब शून्य प्रतीत होता था—चाह उठने लगी।

"उन दोनोंमें परस्पर बहुत प्रेम मालूम पड़ता था और वह कभी एक दूसरेसे जुदा न होते थे।

"एक दिन सन्ध्यासमय ज्यूलियनने मुझे भोजनके लिए आमन्त्रित किया। जब मैं ठीक समय उनके यहाँ भोजन करने पहुँचा तो ज्यूलियनने कहा—प्रिय मित्र, भोजनके उपरान्त ही मुझे कार्यविशेषसे बाहर जाना है और मैं ठीक ११ बजे लौटूँगा। इससे पहले मेरा लौटना सम्भव नहीं दीख पड़ता । मुझे आशा है कि तबतक तुम मेरी पत्नीके पास यहाँ ही बैठे रहोगे। युवती इसको सुनकर कुछ मुस्कुराई और बोली—मैंने ही आज आपको यहाँ बुलवाया है । मैंने कृतज्ञता-प्रदर्शनके लिए उनकी ओर

हाथ बढ़ाकर कहा—आप तो मेरे ऊपर सदैव कृपालु रहती हैं। उन्होंने मेरे हाथको देरतक प्रेमसे दबाया, परन्तु मैंने इसको लक्ष्य नहीं किया। इसके पश्चात् हम भोजन करने बैठ गये। आठ बजते ही ज्यूलियन उठकर बाहर चले गये।

"उनके बाहर जाते ही स्त्रीके सम्मुख अकेले बैठनेमें मुझे व्याकुलता होने लगी। मेरा सम्बन्ध यद्यपि दिन प्रतिदिन दृढ़ होता जाता था, तथापि आजतक हम दोनों कभी एकान्तमें नहीं मिले थे। आज बधूके सम्मुख इस प्रकार बेठनेका मुझे पहला ही अवसर था। इस सन्नाटेसे घबराकर मैंने समय व्यतीत करनेके लिए कुछ इधर उधरकी साधारण बातें छेड़ दीं, परन्तु उन्होंने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया। वे मेरे सम्मुख मस्तक नवाये कुछ अस्थिर चित्तसी वैसी ही बैठी रहीं, मानों किसी गहन विषयपर विचार-कर रही हों। मैं भला, अकेला इसप्रकार कितनी देरतक बात कर सकता था, अन्तमें मैं भी चुप हो रहा। क्या यह आश्चर्यकी बात नहीं है कि बहुत सोचने पर भी कभी कभी कहने योग्य एक बात भी हमारे ध्यानमें नहीं आती?

"इस समय मुझे भी कुछ सन्देहसा होने लगा; परन्तु यह सन्देह क्या था और इसका क्या कारण था, यह फिर भी मेरी समझमें नहीं आया। इसकी तो मैं उन—भविष्यकी—पूर्व सूचनाओंमें गणना करता हूँ, जो किसी पुरुषके हृदयमें दूसरेके प्रति—अच्छे या बुरे—गुप्त विचार आते ही उसको सजग कर देती हैं। कुछ कालके पश्चात् इस कष्टप्रद सन्नाटेको भंग करते हुए वधूने कहा—अग्नि बुझा चाहती है, क्या आप कृपाकर कुछ और लक्कड़ न लगा देंगे?

"मैंने लक्कड़ोंका सन्दूक खोला—उनके यहाँ भी वह ठीक उसी स्थानपर रक्खा था, जहाँ यह आपके यहाँ रक्खा है—और एक बहुत बड़ा लक्कड़ उठाकर दूसरे समाप्तप्राय लक्कड़ोंपर डाल दिया। इसके उपरान्त कमरेमें फिर सन्नाटा छागया।

"कुछ ही देरमें जब वह लक्कड़ इतनी तीव्रतासे जलने लगा कि हमारे मुख तक उष्णतासे झुलसने लगे तब नवयुवतीने अपनी आँखें मेरी ओर फेर कर कहा कि यहाँपर तो गर्मी बहुत मालूम पड़ती है, चलिए, दूसरे

कोंचपर जाकर बैठें। उस समय उनके नेत्रोंमें मुझे एक विशेष प्रकारकी ज्योति निकलती दिखाई दी।

"हमारे दूसरे कोंचपर बैठ जानेके उपरान्त युवतीने सहसा मेरे चेहरेपर दृष्टि गड़ाकर कहा—यदि कोई स्त्री आपसे कहे कि मैं आपसे प्रेम करती हूँ; तो आप क्या करेंगे?

"मैं सत्य कहता हूँ कि इस प्रश्नको सुनते ही मैं सटपटा गया, मेरी बुद्धि कुण्ठित हो गई। मेरी समझमें जब कोई यथार्थ उत्तर नहीं आया तो मैंने यह कह कर टाल दिया कि—मेरे जीवनमें ऐसी समस्या उपस्थित होनेकी सम्भावना नहीं है और यदि हो गई तो आवश्यकतानुसार जो उचित होगा वही किया जायगा।

"यह सुनकर वह ऊपरी मनसे कुछ हँस दीं और फिर बोलीं कि पुरुषोंमें न तो स्पर्धा ही होती है और न साहस। कुछ क्षणतक चुप रहनेके उपरान्त उन्होंने फिर पूछा—क्यों महाशय, आपने कभी प्रेम भी किया है? मैं तो स्वीकार करनेको बाध्य ही था, अतएव 'हाँ' कर ली। इसपर वह मुझसे पूरा विवरण सुननेको उतारू हो गईं। मैंने भी एक दो मनगढ़न्त प्रेम-कहानियाँ उन्हें सुना दीं। वे उन्हें बड़े ध्यानपूर्वक सुनती रहीं, परन्तु बीचबीचमें यत्र तत्र अपनी टीका भी करती जाती थीं।

"इसके उपरान्त वह फिर सहसा मुझसे कहने लगीं—आप तो इस विषयमें नितान्त अनभिज्ञ मालूम पड़ते हैं। मेरा तो यह विश्वास है कि वास्तविक प्रेमसे मन चंचल हो जाता है, ज्ञानेन्द्रिय तथा कर्मेन्द्रिय दोनों ही शिथिल पड़ जाती हैं और मस्तिष्कमें घबराहट हो जाती है। मैं किस प्रकार उसका वर्णन करूँ! वह केवल भयंकर और कठोर ही नहीं है, प्रत्यक्ष दूषित तथा दूषक भी है। वह तो एक प्रकारका राजद्रोह है। मेरा अभिप्राय यह है कि प्रेम-पथाभिगामी होनेपर न्यायविरुद्ध आचरण करने पड़ते हैं, मातृ-पितृस्नेह तक टूट जाता है, धार्मिक बन्धन एवं नियम तक भंग हो जाते हैं। शान्तिप्रद, धार्मिक, भयहीन तथा सुगम प्रेमको कौन वास्तविक प्रेम कह सकता है?

"ये बातें सुनकर मैं घबरा गया। मेरी समझमें यही न आया कि इनको क्या उत्तर दूँ। मेरे मनमें उस समय बारम्बार यही विचार उठ रहा था।

कि नारि-हृदय, तू भी क्या ही अद्भुत वस्तु है ! तेरा सत्य स्वरूप मुझे आज इतने दिनोंके बाद मालूम पड़ा है।

"वार्त्तालाप करते करते मित्रपत्नीने अब गम्भीर साधुभावसे अपना मस्तक गद्दोंपर रख लिया था और पैर फैला दिये थे। ऐसा करनेसे उनके वस्त्र कुछ ऊपरकी ओर खिंच गये थे और उनके पैरोंके लाल मोजे अग्निके प्रचण्ड प्रकाशमें और भी अधिक लाल दिखने लगे थे। एक या दो मिनट पश्चात् ही वह फिर कहने लगीं—तुम मेरी बातोंसे कहीं भयभीत तो नहीं हो गये? मैंने इस विचारका विरोध किया। बस फिर क्या था, वह मेरे गात्रोंसे और भी अधिक सट कर बैठ गईं और यों बोलीं कि—यदि मैं तुमसे यह कहूँ कि मैं तुमसे प्रेम करती हूँ, तो तुम क्या करोगे ?

"मेरे इस प्रश्नका उत्तर सोचनेसे प्रथम ही उन्होंने मुझे अपने बाहु युगुलसे आवेष्टित कर लिया। ओफ़ ! प्यारी सखी, मैं सत्य कहता हूँ कि उनके ऐसा करनेसे मेरा हृदय व्यथित हो उठा। क्या अपने प्यारे मित्र ज्यूलियनके साथ इस प्रकारसे छल करना मेरे लिए सम्भव था ? और भी वह इस पुंश्चली, पथभ्रष्टा नव युवतीके कारण जो अपने पतितकसे असन्तुष्ट थी ? अपने मित्रको इस प्रकार छलना, उनके साथ ऐसा कपट व्यवहार, मित्र-पत्नीके साथ इस प्रकार प्रेम-स्वाँग भरना, ये सब मेरे लिए असम्भव थे। परन्तु मुझे क्या करना चाहिए, यह मुझको उस समय न सूझता था। यूसुफकी भाँति आचरण करनेका विचार न केवल मूर्खतामात्र था, प्रत्युत दुरूह एवं दुस्तर भी दीख पड़ता था। कारण यह था कि प्रथम तो यह युवती वैसे ही आवेशमयी हो रही थी और औद्धत्यमें चूर चूर होनेके कारण उसका बड़े वेगसे हृत्कम्प हो रहा था, दूसरे विश्वासघात करने पर भी उसकी सुन्दरता मनको मोहे लेती थी। सम्भव है कि वे पुरुष जो नवयुवतियोंके बाहुपाशमें इस प्रकार वेष्टित नहीं हुए हैं, इन विचारोंके लिए मुझे धिक्कारें; परन्तु मुझे इसकी कुछ चिन्ता नहीं।

"हाँ, तो एक क्षण भी अधिक ऐसा और रहता तो तुम समझती हो कि क्या होता ! मैं......नहीं, नहीं, वह नवयुवती......नहीं नहीं, मैंने

गलती की, उनके पति महोदय ही,......परन्तु इसी समय एक शब्द हुआ और उसके कारण हम दोनों चौंक कर उछल पड़े। जलता हुआ लक्कड़ अँगीठी परसे कालीनपर आ गिरा था और अँगीठीकी छलनी इत्यादि भी झटकेसे उलट गई थीं। लक्कड़ एक आरामकुर्सीके नीचे कालीनपर पड़ा हुआ था, इसके कारण कुर्सी भी जलने लग गई थी।

"मैं उन्मत्तकी भाँति कूदकर खड़ा हो गया और उस लक्कड़को—जिसने मेरी इस विषम अवस्थामें रक्षा की थी—यथास्थानपर रख ही रहा था कि सहसा कमरेका दर्वाज़ा खुला और मेरे मित्र ज्यूलियन अन्दर आ गये।

"प्रसन्न होकर उन्होंने कहा कि अब कहीं फुर्सत मिली है। चलो, अच्छा हुआ कि सब काम दो घंटे पूर्व ही अनायास निबट गया।

"हाँ, तो तुम भली प्रकार समझ सकती हो कि उस लक्कड़ने ही संकटमें मेरी रक्षा की। यदि वह न होता तो मैं उसी दशामें पकड़ लिया जाता, फिर भगवान् ही जाने मुझे क्या क्या यातनायें भोगनी पड़तीं और उनका क्या फल होता।

"तबसे मैं सदा सतर्क रहता हूँ कि फिर कहीं और इस प्रकारसे न फँस जाऊँ। इस संयोगके पश्चात् ज्यूलियनने भी मुझसे स्नेहबन्धन ढीला करना प्रारम्भ कर दिया। इसका प्रधान कारण उनकी स्त्री ही थी। वह हमारी मैत्रीका अब और अधिक रहना न चाहती थीं। धीरे धीरे उन्होंने मुझसे मिलना कम कर दिया, यहाँतक कि अब हम एक दूसरेसे बिल्कुल नहीं मिलते।

"मैंने इसके उपरान्त विवाह नहीं किया और मुझे विश्वास है कि यह सुनकर तुमको कुछ भी आश्चर्य न हुआ होगा।"

चन्द्र-प्रकाश।

श्रीमती ज्यूली रुवैरी, आज अपनी बड़ी बहन श्रीमती हैनरियट लिटौरीकी जो स्विट्ज़रलैंडकी यात्रा कर हालहीमें लौटकर आई हैं, प्रतीक्षा कर रही हैं।

महाशय लिटौरी सकुटुम्ब पाँच सप्ताह पूर्व पहाड़की यात्राको गये थे। एक आवश्यक कार्यके कारण पति महोदय तो अपनी जन्म-भूमिको लौट गये हैं, परन्तु श्रीमतीजी (पत्नी महोदया) अपनी बहिनसे मिलनेके हेतु पेरिसमें ठहर गई हैं।

रात्रि प्रारम्भ होनेहीको थी। अपने कमरेमें बैठी हुई श्रीमती रुवैरी सन्ध्याके प्रकाशमें कुछ पढ़ रही थीं; परन्तु उनका मन बिल्कुल पढ़नेमें न लगता था और जब कभी किसी ओर तनिक भी शब्द होता तो उनकी आँख उसी क्षण उसी ओर उठ जाती थी।

अन्तमें उनको दर्वाजेपर खटखटाहट सुनाई दी और लबादा ओढ़े हुए उनको अपनी बहिन आती दिखाई दी। विना किसी शिष्टाचारके दोनों बहिनोंने एक दूसरेको गाढ़-प्रेमके कारण बारम्बार आलिंगन किया। श्रीमती हैनरियटके टोप तथा लबादा उतारते उतारते भी दोनों बहनोंने परस्पर स्वास्थ्य-सम्बन्धी, कौटुम्बिक तथा इधर उधरकी बहुतसी बातें टूटेफूटे वाक्योंद्वारा ही कर डालीं।

इतनी देरमें अँधेरा भी अपेक्षाकृत अधिक हो गया था। रुवैरीने लैम्प मँगानेके लिए घँटी बजाई। लैम्प आ गया। उसके प्रकाशमें वह अपनी बहनको पुनः आलिंगन करनेहीको थी कि हैनरियटकी आकृति देखकर वह यकायक सहम गई और टकटकी बाँधकर बड़े आश्चर्य्यसे उसके मुखकी ओर देखने लगी। श्रीमती लिटौरीकी कनपटीके दोनों ओरकी केश-लटें श्वेत हो गई थीं, शेष केश काले थे। शुभ्र सरितयुग्मकी

भाँति ये (दोनों) लटें काले केश-पाशमें विलीन हो गई थीं। उनका वयस् केवल २४ वर्षहीका था; किन्तु यह परिवर्त्तन स्विट्ज़रलैंड जानेके समयसे ही यकायक हो गया था।

कुछ पलतक तो श्रीमती रुवैरी आश्चर्य्यान्वित हो अचलरूपसे उनकी ओर टकटकी बाँधे देखती रहीं। फिर इस विचारके आते ही कि उनकी ज्येष्ठ-भगिनीपर अवश्य कोई गुप्त एवं भीषण विपत्ति पड़ी है, जिसके कारण उनकी ऐसी दशा हुई है, उनकी आँखोंमें आँसू भर आये। अन्तमें उन्होंने पूछा—प्यारी हैनरियट, बताओ तो क्या बात है?

विषादयुक्त मुखसे कुछ मुस्कुराकर हैनरियटने कहा—मैं सत्य कहती हूँ, कुछ भी बात नहीं है। क्या तुम श्वेत-केश-कलापोंको देख रही थीं?

परन्तु उनकी मुस्कुराहट और शब्दोंसे यह प्रतीत होता था कि वह किसी महती हृदय-व्यथासे पीड़ित हैं।

श्रीमती रुवैरी कब माननेवाली थीं! उन्होंने बलपूर्वक अपनी भगिनीके कन्धे पकड़ लिये और वे तीव्रदृष्टिसे उनकी ओर देखकर कहने लगीं—मुझे सच सच बताओ कि क्या बात है। देखो, अगर तुमने जरासा भी झूठ बोला तो मैं उसी दम ताड़ जाऊँगी।

दोनों बहनें एक दूसरेके सामने बैठी थीं। श्रीमती हैनरियट इस समय मूर्च्छित-प्राय थीं और उनके नत कमल-दल-लोचन-कोणोंमें अश्रुबिन्दु मुक्तावत् झलक रहे थे।

छोटी बहनने फिर कहा—तुमको हो क्या गया है? अपना हाल तो कहो?

तब बहुत धीरे धीरे अस्फुट शब्दोंमें वह यह कहकर कि—मेरा—'मेरा एक प्रेमी है' अपना मुख छोटी बहनके कन्धेपर डालकर सिसकियाँ भरने लगीं।

जब वह कुछ शान्त हुई और उनके हृदयकी धड़कन भी बन्द हो गई, तब उन्होंने धीरे धीरे अपने हृदयके गुप्त-रहस्यको, तीव्र शोक मिटानेके हेतु, अपनी भगिनीके प्रति प्रकट करना प्रारम्भ किया। दोनों बहनें एक दूसरेका हाथ दृढ़तासे पकड़े हुए उठीं और कमरेमें एक ओर जाकर जहाँ

अँधेरा हो रहा था, एक कौंचपर बैठ गईं। छोटी भगिनीने अपनी बाँह बड़ी भगिनीकी गर्दनमें डालकर उसको अपने हृदयकी ओर और भी अधिक खींच लिया और वह इस तरह उनकी कथा ध्यानपूर्वक सुनने लगीं।

❀ ❀ ❀ ❀

"हाय! यह काम मैंने अकारण ही क्यों किया, यह बात मेरी समझमें आजतक नहीं आई। उस दिनसे तो मैं पगलीसी हो गई हूँ। प्यारी बहन, तुम अवश्य सावधान रहना, ऐसा न हो कि तुम भी धोखा खा जाओ। तुम नहीं जानतीं कि हम सब कैसे निस्सहाय और निर्बल हैं और हमारा अधःपतन कितनी शीघ्रतासे हो सकता है।

"कभी कभी मनके एकदम उदासीन होनेपर हमारे हृदयमें किसीसे प्रेम करने अथवा अभिलषित पदार्थोंके पानेकी उत्कट लालसा उत्पन्न हो जाती है और ऐसे समय मनोवृत्तिमें तनिकसी भी दुर्बलता आनेसे ऐसी बातें बड़ी सुगमतासे, क्षणमात्रमें ही हो जाया करती हैं।

"मेरे पतिको तो तुम जानती ही हो और तुमसे यह भी छिपा नहीं है कि मैं उनसे कितना प्रेम करती हूँ। विवेकी तथा प्रौढ़वयस्क होनेके कारण अबलाके हृदयकी तरल तरंगोंके आभासमात्रका भी उनको ज्ञान नहीं हो सकता। आह! न जाने कितनी बार मेरी यह हार्दिक कामना रही है कि वे उद्दण्डतापूर्वक मुझे अपने बाहु-युगलमें कभी तो वेष्टित कर लें। अथवा मूक-विश्वास-सरिस मन्द मधुर चुम्बनद्वारा ही गाढ़ालिंगन कर लें, जिससे हमारी एक प्रकारकी अभिन्नता तो स्थापित हो जाय। न मालूम कितनी बार मेरे मनमें यह अभिलाषा उठी है कि क्या ही अच्छा होता यदि उनमें विवेक तथा दृढ़ताकी मात्रा ही कुछ कम होती;—क्योंकि ऐसा होनेपर उनको मेरी—मेरे आँसुओंकी—मेरे प्यारकी—तो आवश्यकता होती!

"ये बातें मूर्खोंकी सी हैं; परन्तु हम स्त्रियाँ तो हैं ही ऐसी। यदि हम, ऐसा विचार करें तो इसमें हमारा अपराध ही क्या है?

"परन्तु फिर भी मेरे मनमें कभी यह विचार नहीं आया कि उनके साथ छल करूँ। किन्तु चन्द्र-ज्योत्स्नामें 'ल्यूसरनी' झीलके किनारे विना प्रेम अथवा विना ज्ञान और विवेकके यह सब अकारण हो गया।

"पूरे महीनेभर हमारी यात्रा होती रही; परन्तु पतिकी गम्भीर उदासीनताके कारण मेरा समस्त उत्साह भङ्ग हो गया और सारी कविकल्पनायें विलीन हो गईं। एक दिन सूर्योदयके समय हम पहाड़से उतर रहे थे, हमारी गाड़ीके चारों घोड़े सरपट दौड़े जा रहे थे। प्रातःकालीन निर्मल धुंधमें वन, घाटी, नदी, गाँवके प्राकृतिक दृश्य दृष्टिगोचर होते ही हर्षाधिक्यसे मेरा हृदय-मयूर नृत्य करने लगा और हस्तताल द्वारा उसमें सहयोग देने लगे। मैंने उनसे कहा—'प्रियतम, क्या ही सुन्दर दृश्य है। मुझे चुम्बन प्रदान करो।' उन्होंने इसपर केवल इतना ही कहा—'मेरी समझमें नहीं आता कि प्राकृतिक दृश्यकी सुन्दरता और चुम्बनमें परस्पर क्या सम्बन्ध है।' यह कहकर उन्होंने मेरी ओर गम्भीरतासे इस प्रकार मुस्कुराकर देखा कि मैं काँप उठी।

"उनके शब्दोंसे मेरा हृदय तक ठिठुर गया। मेरा तो विचार यह है कि सुन्दर प्राकृतिक दृश्योंको देखनेसे प्रेमीजनोंका पारस्परिक हृदयगत् प्रेम बड़े वेगसे उमड़ आता है। मेरा मस्तिष्क उस समय कवि-कल्पनाओंसे ओत-प्रोत हो रहा था; परन्तु मेरे पति उनके प्रस्फुट होनेमें बाधक हो रहे थे। मेरी दशा उस समय एक ऐसे बायलरकी सी हो रही थी कि जिसका मुख, अन्दर खूब स्टीम भरकर-बन्द कर दिया जाय। स्टीम भरकर मुख बन्द कर देनेपर जो दशा बायलरकी होती है, वही उस समय मेरी हो रही थी।

"एक दिन सन्ध्यासमय रॉवर्ट तो खाना खाते ही सिरदर्दके कारण बिस्तरपर जाकर लेट गये; परन्तु मैं झीलके किनारे किनारे अकेली ही टहलने चली गई।

"वह रात्रि, काव्य-वर्णित रात्रिकी भाँति थी। पूर्णचन्द्र गगन-मण्डलके मध्यमें शोभायमान था। बर्फ़से ढकी हुई उत्तुंग पर्वतमालाओंकी चोटियाँ, रजत-मुकुट धारण किये हुएसी प्रतीत हो रही थीं। झीलके जलमें छोटी छोटी लहरें उठ रही थीं और वह चाँदनीमें झिलमिला रहा था। वायु भी मन्द मन्द गतिसे बह रहा था; परन्तु उसमें एक ऐसी हृदय-वेधक उष्णतासी प्रतीत होती थी कि जिससे अकारण ही सारी इन्द्रियाँ शिथिल होकर किसी अज्ञातशक्तिके वशीभूत हो रही थीं। ऐसे

समय हृदयकी गति कितनी तीव्र हो जाती है और मनोवृत्ति कितना उग्ररूप धारण करती है, यह तुमको बतानेकी आवश्यकता नहीं है।

"मैं घासपर बैठकर विस्तृत झीलके मनोहारी दृश्यको तृषित नेत्रोंसे पान करने लगी। मेरे हृदयमें एक अद्भुत रस-संचारके कारण अपने उदासीन एवं शून्य जीवनके प्रति विप्लव आरम्भ हो गया और मुझे प्रेमकी आवश्यकता प्रतीत होने लगी। मैं सोचने लगी कि क्या ज्योत्स्ना-प्लावित झीलके किनारे प्रियतमके हाथमें हाथ देकर भ्रमण करना भी ईश्वरने मेरे भाग्यमें नहीं लिखा है? क्या विधि-निर्मित ऐसी रमणीय रात्रिमें भी मैं प्रियजनोचित गम्भीर एव मधुर अधरामृत-पानसे वंचित ही रहूँगी? क्या शरदऋतुकी स्वच्छ चन्द्रिका-पूर्ण रात्रिमें भी प्रेम मेरे लिए अज्ञेय पदार्थ ही बना रहेगा? एक उन्मत्तकी भाँति ये बातें विचारते विचारते मेरी अविरल अश्रुधारा बह चली।

"इसी समय मुझे अपने पीछे कोई पदार्थ हिलता हुआ सा मालूम हुआ। वह और कोई नहीं था, एक पुरुष था, जो मेरी ओर दृष्टि गड़ाकर देख रहा था। मैंने ज्यों ही उसकी ओर मुँह मोड़कर देखा त्यों ही वह मुझे पहचान कर कहने लगा—श्रीमती, आप क्यों रो रही हैं?

"आगन्तुक, एक नवयुवक वैरिस्टर थे। वह अपनी माताके साथ पहाड़ोंकी सैर करने आये थे। पहले भी उनका और हमारा कई वार सामना हुआ था और उनकी दृष्टि सदैव मेरी ही ओर रहती थी। उस समय मैं ऐसी घबरा गई कि न तो मुझे स्थितिहीका ज्ञान रहा और न मैं यह विचार सकी कि क्या उत्तर दूँ। मैंने केवल यही कहा कि मुझे मानसिक पीड़ा हो रही है।

"वह मेरे पीछे धीरे धीरे चलकर—यात्रामें जिन दृश्योंको हमने देखा था—उन्हींका वर्णन करने लगे। वर्णन क्या था, मेरे अनुभवका शाब्दिक अनुवाद था। किस बातसे मुझे अधिक आनन्द मिलता है, यह बात वह मुझसे कहीं अच्छी तरह जानते थे। एकाएक उन्होंने ऐलफ्रेड मसे नामक कविकी एक प्रेममयी कविता पढ़नी प्रारम्भ कर दी। सुनते ही मेरा हृदय भर आया और शरीरमें एक अद्भुत रसका संचार होने लगा। मुझे ऐसा

प्रतीत होने लगा, मानों स्वयं पर्वतमाला, झील तथा चाँदनी ही मुझको सौन्दर्य-उपासनाका गीत सुना रही है। और मुझसे एक चूक हो गई। कैसे, और क्यों, यह मैं अभीतक नहीं समझी।

"इसके पश्चात् वह फिर मुझे दिखाई न दिये, केवल चलनेके दिन मुझसे मिले और अपना एक कार्ड मुझे दे गये।"

अपनी बहनके कन्धेपर मुख डाल कर श्रीमती लिटौरी सिसकियाँ भरने लगीं।

तब श्रीमती रुवैरीने मृदु एवं गम्भीर भावसे धीरे धीरे कहा—"प्यारी बहन, क्या तुम यह नहीं जानतीं कि बहुधा हमको पुरुषसे प्रेम नहीं होता; किन्तु प्रेमसे ही प्रेम हो जाता है। उस रात्रिमें तुम्हारा प्रेमी चन्द्र-प्रकाश था।"

आदर्श।

—✣—

जुलाई मासमें एक दिन तीसरे पहर नील समुद्रतटपर अर्द्धचन्द्राकारकी भाँति बसा हुआ 'ऑन-ट्-टा'का छोटासा कसबा, सूर्यके प्रकाशमें अपने श्वेत टीलों तथा श्वेत प्रस्तरकी बटियोंके तट सहित खूब चमक रहा था। अर्द्ध चन्द्राकार वृत्तके दोनों शृङ्गोंपर 'डौक' (जहाजके खड़े होनेका स्थान) में जल-प्रवाहका नियन्त्रण करनेके लिए दो द्वार बने हुए थे। इनमें दहिना छोटा और बायाँ बड़ा था—और ये दोनों क्षुद्र एवं भीमकाय-अंग दूर तक जलमें चले गये थे। टीलेके समान तुङ्ग घंटाघर अपना ऊँचा सिर आकाशकी ओर उठाये हुए खड़ा था।

जलके समीप रेतपर बैठा हुआ जन-समूह नहानेवालोंको देख रहा था। पास ही कैसिनो होटलके चबूतरेपर बैठा हुआ अथवा घूमता हुआ अन्य प्रकारका समुदाय स्वच्छ नीलाकाशके नीचे रेशमी फूल कढ़े हुए लाल तथा नीले छातोंसहित एक पुष्प-समूहसा प्रतीत हो रहा था।

चबूतरेके छोरपर पटरी बनी हुई थी। वहाँपर सरल तथा शान्त प्रकृति-वाले पुरुष इन चटकीले वस्त्र वालोंसे पृथक् धीरे धीरे टहल रहे थे।

जीन समर नामका युवा, प्रसिद्ध एवं लब्धप्रतिष्ठ चित्रकार, नैराश्य-भावसे, पहियेदार कुर्सीके पार्श्वमें—जिसमें एक युवती स्त्री—उसकी भार्य्या—बैठी हुई थी, धीरे धीरे जा रहा था। कुर्सीको एक नौकर धीरे धीरे चला रहा था और पंगु स्त्री आकाशकी स्वच्छ नीलिमा, दिनके प्रसन्न वदन तथा औरोंके हर्षको विषादमयी दृष्टिसे निहार रही थी।

ये लोग आपसमें न तो बातचीत करते थे और न एक दूसरेकी ओर देखते ही थे। इतनेमें युवतीने कहा—यदि यहाँ हम थोड़ी देरके लिए ठहर जायँ, तो कैसा?

वह वहाँ रुक गये, नौकरने कैम्प-स्टूल दे दिया और चित्रकार उसीपर बैठ गया।

इस मूक तथा शान्त जोड़ीके पृष्ठपर जानेवाले राहगीर इनको दया-दृष्टिसे देखते चले जाते थे। इनके सम्बन्धमें भक्तिकी एक पूरी गाथा प्रसिद्ध थी। यह कहा जाता था कि इस स्त्रीका अपने प्रति अधिक अनुराग देखकर अंगहीन होनेपर भी इस युवाने तरस खाकर इससे विवाह कर लिया है।

थोड़ी ही दूर एक बैंचपर बैठे हुए दो युवा पुरुष आपसमें बातें कर रहे थे और बीच बीचमें क्षितिजकी ओर देखते जाते थे।

" नहीं, यह सत्य नहीं है। मैं कहता हूँ कि मेरी जीन समरसे खूब जान पहिचान है।"

" तो उसने इस स्त्रीसे विवाह क्यों किया? क्योंकि विवाहके समय तो वह पङ्गु थी। क्यों ठीक है न?"

" बात बिलकुल ठीक है। उसने इसी स्त्रीके साथ विवाह किया। जिस प्रकार अन्य पुरुष विवाह कर डालते हैं, उसी प्रकार उसने भी कर डाला।"

" लेकिन क्यों?"

" मित्र, तुमने यह 'क्यों' खूब कहा। अरे, इसमें 'क्यों' का प्रश्न ही नहीं है। लोग बेवकूफीके काम इसलिए करते हैं कि ऐसा करनेका उनका स्वभाव है। इसके अतिरिक्त तुम यह जानते ही हो कि बेवकूफीसे विवाह करनेमें इन चित्रकारोंने विशेषता प्राप्त कर ली है। यह बहुधा अपने 'मौडल्स' या 'आदर्श' के साथ ही विवाह कर लेते हैं। सच पूछो तो यह इनकी प्राथमिक प्रेयसी होती हैं। इनका चरित्र भी ठीक नहीं होता। ये लोग ऐसा क्यों करते हैं, इसका उत्तर कौन दे सकता है? मौडल्ससे नित्यप्रति सहवास होनेके कारण न्यायानुसार तो इस श्रेणीकी स्त्रियोंसे घृणा उत्पन्न हो जानी चाहिए; परन्तु ऐसा नहीं होता। इन स्त्रियोंको चित्र खींचनेके लिए विशेष प्रकारसे बैठा कर अन्तमें ये लोग विवाह करके ही छोड़ते हैं। ऐल फ़ौन्से डॉडे कृत (Artists' wives) 'चित्रकारोंकी भार्यायें' नामक छोटी परन्तु सत्य, कठोर तथा सुन्दर पुस्तक तो पढ़कर देखो कि क्या लिखा है।

"सम्मुखस्थित जोड़ीके सम्बन्धमें यह घटना एक विशेष एवं भयंकर रूपसे घटित हुई। इस स्त्रीने तो एक भयंकर सुखान्त अथवा यह कहना चाहिए कि

दुःखान्त नाटक खेल डाला। सम्पूर्ण विजय प्राप्त करनेके लिए अपने सर्वस्वकी बाज़ी लगा दी। इसकी क्या वास्तविक इच्छा यही थी और क्या इसको जीनसे प्रेम था, इन बातोंको क्या हम कभी जान सकेंगे? अनन्त तरल भावोंका जहाँ तक सम्बन्ध है, वहाँ तक तो यह सदा सच्ची होती हैं। अदृश्य एवं अस्पृश्य भावोंकी दास होकर यह क्रुद्ध, अपराधी, भक्त, प्रशंसनीय तथा नीच तक हो जाती हैं। विना विचारे बराबर मिथ्याभाषण करती हैं और कभी यह जानने तथा सोचनेका प्रयत्न नहीं करतीं कि हम ऐसा क्यों करते हैं। ये सब कुछ होनेपर भी अपने भावों तथा उद्गारोंको कभी नहीं छिपातीं, प्रत्युत बड़ी स्पष्टतासे कह डालती हैं और वह भी इतने आवेशमय, आकस्मिक एवं बुद्धिहीन निश्चयोंद्वारा कि हमारी सब दलीलें तो औंधे मुख गिर जाती हैं और हमारी परम्परागत गम्भीरता तथा स्वार्थ-मनोरथ भङ्ग हो जाते हैं। पूर्वानभिज्ञात तथा आकस्मिक निश्चयोंके कारण वह हमारे लिए तो सदा अज्ञेय पहेली ही रहेंगी। हमारे मनमें सदा यही प्रश्न उठते रहते हैं—क्या इनका अन्तःकरण शुद्ध है? क्या यह ढोंग तो नहीं रच रही हैं?

"परन्तु मित्र, इसमें आश्चर्य्य करनेकी कोई बात नहीं है। एक ही समयमें इनका अन्तःकरण शुद्ध होता भी है और नहीं भी होता। क्योंकि इनका स्वभाव ही कुछ ऐसा होता है कि या तो ये दोनोंकी पराकाष्ठा ही कर देंगी या इन दोनोंमेंसे एक बात भी न होगी।

"इनमेंसे सबसे अच्छी कहलानेवाली, अपनी इच्छापूर्त्तिके लिए जिन उपायोंका अवलम्ब करती हैं, उनको ही जरा ध्यानपूर्वक देख लो। यह उपाय दुरूह और सरल दोनों ही प्रकारके होते हैं। दुरूह तो इतने होते हैं कि हमको पहलेसे उनका आभास तक नहीं हो सकता और सरल भी इतने होते हैं कि उनका शिकार हो जाने पर हमको आश्चर्यान्वित हो बरबस कहना पड़ता है कि वाह! क्या ही सुगमतासे उसने हमको उल्लू बना दिया।

"वृद्धोंके साथ और विशेषकर विवाहका प्रश्न होनेपर तो वह अवश्य ही सफलमनोरथ होती हैं। परन्तु समरकी कथा इस प्रकार है:—

"यह स्त्री भी 'आदर्श' थी। इसको अपने सम्मुख विविध स्थितियोंमें बैठाकर यह चित्र खींचा करता था। इसमें रूप भी था और फैशन भी। यह देव-प्रतिमासी दीख पड़ती थी। उसको ऐसा प्रतीत होने लगा कि वह इसे जी जानसे चाहता था। यह एक अत्यन्त आश्चर्यकारक बात है। किसी स्त्रीको चाहते ही पुरुष शुद्ध अन्तःकरणसे यह विश्वास करने लगता है कि उन दोनोंकी शेष जीवनयात्रा बिना स्त्रीके पूरी न हो सकेगी। पुरुष जानता है कि इससे पहले भी कई बार उसे ऐसा ही प्रतीत हुआ था और प्रत्येक बार इच्छा पूर्ण होते ही अन्तमें घृणा उत्पन्न हो गई थी। जीवन-यात्रामें अन्य साथी मिल जाने पर उसके प्रति क्षणिक, पाशविक आसक्तिके स्थानमें, आत्मिक और स्वाभाविक स्नेह तथा अनुरागकी कहीं अधिक आवश्यकता है। मोहबन्धनमें फँस जानेपर, प्रत्येक व्यक्तिको यह अवश्य निर्णय कर लेना चाहिए कि वास्तवमें वह पार्थिव इन्द्रियासक्ति मात्र ही है अथवा गम्भीर आत्मिक प्रेम।

"हाँ, तो यह चित्रकार समझता था कि मैं प्रेम करता हूँ। इस स्त्रीसे इसने प्रेम करनेकी शतशः प्रतिज्ञायें भी कीं और इसपर यह आसक्त भी था।

"यह स्त्री वास्तवमें सुन्दरी थी। इसमें ईश्वरदत्त सभ्य-समाजोचित तथा पैरिस निवासियोंपर प्रभाव डालनेवाली वाचालता भी खूब थी। यह चिड़ियोंकी भाँति चहकती और बालकोंकी भाँति सदा बात किया करती थी। बेवकूफ़ीकी बात भी इस ढंगसे कहती कि वह भी विनोदमयी प्रतीत होती थी। भाव-निदर्शन-विधि इस स्त्रीकी ऐसी सुन्दर थी कि किसी भी चित्रकारकी दृष्टि इसकी ओर आकर्षित हुए विना नहीं रह सकती थी।

"हाथ उठाते, झुकते, गाड़ीमें बैठते और हाथ मिलाते समय त्रुटिहीन तथा समयानुकूल भाव-निदर्शन करनेमें यह पूरी अभ्यस्त थी।

"तीन महीने तक जीनको यह ध्यान भी न हुआ कि वास्तवमें अन्य आदर्शोंकी भाँति यह भी एक है।

"ग्रीष्मऋतुमें इसके निवासके लिए उसने एंड्रेसीमें एक मकान भी किरायेपर ले लिया।

" एक दिन सन्ध्या समय मेरे मित्रके मनमें सन्देह उत्पन्न हुआ, उस समय मैं भी वहाँ उपस्थित था।

" उस दिन सुहावनी सन्ध्या थी। हमने सोचा कि आओ ज़रा नदीके किनारे ही टहल लें। कम्पित जल-प्रवाहपर चन्द्र किरणें पड़नेके कारण मन्द-गामिनी नदीके विशाल वक्षःस्थलपर क्षुद्र तरंगमालायें सुवर्णमयी आभा-सी दमक रही थीं।

" हम नदीके किनारे धीरे धीरे टहल रहे थे। हमारे चित्त भी इस स्वप्नसमान सुखकारी सन्ध्यासमय उत्पन्न होनेवाले किसी अज्ञात हर्षके कारण फूल रहे थे। इस समय कोई अद्भुत कार्य करने अथवा किसी अज्ञात एवं मृदुल व्यक्तिसे प्रेम करनेकी हमारे चित्तमें वेगवती कामनायें उठ रही थीं। हर्षातिरेक, प्रबल आकांक्षा आदि अद्भुत भावोंके कारण, हमारे शरीरमें रोमांच हो रहा था। हम चुपचाप थे, सुन्दर रात्रि थी, चन्द्र-ज्योत्स्नाकी शान्त एवं सजीव शीतलता चारों ओर ओतप्रोत हो रही थी और हमारे शरीरोंमें प्रवेशकर रोम रोममें व्याप्त होती हुईसी दीखती थी। आत्मा तकको शान्ति पहुँचा रही थी और अपनी दिव्य गन्ध एवं प्रसन्नताका लेपन कर रही थी।

" सहसा जोज़फाइन (इस स्त्रीका यही नाम है) चिल्ला उठी—अरे तुमने उस कूदती हुई मछलीको भी देखा?

"विना उस ओर देखे और विना विचारे ही उसने उत्तर दिया—हाँ प्यारी, देखा।

"यह क्रोधित हो गई और बोली—नहीं, तुमने नहीं देखा; उस ओर तो तुम्हारी पीठ थी।

"इसपर उसने मुस्करा कर कहा—ठीक बात तो यही है। ऐसा सुहावना समय है कि मैं किसी बातकी ओर ध्यान ही नहीं दे रहा हूँ।

"यह चुप हो रही, परन्तु एक ही मिनटके पश्चात् इसका चित्त फिर कुछ कहनेके लिए आतुर हो उठा और इसने पूछा—क्या तुम पैरिस कल जाओगे?

"उसने उत्तर दिया—मैं नहीं कह सकता।

"इसको फिर बुरा लगा।

"क्या तुमको विना बात चीत किये, चुपचाप टहलना अच्छा लगता है? पुरुषोंको तो बात करना अच्छा लगता है, पर निबुर्द्धियोंकी बात ही दूसरी है।

"उसने जब इसका भी कोई उत्तर न दिया तो यह अपने स्त्री-स्वभावसे तुरन्त ताड़ गई कि वह अब क्रोधित होने ही वाला है, अतएव इसने एक साधारण गीतका गाना प्रारम्भ कर दिया। पिछले दो वर्षोंसे हमारे मन तथा कान दोनों ही इसके कारण जर्जरित हो गये थे।

"गीत यह था—'लखत वह नभमंडलकी ओर।'

"उसने अस्फुट स्वरसे कहा—कृपाकर चुप रहो।

"इसने क्रोधित हो उत्तर दिया—तुम मुझसे चुप रहनेको क्यों कहते हो?

"उसने कहा—क्योंकि तुम प्राकृतिक दृश्य देखनेमें बाधा डाल रही हो।'

"इसके अनन्तर घृणोत्पादक और मूर्खताके दृश्यका अभिनय होने लगा। खरी-खोटी बातों, भर्त्सना और अनुचित लाञ्छनाओंके पश्चात् आँसुओंकी झड़ी लग गई। कोई बात कहनेसे शेष न रही। फिर ये दोनों घरको लौट पड़े। गालियोंके तूफानसे मूकजिह्व तथा प्राकृतिक दृश्योंकी सुन्दरतासे मोहित हो सत्त्वहीन होनेके कारण वह इस स्त्रीकी बातें विना उत्तर दिये सुनता रहा।

"इसके तीन महीने पश्चात् उसने हमारे जीवनको जकड़नेवाली मैत्री-रूप इन अजेय एवं अदृश्य शृंखलाओंसे छुटकारा पानेका घोर प्रयत्न किया। इस स्त्रीने भी अपना प्रभाव उसपर बनाये रक्खा और इतनी ज्यादतियाँ कीं कि बेचारेको जीवन भाररूप प्रतीत होने लगा। ये दोनों आपसमें अब सदा झगड़ते और एक दूसरेको गाली देने लगे थे। कभी कभी तो दोनोंमें मार पीट तक हो जाती थी।

"अब यह इस स्त्रीसे अपना पिंड छुड़ानेके लिए प्रत्येक प्रकारका यत्न करने लगा। इसने अपने चित्र बेंच डाले और मित्रोंसे रुपया उधार लिया। इस प्रकार २० हज़ार फ्रैंक एकत्रित किया। इस समय इसकी बहुत

प्रसिद्धि नहीं हुई थी। एक दिन प्रातःकाल इन रुपयों तथा अन्तिम बिदाईके पत्रको इस स्त्रीके लिए छोड़कर इसने घरसे निकलकर चल दिया—और आकर मेरा आश्रय लिया।

"इसी दिन तीसरे पहर लगभग तीन बजे मेरे मकानकी घंटी बजी। मैंने जाकर दर्वाज़ा खोला ही था कि एक स्त्री मेरे ऊपर झपटी और मुझको धक्का दे, मकानके भीतर आ मेरी चित्रशालामें जा बैठी। वह यही स्त्री थी। इसको आता देख वह खड़ा हो गया।

"अतीव सुन्दर चेष्टासे नोटोंसे भरा हुआ लिफाफा उसके पैरोंकी ओर फेंककर इसने शीघ्रतासे कहा—यह लो अपना रुपया, मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है।

"उस समय यह निरी पीली हो रही थी, इसकी देह भी थरथर काँप रही थी और यह कोई गड़बड़ करनेपर उतारू दीखती थी। वह भी मुझे क्रोध और नैराश्यके कारण पीतवर्ण और अपराध करनेपर उतारू दिखाई दे रहा था।

"उसने पूछा—तुम्हारी क्या इच्छा है?

"इसने उत्तर दिया।—मुझको साधारण स्त्रियों जैसा बर्त्तावा अच्छा नहीं लगता। तुमने प्रार्थना की थी कि मैं तुमको अंगीकार कर लूँ। मैंने तुमसे इसका कुछ भी बदला नहीं चाहा। अब तुम मुझको अपने पास रक्खो।

"उसने अपने पैरोंको जमीनपर पटका।

"रखना नहीं चाहते! यह कुछ बहुत बड़ी बात है! यदि तुम्हारा यह विचार है कि———मैंने अब समरकी बाँह पकड़ ली थी।

"मैंने कहा—जीन, चुप रहो। मैं इसको निबटाये देता हूँ।"

"मैं इसकी ओर बढ़ा और धीरे धीरे एक एक बात समझानी प्रारम्भ की। ऐसे अवसरोंपर जो कुछ कहना चाहिए वह सब मैंने कह डाला। कोई दलील बाकी न रक्खी।

"यह हठीली स्त्री भावहीन हो, आँखें मिलाये, मेरी सब बातें ध्यानपूर्वक सुनती रही।

" अन्तमें जब कहने योग्य कोई और बात शेष न रही, तो मैंने यह देखकर कि अब फिर कोई नये दृश्यका अभिनय हुआ चाहता है, एक अन्तिम उपाय सोच इस प्रकार कहा—देखिए, यह आपसे अब तक प्रेम करते हैं; परन्तु इनके कुटुम्बी अन्य किसीके साथ इनका विवाह करना चाहते हैं। आप जानती ही हैं कि—

" वह चौंक पड़ी और चिल्लाकर बोली—आह! आह! अब मेरी समझमें आया। फिर उसने उसकी ओर घुमकर कहा—तुम—तुम, विवाह करोगे ?

"उसने निश्चयात्मक रूपसे कहा—हाँ।

" इसने एक कदम आगे बढ़ाकर कहा—यदि तुमने विवाह किया तो मैं आत्महत्या कर डालूँगी! सुनते हो ?

" कन्धे उचकाकर उसने कहा—अच्छा, तो आत्महत्या कर डालो।

"घोर आवेशके कारण कण्ठ अवरुद्ध हो जानेसे यह अचकचाकर बोली—तुम क्या कहते हो ? तुम क्या कहते हो ? तुम क्या कहते हो ? फिरसे तो कहना !

"उसने दोहराकर कहा—अच्छा, यदि तुम चाहती हो तो मर क्यों नहीं जातीं ?

"तमतमाये हुए मुखसे इसने उत्तर दिया।— मुझे न उकसाओ! मैं खिड़कीसे नीचे कूद पड़ूँगी !

"वह हँसने लगा और खिड़कीकी ओर जा, उसे खोल, किसीके पीछे कूदनेकी इच्छा रखनेवाले व्यक्तिके समान चेष्टा बना कर कहने लगा—आओ, इधरसे कूदो। तुम्हारे पश्चात् मैं......

इस स्त्रीने एक सेकंड तक उसकी ओर भयावह नेत्रोंसे घूरकर देखा और फिर टट्टी फाँदते समय जिस प्रकार घोड़े दौड़ लगाते हैं, उसी प्रकार मेरे और उसके पाससे झपटकर वह निकल गई और चौखट फाँद कर गायब हो गई।

"मेरी दृष्टिके सामने, इस देह-पिंडके पृथ्वीपर गिरनेके लिए निकल जानेके पश्चात् उस खुली खिड़कीका मेरे मनपर ऐसा प्रभाव पड़ा कि मैं

उसे कभी न भूल सकूँगा। एक क्षणमें वह मुझे आकाशवत् वृहदाकार और पसारेके समान निस्सार प्रतीत होने लगी।

"मैं सहसा पीछेकी ओर हट गया। उस ओर देखनेको मेरा हियाव न होता था, मानो मुझे स्वयं अपने गिरनेका भय लग रहा हो।

"जीन घबड़ाया हुआ चुपचाप खड़ा था।

"लोग इस बेचारीको उठाकर ऊपर ले आये। इसकी दोनों टाँगें कुचल गई थीं। अब यह सदाके लिए चलनेके अयोग्य हो गई थी।

"कुछ तो लज्जावश, और कुछ इसके उपकारसे द्रवीभूत हो जीनने इसके साथ विवाह करना निश्चय कर लिया। और मित्र, अब तुम इन दोनोंको सामने देख ही रहे हो।"

अन्धकार बढ़ता जा रहा था। युवतीको ठंड लग रही थी और वह घर जाना चाहती थी। नौकरने पहियेदार कुर्सी गाँवकी ओर घुमा दी। चित्रकार भी अपनी पत्नीके साथ ही लौट पड़ा। एक घंटे तक यहाँ रहनेपर भी दोनोंने एक दूसरेसे एक शब्द भी न कहा।

नये वर्षकी भेंट।

घरमें अकेले ही ब्यालूकर नौकरको अपने मकान जानेकी आज्ञा दे जैक-डि-रैण्डल, मेजपर कुछ पत्र लिखनेके लिए बैठ गये।

प्रत्येक वर्षकी समाप्तिपर वह इसी प्रकारसे लिखा और सोचा करते थे। बीते हुए वर्षके प्रथम दिनसे लेकर अन्तिम दिवस पर्यन्तकी अपनी समस्त जीवन-घटनाओं, गई बीती मुर्दा बातोंकी समालोचना करनेकी उनकी टेव थी। और इस कृत्यमें उनको जिन जिन मित्रोंकी याद आती, उन सबको वह प्रथम जनवरीके दिन नवीन वर्षकी शुभाकांक्षाके रूपमें कुछ न कुछ अवश्य लिखते थे।

हाँ, तो उन्होंने बैठकर एक दराज़ खोली और उसमेंसे एक स्त्रीका फोटोग्राफ निकाला और उसको पहले तो कुछ क्षणतक देखा, फिर चूमकर उसको एक ओर रख एक नोट-पेपरपर यह लिखा—

"मेरी प्यारी आइरेन, मैंने तुम्हारे लिए एक स्मृतिचिह्न नौकरनीके पतेसे भेजा था, वह तुमको इस समय तक अवश्य ही मिल गया होगा। आज, सन्ध्या समय, मैंने अपनेको कमरेमें इसलिए बन्द किया है कि तुम यह बात जान लो कि.........।" यहाँपर लेखनी रुक गई और जैक खड़े होकर कमरेमें टहलने लगे।

गत १० मासोंसे उनकी एक प्रेयसी थी। यह अन्य स्त्रियोंके समान न थी कि जिनसे इस नाटकरूप जगतमें बहुधा घूमते फिरते, क्षणिक, अनुचित सम्बन्ध हो जाता है; वरन् यह रमणी ऐसी थी कि जिसको इन्होंने अपने प्रेमसे वशीभूत किया था। यह युवावस्था पार कर चुके थे, परन्तु पूर्ण पुरुषत्व प्राप्त कर लेने पर भी अन्य पुरुषोंकी अपेक्षा अधिक युवा मालूम पड़ते थे और जीवनप्रश्नको गम्भीर दृष्टि और व्यवहारात्मक तथा कार्मिक भावसे देखते थे।

अतएव वह जिस प्रकारसे प्रत्येक वर्ष अपनी मैत्रियोंके जमा खर्चका चिट्ठा तैयार करते कि कितनी मैत्रियोंका अन्त हुआ और कितनी नवीन स्थापित हुईं और उनके जीवनसे किन किन पुरुषोंका सम्बन्ध रहा तथा कौन कौन घटनायें घटित हुईं, उसी प्रकार उन्होंने अपने भावोंका भी चिट्ठा बनाना प्रारम्भ किया।

हिसाब लगाते समय जिस प्रकार दूकानदार सावधान होकर बैठते और कार्य्य करते हैं; ठीक उसी प्रकार प्राथमिक प्रेमका उद्वेग कुछ शान्त हो जानेपर उन्होंने उक्त रमणीके प्रति अपने हृदयकी तत्सामयिक तथा भविष्यकी दशाको यथावत् जाननेका प्रयत्न किया। ऐसा करनेपर उन्हें मालूम हुआ कि दीर्घकालिक घनिष्ठता एवं अन्य..............के कारण कोमलता, दयार्द्रता उपकार एवं वात्सल्य आदिके सम्मेलनसे उनके हृदयमें इस स्त्रीके प्रति गाढ़ प्रेम उत्पन्न हो गया है।

इतनेमें घंटीके शब्दसे वह चौंक पड़े। प्रथम तो वह दर्वाजा खोलनेमें हिचकिचाये, परन्तु फिर उनके मनमें यह विचार आया कि नये वर्षकी रात्रिमें अपरिचितको भी द्वार खटखटानेपर अवश्य अन्दर बुलाना चाहिए, चाहे वह कोई भी हो।

यह विचार आते ही उन्होंने एक मोमबत्ती उठाई और पासके कमरेमें होकर ज्यों ही चटखनी खोल, चाबी घुमा, दर्वाज़ा खोला, तो क्या देखते हैं कि उनकी प्रेयसी भीतिके सहारे खड़ी हुई है और उसका समस्त वर्ण मृतकके समान पीला हो रहा है। वह अचकचाकर बोले—"तुम्हारा यह क्या हाल है?"

रमणीने कहा—"क्या तुम अकेले हो?"

"हाँ।"

"क्या नौकर भी नहीं है?"

"न।"

"तुमको अभी कहीं बाहर तो नहीं जाना है?"

"नहीं।"

मकानमें घुसते समय रमणीके भावसे सूचित होता था कि वह इससे भली भाँति परिचित है। ड्राइंग रूम (गोल कमरे) में पहुँचते ही रमणी एक खूब गुदगुदे कोंचपर बैठ, मुखको हाथोंसे ढाँप फूट फूट कर रोने लगी।

रैण्डल नवागन्तुकाके चरणोंके पास घुटनोंके बल बैठ गये और उसके नेत्रोंको देखनेकी इच्छासे, उसके हाथोंको मुखसे हटा चिल्लाकर कहने लगे "आइरेन, आइरेन, क्या बात है? मुझे सब हाल बताओ, मैं विनती करता हूँ।"

रमणीने रोते रोते अस्फुट स्वरसे कहा—"इस प्रकारसे मैं अब और अधिक काल तक नहीं रह सकती।"

"इस प्रकार नहीं रह सकती—इसका क्या अर्थ है?"

"हाँ, मैं फिर कहती हूँ कि मैं अब और अधिक काल तक इस प्रकार नहीं रह सकती। मैंने अब तक बहुत सहन किया है। उन्होंने आज तीसरे पहर मुझे पीटा है।"

"किसने? तुम्हारे स्वामीने?"

"हाँ, मेरे स्वामीने।"

"ओफ़!"

यह सुनकर उनको आश्चर्य्य हुआ, क्योंकि आजतक उनको इसका ध्यान ही नहीं हुआ था कि इस रमणीके पति इतना पशुवत् व्यवहार कर सकते हैं। वह तो अन्य सांसारिक भद्रपुरुषोंकी भाँति थे। क्लब जाना, घोड़ोंसे प्रेम करना तथा थियेटर देखना उनका काम था। तलवार चलानेमें भी वह खूब अभ्यस्त थे। शिष्ट आचरणके कारण सर्वत्र ही उनकी प्रसिद्धि, चर्चा तथा प्रशंसा होती थी। उनकी बुद्धि अतीव निम्न श्रेणीकी थी। शिक्षा तथा वास्तविक संस्कृतिके अभावके कारण वह सभ्य पुरुषोंकी भाँति विचार नहीं कर सकते थे। प्राचीन आचारोंको वह बड़ी श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे।

एक सभ्यताभिमानी एवं धनी पुरुषको अपनी गृहिणीसे जिस प्रकार प्रेम करना चाहिए, उसी प्रकार यह महाशय भी अपनी भार्य्यापर अनुरक्त प्रतीत होते थे। गृहिणीकी इच्छापूर्त्तिकी, उसके स्वास्थ्य तथा वेशभूषाकी उनको सदैव चिन्ता रहती; परन्तु इनके अतिरिक्त अन्य बातोंमें पत्नीको पूर्णतया स्वतन्त्रता थी।

आइरेनसे मित्रता होनेके कारण रैण्डलको भी उसके पतिमहोदयसे प्रेमपूर्वक हाथ मिलानेका अधिकार प्राप्त था; क्योंकि ऐसा कौन शिष्टाचारी

पति होगा जो अपनी स्त्रीके मित्रसे इस प्रकार न मिले? जब रैण्डल, इस भाँति कुछ काल तक मित्र रहनेके पश्चात्, प्रेमी बन गये, तो उनका पति महाशयसे और भी घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया और यह ठीक ही था।

जैकको स्वप्नमें भी यह गुमान न हुआ कि गृहकलह इस प्रकार तूफान-की भाँति उठ खड़ा होगा। आज अकस्मात् ही ऐसी बात सुनकर वह भौंचक्केसे रह गये। उन्होंने पूछा—मुझे यह तो बताओ कि यह सब कैसे हुआ।

इसपर रमणीने विवाहके प्रथम दिनसे लेकर अपनी सब लम्बी राम-कहानी कह डाली कि किस प्रकार उन दोनोंमें सर्व प्रथम तुच्छ बातपर मतभेद हो गया और फिर दोनोंकी विरुद्ध प्रकृति होनेके कारण, किस प्रकार और और बातोंमें मतभेद होनेपर, दिनपर दिन वह कैसे बढ़ता गया।

इसके पश्चात् झगड़े होने लगे, और दोनों दिखावेके लिए नहीं, प्रत्युत वास्तवमें, एक दूसरेसे पृथक् हो गये। तदुपरान्त पति महाशय इनपर ज्यादती करने लगे और इनके साथ उनका व्यवहार भी औद्धत्यपूर्ण एवं सन्देहजनक होने लगा। अब तो यह दशा थी कि वह जैकसे ईर्षा तथा घृणा करते थे और आज ही झगड़ा होनेपर उन्होंने पत्नीको पीट डाला था।

अन्तमें रमणीने यह कहकर अपना निर्णय भी प्रकट कर दिया कि मैं अब उनके पास लौटकर न जाऊँगी। चाहे तुम मेरे साथ कैसा ही बर्त्ताव करो।

जैक अब उनके सामने बैठे थे, दोनोंके घुटने मिले हुए थे। उन्होंने रमणीके हाथ थाम कर कहा—प्यारी, तुम एक बड़ी भूल कर रही हो, इसका परिशोध भी न होगा। यदि तुम अपने पतिको छोड़ना ही चाहती हो तो ऐसा प्रयत्न करो कि वह ही कुछ अनर्थ करें, जिससे संसारकी दृष्टिमें तुम्हारी स्थिति तो बनी रहे।

बेचैनीसे उनकी ओर देखते हुए रमणीने कहा—तो तुम मुझको क्या परामर्श देते हो?

"घर जाओ और जब तक प्रतिष्ठासहित, युद्धमें तुम्हारा त्याग या सम्बन्ध-विच्छेद न हो जाय, तबतक जैसे होसके वहाँ रहकर निर्वाह करो।"

"क्या तुम्हारे इस उपदेशमें भीरुता नहीं है?"

" नहीं, यही ठीक है, चतुराई भी इसीमें है । देखो, तुम उच्चश्रेणीकी स्त्री हो । तुमको अपनी कीर्त्तिकी रक्षा करनी चाहिए । मित्रों तथा सम्बन्धियोंसे बिगाड़ करना भी अच्छा न होगा । क्या ज़रासे चित्तके वहमके पीछे इन सबसे हाथ धोनेका निश्चय कर लिया है ?"

रमणी खड़ी हो गई और चिल्लाकर कहने लगी—" नहीं, अब मैं और अधिक सहन नहीं कर सकती । अब तो सब कुछ समाप्त हो गया । सब बातोंका अन्त हो गया । "

इसके पश्चात् अपने दोनों हाथोंको प्रेमीके कन्धेपर रखकर उनके मुखकी ओर दृष्टिपात करते हुए रमणीने फिर कहा—" क्या तुम मुझसे प्रेम करते हो ?"

" हाँ ।"

" सत्य कहो कि वास्तवमें प्रेम करते हो ? "

" हाँ ।"

" तो मेरी सुध क्यों नहीं लेते ? "

उन्होंने चिल्लाकर कहा—" तुम्हारी सुध ! यहाँपर ! अपने मकानमें रख कर ! कहीं तुम पागल तो नहीं हो गई हो ? इसका अर्थ तो यह है कि मैं सदाके लिए तुमको त्याग दूँ और वह भी ऐसा कि फिर भविष्यमें मिलनेकी आशा ही न रहे । इस समय तुम पगली हो रही हो । "

रमणीने गम्भीरतापूर्वक धीरे धीरे उत्तर दिया, मानों वह अपने प्रत्येक शब्दको तौल रही है—" जैक, सुनो । वह भविष्यमें मुझे तुम्हारे पास आनेको मना करते हैं, इस लिए मैं अब तुम्हारे घर छिपकर आनेका नाटक न खेलूँगी । या तो मुझसे हाथ धोओ या अपने आश्रित रक्खो । "

" प्यारी, आइरेन, यदि यही बात है तो विवाहोच्छेद क्यों नहीं करा डालतीं । ऐसा करनेपर मैं तुमसे विवाह कर लूँगा । "

" हाँ, ठीक है, तुम मेरे साथ विवाह करोगे; परन्तु बहुत शीघ्रता करनेपर भी उसमें कमसे कम दो वर्ष लगेंगे । तुम्हारा प्रेम तो सन्तोषमय है ।"

" देखो, तुमने यह भी सोचा है कि यहाँ रखनेपर कल प्रातःकाल ही वह तुमको लेने आ जावेंगे । वह तुम्हारे स्वामी हैं, अतएव उनको ऐसा करनेका अधिकार भी है और कानून भी उनका सहायक है ।"

"जैक, मैंने तुमसे यह नहीं कहा कि मुझे अपने घरमें रख लो, मुझे तुम जहाँ चाहे ले चलो। मैंने तो यह समझा था कि मुझपर तुम्हारा अनुराग यथेष्ट होनेके कारण यह सब कुछ सम्भव है। परन्तु मैंने गलती की। खैर! मेरा अन्तिम प्रणाम लो।"

यह कहकर रमणी इतनी फुर्तीसे द्वारकी ओर चली कि कमरेके बाहर पहुँचकर वह कहीं उसको फिर पकड़ सके।

"आइरेन, सुनो।"

स्त्रीने छुटाना चाहा; क्योंकि वह उनकी बात सुनना न चाहती थी। आँखोंमें आँसू भर कर रमणीने अस्फुट स्वरसे कहा—"मुझे छोड़ दो। मुझे छोड़ दो! मुझे जाने दो।" रैण्डलने बलपूर्वक उन्हें बैठाया और पुनः उनके चरणोंपर घुटनेके बल बैठकर भाँति भाँतिके उपदेशों तथा दलीलों-द्वारा उनके विचारोंकी भ्रान्ति तथा भयंकरता दिखलाई। समझानेमें भी कोई कोर कसर न की। यहाँतक कि अपने अनुरागका भी जहाँतक हो सका, उपयोग किया।

परन्तु वह चुपचाप बर्फकी भाँति ठंडी ही रहीं। तब उन्होंने बड़ी अधीनतासे अपने उपदेशोंको सुनने तथा उनके अनुसार कार्य करनेकी याचना की।

उनके सब कुछ कह चुकनेपर रमणीने केवल यही कहा—"अब भी तुम मुझे जाने दोगे या नहीं? अपने हाथ तो हटाओ कि मैं भी यहाँसे जा सकूँ।"

"देखो, आइरेन।"

"मुझे जाने क्यों नहीं देते?"

"आइरेन, क्या तुम अपना विचार नहीं बदलोगी?"

"मुझे जाने क्यों नहीं देते?"

"मुझे केवल इतना बता दो कि तुम्हारा यह पागलपनका विचार कि जिसके कारण तुमको अवश्य पछताना पड़ेगा, नहीं बदलेगा?"

"हाँ; अब तो मुझे जाने दो।"

"अच्छा, तो ठहरो। तुम जानती ही हो कि यह तुम्हारा ही घर है। कल प्रातःकाल हम यहाँसे चल देंगे।"

उनके प्रयत्न करनेपर भी अब वह न रुकीं और खड़े होकर उन्होंने कठोर स्वरसे कहा—" नहीं, अब समय बीत गया। मैं न तो बलिदान चाहती हूँ और न भक्ति।"

" ठहरो, जो बात चाहिए वही मैंने की है—और मैंने वही बात कही है जो मुझे कहनी चाहिए थी। अब तुम्हारी कोई जिम्मेदारी मेरे ऊपर नहीं रही। मेरे आत्मामें इस समय शान्ति है। मुझको अब, जो कुछ करनेकी आज्ञा होगी, मैं करूँगा।"

वह बैठ गई और बहुत देरतक उनकी ओर देखनेके पश्चात् शान्त स्वरसे बोली—" अच्छा तो समझाओ।"

" क्या समझाऊँ ? क्या बात तुम्हारी समझमें न आई ?"

"जिन जिन बातोंको सोचकर तुमने अपना विचार बदला, वे सब बातें मुझसे कहो। इसके उपरान्त मैं सोचूँगी कि मुझे क्या करना योग्य है।"

"परन्तु मैंने तो किसी बातको नहीं सोचा। मैंने तो तुमको गलती करनेके कारण केवल चेतावनी दी थी। परन्तु तुम अपनी जिद छोड़ना नहीं चाहतीं। अतएव मैं भी तुम्हारी इस मूर्खतामें सम्मिलित होना केवल चाहता ही नहीं, प्रत्युत इस बातपर जोर भी देता हूँ।

" परन्तु मन नैसर्गिकतया इतनी जल्दी नहीं बदला जा सकता।"

" प्यारी, ध्यान देकर सुनो। यहाँपर बलिदान अथवा भक्तिका प्रश्न ही नहीं उठता। जिस दिन मुझे इसका भान हुआ कि मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, तो मेरे मनमें वे ही विचार उठे जो प्रत्येक प्रेमीके हृदयमें ऐसे समय उठते हैं। जो पुरुष स्त्रीसे प्रेम करता है, उसको वशमें करनेको प्रयत्न करता है और अन्तमें उसको प्राप्त करता है, उसके और स्त्रीके मध्य एक अत्यन्त पवित्र बन्धनकी स्थापना हो जाती है। परन्तु यह बात तुम जैसी स्त्रियोंसे सम्बन्ध करनेपर ही लागू होती है। सहजहीमें प्रभावान्वित होने वालीं, अन्य चंचल चित्तवालीं नारियोंपर नहीं।

" विवाहका सामाजिक अथवा कानूनी दृष्टिसे मूल्य बहुत होनेपर भी वर्तमानकालिक वैवाहिक व्यवस्था देखते हुए मेरी समझमें तो नैतिक दृष्टिसे, वह, नहींके बराबर है।

"अतएव इस धर्मबन्धनसे कसी होनेपर भी पतिसे मोह अथवा अथवा प्रेम न कर सकनेवाली, स्वाधीन-हृदया स्त्री यदि मनचीते पुरुषके मिलनेपर उसको आत्मसमर्पण कर दे और बन्धनरहित होनेकी दशामें पुरुष भी इसे स्वीकार कर ले, तो मेरी सम्मतिमें उनका पारस्परिक स्वतन्त्र मिलन और प्रतिज्ञायें मेयर (म्यूनीसिपल-चेयरमैन) के सम्मुख कहे हुए वैवाहिक "हाँ"से कहीं अधिक महत्त्वकी हैं।

"मेरा यह विश्वास है कि दो भद्र व्यक्तियोंका यह पारस्परिक मिलन, अभिषिक्त, धार्मिक संस्कारोंसे कहीं अधिक चिरस्थायी, लाभदायक तथा वास्तविक होगा।

"ऐसी स्त्री जानबूझकर जोखिममें पड़ती है। आँखें खोलकर अपना हृदय, शरीर, आत्मा, मान, प्रतिष्ठा, जीवन सब कुछ ही दे डालती है। यह जाननेपर भी कि यातनायें सहनी पड़ेंगी, पद पद पर भय, कष्ट तथा आपदाओंकी आशंका है, वह इस गैरकानूनी कार्यको वीरतापूर्वक कर डालती है। पतिके हाथों मृत्यु तथा समाजद्वारा बहिष्कार दोनोंहीको सहन करनेके लिए वह उतारू रहती है। इन्हीं हेतुओंके कारण पतिके प्रति विश्वासघात करनेपर भी वह सम्मानके योग्य है। अतएव प्रेमीके लिए यह आवश्यक है कि ऐसी स्त्रीको अपनानेसे पहले ही सब बातोंको खूब सोच विचार ले, फिर चाहे कुछ भी हो उसे न छोड़े। मुझको अब कुछ अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं है। समझदार पुरुषकी भाँति मैंने प्रथम ही तुमको चेतावनी देना अपना धर्म समझा; परन्तु अन्तमें मैं भी तो पुरुष ही हूँ— और वह भी तुम्हारा प्रेमी। तुम आज्ञा दो और मैं पालन करूँगा।"

प्रफुल्लवदन हो रमणीने चुम्बनद्वारा उनका मुख बन्द कर, धीमे स्वरसे कहा—"प्रियतम, यह सब मिथ्या बात थी। कोई झगड़ा नहीं हुआ। मेरे पतिको कोई सन्देह नहीं है। मैं तो यह देखना और जानना चाहती थी कि तुम क्या करते हो। तुम्हारे दिये हुए कंठेके अतिरिक्त, मैं नये वर्षकी भेंटमें तुम्हारे हृदयकी भेंटके रूपमें एक और भेंट चाहती थी। तुमने मुझे वह भी दे दिया, एतदर्थ धन्यवाद! धन्यवाद! और तुम्हारे इस प्रकार मुझको सुखी करनेके कारण परमपिता परमात्माको भी कोटिशः धन्यवाद!"

घातक।

कौंसिलने निवेदन किया कि अपराधी पागल है। इसके अतिरिक्त उस रहस्यमय अपराधका कोई और कारण ही समझमें नहीं आता था।

एक दिन प्रातःकाल नगरके बाहर दो मृतकोंकी देह मैदानमें पड़ी मिली थी। एक पुरुषकी थी, दूसरी स्त्रीकी। दोनों ही धनी एवं प्रसिद्ध थे। अवस्था भी दोनोंकी अधेड़ थी। गतवर्ष ही उनका विवाह हुआ था। विवाहसे प्रथम तीन वर्षसे स्त्री विधवा थी।

उनकी किसीसे शत्रुता भी न थी और न किसीने उनको लूटा ही था। ऐसा मालूम पड़ता था कि किसीने लोहेकी छड़से उनको मारनेके पश्चात् उठाकर नदीमें फेंक दिया है।

बहुत अनुसन्धान करनेपर भी कुछ पता न चला। माँझीसे भी बहुत कुछ पूँछ ताँछ हुई; परन्तु उसे कुछ मालूम ही न था। अधिकारीवर्ग विवश हो मामलेसे हाथ धो बैठे थे कि जॉर्ज लुई नामक बढ़ईने–जो पास हीके गाँवमें रहा करता था–स्वयं आकर अपराध स्वीकार कर लिया।

प्रश्न बहुतसे किये गये; परन्तु उसने केवल यही कहा—पुरुषको मैं दो वर्षसे जानता था और स्त्रीको छह माससे। मेरा कार्य्य अच्छा होनेके कारण वे मुझसे अपनी पुरानी वस्तुओंकी मरम्मत कराया करते थे।

परन्तु उससे जब यह पूछा गया कि फिर तुमने उन्हें क्यों मार डाला, तो उसने धृष्टतापूर्वक यही कहा कि मेरी इच्छा उनकी जान लेनेकी थी, इस लिए मैंने उन्हें मार डाला। इससे अधिक और कोई बात उसने नहीं बताई।

यह पुरुष वास्तवमें वर्णसंकर था। माता पिताने इसको बचपनहीमें एक धायको सौंपकर त्याग दिया था। इसका नाम था—जॉर्ज लुई। परन्तु बड़े होनेपर प्रखर बुद्धि तथा अन्य समवयस्कोंसे अधिक शिष्टता एवं भद्राचरण होनेके कारण उसका नाम व्यंगमें 'नागरिक' पड़ गया था और

सब उसको इसी नामसे पुकारते थे। जीविका उपार्जनके हेतु उसने बढ़ईका काम आरम्भ कर दिया। तीव्रबुद्धि तो था ही, बस थोड़े ही समयमें उसने आशातीत उन्नति कर ली। उसके विचार साम्यवादी एवं क्रान्तिकारी पुरुषोंमेंसे थे। ऐसे ही उग्र विचारोंके उपन्यास पढ़ना भी उसे बहुत भाता था। समय मिलनेपर वह गाँवके किसान एवं अन्य कारबारी पुरुषोंको एकत्र करके कभी कभी जोरदार वक्तृता भी झाड़ देता था।

*　　　*　　　*

हाँ, तो इसके विषयमें कौंसिलने यह निवेदन किया कि इसका मस्तिष्क विकृत हो गया है। अन्यथा यह अपने ही ग्राहकोंको—धनी एवं कृपालु ग्राहकोंको—जिनसे कि दो वर्षमें ही इसने ३००० फ्रैंक कमा लिये (जैसा कि इसके बहीखातेसे पता चलता है) क्यों मार डालता? इसका कारण 'उन्माद' के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। इस वर्णहीन व्यक्तिका यही ध्येय रहा है कि इन 'दो नागरिकों' को मारकर सब 'नागरिकों' से बदला लूँ। इस प्रकार कौंसिलने उस अभागेके सर्वप्रसिद्ध नाम 'नागरिक' का बड़ी चतुराइसे उपयोग कर डाला। उन्होंने फिर उच्चस्वरसे यह कहना प्रारम्भ किया—"क्या यह दुःखद स्थिति इस मातृपितृ-हीन अभागेके मस्तिष्कको विकृत करनेके लिए 'पर्य्याप्त' नहीं थी? यह तो उग्र प्रजातान्त्रिक है। मेरा आशय यह है कि यह व्यक्ति उन राजनैतिक विचारवाले पुरुषोमेंसे है कि जिनको सरकारने प्रथम देशनिकाला करनेपर भी फिर प्रसन्न होकर वापिस बुला लिया है। ऐसे विचारवाले पुरुष अग्निकाण्डको अपना उद्देश्य तथा हत्याको साधारण घटना मात्र मानते हैं।

"इन भयावह उद्देश्योंपर अब सभाओंमें भी हर्षध्वनि की जाती है ओर यही इस व्यक्तिके नाशका कारण हुए। इसने प्रजातान्त्रिकोंकी (जिसमें स्त्रियाँ भी सम्मिलित हो गई हैं) श्री गाम्बे तथा श्री ग्रेवीकी रुधिर बहानेके लिए उत्तेजित करनेवालीं वक्तृतायें सुनीं। फल यह हुआ कि इसका दुर्बल मस्तिष्क बिगड़ गया और इसको भी रुधिरकी–नागरिकोंके रुधिरकी–पिपासा लग उठी। भद्रपुरुषो, आप इस अभागेको क्यों अपराधी बताते हैं? सारा दोष तो साम्यवादका है।

चारोंओर सम्मति-सूचक हर्षध्वनि सुनाई पड़ने लगी। प्रत्येक व्यक्तिको अब अभियुक्तके कौंसिलकी विजय प्रत्यक्ष दिखाई देने लगी। सरकारी कौंसिलने इसका कुछ भी विरोध नहीं किया। जज (विचारक) महोदयने अभियुक्तसे नियमानुसार प्रश्न किया—कैदी, तुम अपने बचावमें कुछ कहना चाहते हो?

वह खड़ा हो गया। उसका कद नाटा, मुख सुन्दर, बाल चिकने, नेत्र स्वच्छ, विशाल और भूरे रंगके थे। इस कान्तिमय युवककी आवाज उच्च, सुरीली, निष्कपट और गम्भीर थी। उसके प्रथम शब्दसे ही लोगोंकी सम्मति बदल गई।

उच्च एवं विस्मयकारक स्वरसे उसने इस प्रकार कहना प्रारम्भ किया कि उसका प्रत्येक शब्द उस बड़े कमरेके परले सिरेपर भी भलीभाँति सुनाई देता था।

"श्रीमान्, पागलखाने जानेकी मेरी इच्छा नहीं है; वहाँ जानेसे तो मौत कहीं अच्छी है। मैं आपके सम्मुख पूरी बात ही कहे डालता हूँ।

"इन दोनों व्यक्तियोंका घातक मैं हूँ। इसका हेतु यह है कि वे मेरे माता-पिता थे।

"अब आप मेरी कथा सुनिए और विचार कीजिए।

"एक स्त्रीने एक शिशुको उत्पन्न होते ही किसी स्थानमें गुप्त रूपसे धायके पास रख दिया। उस निरपराध, किन्तु अधम, अभागे, लज्जाजन्य वर्णसंकरको—जिसके भाग्यमें मृत्यु ही बदी थी—धात्री कहाँ ले गई और उसने उसे कैसे पाला; क्या इस बातके जाननेका उसके माता-पिताने कभी प्रयत्न किया? बालकको धायके पास छोड़, अन्य व्यक्तियोंकी भाँति मासिक वृत्ति भी न देकर, लापरवाहीसे भूखा मार देनेके यत्नको, क्या आप श्रेय समझते हैं?

"मेरी वास्तविक मातासे, यह धाय जिसने मेरा पालन पोषण किया, कहीं अधिक अच्छी, सच्चरित्रा, उदार-हृदया और मातृरूपा थी। उसीकी कृपाके कारण मैं इतना बड़ा हुआ हूँ। मेरा विचार तो यह है कि उसने अपना कर्त्तव्य पालन करके गलती की। न्याय तो यह था कि वे दोनों अधम

प्राणी—जिनको गाँवमें जूठनकी भाँति फेंक दिया गया था—भूखों ही मर जाते।

"ज्यों ज्यों मैं बड़ा होता गया, त्यों त्यों मेरे मनमें किसी लज्जास्पद कार्य्यका अपने जीवनसे सम्बन्ध होनेका भाव दृढ़ होता गया।

"एक दिन बालकोंने मुझसे ह———कहा। वे इस शब्दका तात्पर्य नहीं जानते थे। उनमेंसे एकने इस शब्दको अपने घरपर कहते हुए सुना था। मैं भी इसका आशय तो न समझ सका, परन्तु इसे सुनकर मेरे हृदयमें डंक लगनेके समान पीड़ा होने लगी।

"पाठशालामें मेरी गणना बहुत तीव्रबुद्धि बालकोंमें थी। श्रीमान्, मेरे माता पिता यदि मुझको इस प्रकार त्याग देनेका घोर पाप न करते, तो मैं अवश्य एक दिन भला आदमी—और बहुत सम्भव है कि एक प्रतिभाशाली व्यक्ति—हो जाता। यह मेरे ऊपर अत्याचार था। मैं बलि था और वे घातक, मैं बेवस था और वे निर्दय थे। उनका कर्तव्य यह था कि वे मुझसे प्रेम करते, परन्तु उन्होंने मुझे त्याग दिया।

"यह सत्य है कि वे मेरे जन्मदाता हैं; परन्तु क्या आप इस 'जीवन' को अनुग्रह समझते हैं? कमसे कम मैं तो इसे अपना दुर्भाग्य ही मानता हूँ। उन्होंने जब मुझको ऐसे कुत्सित भावसे त्याग दिया, तो मेरा कर्त्तव्य था कि मैं उनसे इसका बदला लूँ। मेरे साथ, उनका जैसा अमानुषिक, नृशंस एवं लांच्छनीय कृत्य हुआ है, वैसा या उससे अधिक किसी और प्राणीके साथ क्या होना सम्भव है?

"बेइज्जती होनेपर लोग प्रहार करते हैं, लुट जानेपर मालको बलपूर्वक वापिस करते हैं, धोखा खाने तथा पीड़ित किये जानेपर और थप्पड़ खाने या अपमानित होनेपर मार तक डालते हैं; परन्तु मुझे तो धोखा भी दिया गया, मैं लूटा भी गया और पीड़ित भी किया गया। मेरे नैतिक थप्पड़ भी लगे और मैं अपमानित भी हुआ—और उन पुरुषोंसे कहीं अधिक, जिनके आवेशमय कार्य्यको आप क्षमा कर देते हैं।

"अपने ऊपर किये हुए अत्याचारोंका परिशोध करनेके लिए मैंने उनकी हत्या की। यह मेरा नैसर्गिक अधिकार है। उन्होंने जान बूझकर

मेरे जीवनको दुःखमय कर डाला, अतएव मैंने उनके आमोदमय जीवनका अन्त कर दिया।

"आप कहेंगे कि तू मातृ-पितृ-हन्ता है। परन्तु क्या ऐसे व्यक्ति मेरे मातापिता कहलाने योग्य हैं, जिन्होंने मुझको केवल दुःसह रूप ही समझा, जो मुझसे सदा भय, लज्जा एवं घृणा ही करते रहे ? जिन्होंने मेरे जन्मसे अपने जीवनको कलङ्कित कर और मेरे जीवनको अपने अपमान तथा आपदाका मूल समझकर सशंक दृष्टिसे देखा ? उन्हें तो स्वार्थमय आमोद ही प्रिय था; शिशुकी उन्हें कब अभिलाषा थी ? यदि वह अनायास आ गया तो यह उसकी धृष्टता थी; अतएव उन्होंने अपने विचारसे उसका अन्त कर दिया। फिर मेरी वारी आई और मैंने भी उनके साथ वैसा ही किया।

"थोड़े दिन पूर्व मैं उनसे प्रेमतक करनेको उतारू था।

"मैंने अभी कहा है कि यह पुरुष—मेरे पिता—प्रथम बार मेरे पास दो वर्ष हुए तब आये थे। उस समय मुझे कुछ भी सन्देह न हुआ। मैंने उनके लिए दो वस्तुयें बनाईं। कुछ दिन बाद मुझे पता चला कि उन्होंने मेरा सब वृत्तान्त गुप्त रीतिसे पादरी साहबसे मालूम कर लिया है।

"फिर वे बहुधा मेरे पास आते और मुझे खूब काम तथा रुपया भी देते थे। अब वे धीरे धीरे मुझसे वार्त्तालाप भी करने लग गये। नतीजा यह हुआ कि मुझे उनसे प्रेमसा हो गया।

"इस वर्षारम्भमें उनकी स्त्री–मेरी माता–भी उनके साथ मेरी दूकानपर आईं। अन्दर आते समय मैंने देखा कि उनका शरीर काँप रहा है, मानो वे वात-पीड़ित हैं। आते ही उन्होंने बैठनेके लिए स्थान तथा पीनेके लिए जलकी इच्छा प्रकट की। उन्होंने बातचीत बिल्कुल नहीं की, बल्कि उचाट दृष्टिसे मेरे कार्य्यको देखती रहीं। जब कभी उनके पति कुछ बात पूछते तो वह यों ही 'हाँ' या 'न' कह देती थीं। उनके उठ जानेपर मैं तो यह समझा कि उनका मस्तिष्क ठीक न था।

"एक मासके पश्चात् ये दोनों फिर आये। आज वह शान्त एवं स्वस्थ थीं। दोनों बहुत देर तक आपसमें वार्त्तालाप करते रहे और जाते समय

मुझे बहुत बड़ा आर्डर भी दे गये। वह मुझसे इसके पश्चात् तीन बार और मिलीं, परन्तु मुझे कुछ सन्देह नहीं हुआ। एक दिन उन्होंने मेरे जीवनसम्बन्धी—बचपन, माता पिता इत्यादिकी—बातें छेड़ दीं। इसपर मैंने कहा—श्रीमती, मेरे माता पिता अवश्य ही महानीच होंगे, नहीं तो वे मुझे इस प्रकार क्यों त्याग देते? यह सुनते ही वह हृदय थाम कर मूर्च्छित हो गिर पड़ीं। तुरन्त ही मेरे मस्तिष्कमें यह विचार दौड़ गया कि यही मेरी माता हैं। परन्तु यह बात मैंने उनको प्रकट न होने दी, मैं तो उनका निरीक्षण करना चाहता था।

"अब मैंने जो इन लोगोंके सम्बन्धमें खोज प्रारम्भ की, तो पता चला कि गत जुलाईमें इनका विवाह हुआ है। इससे प्रथम तीन वर्ष तक मेरी माता विधवा रहीं। लोग तो यह भी चर्चा करते थे कि प्रथम स्वामीके जीवन-कालमें भी इन दोनोंमें परस्पर गुप्त प्रेम था; परन्तु इसका कुछ प्रमाण नहीं मिलता था। प्रमाण तो मैं था—और मुझे पहले तो इन्होंने छिपा ही दिया-फिर नाश करनेका प्रयत्न किया।

"मैं भी प्रतीक्षा करता रहा। एक दिन सदाकी भाँति सन्ध्या समय वह अपने पतिके साथ मेरे यहाँ आईं। मैंने देखा कि उनका जी भरा हुआ था, परन्तु इसका कारण मुझे मालूम नहीं हुआ। बिदा होते समय उन्होंने मुझसे कहा कि तुम ईमानदार और परिश्रमी दीखते हो, इस कारण मेरी हार्दिक इच्छा है कि तुम्हारी उन्नति हो। एक न एक दिन तुम अवश्य अपना विवाह करोगे, अतएव मनोवाञ्छित स्त्री ढूँढ़नेमें मैं तुम्हारी सहायता करना चाहती हूँ। मेरा प्रथम विवाह एक अनिच्छित पुरुषसे कर दिया गया था, इस कारण मुझे पूर्ण अनुभव है कि ऐसे विवाह कितने दुःखदायी होते हैं। परन्तु अब मैं धनी, सन्तानहीन तथा स्वतन्त्र हूँ। लो, यह तुम्हारे विवाहका दहेज है। यह कहकर उन्होंने एक बड़ासा मोहर लगा हुआ लिफाफा मेरी ओर बढ़ाया।

"मैंने उनकी ओर स्वच्छ नेत्रोंसे देखकर कहा—क्या आप मेरी माँ हैं?

"वह कुछ कदम पीछे हट गईं और उन्होंने अपना मुख हाथोंसे इस प्रकार ढक लिया कि दिखाई न पड़े। पुरुषने—जो मेरे पिता थे—उनको अपने हाथोंसे सँभाल कर मुझसे कहा—तुम विक्षिप्त तो नहीं हो गये हो?

" मैंने कहा—बिल्कुल नहीं ! मैं खूब जानता हूँ कि आप दोनों मेरे माता-पिता हैं। मैं इस तरह धोखा नहीं खा सकता। मेरे सम्मुख आप इस बातको स्वीकार कर लीजिए। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि यह बात सदा गुप्त रक्खूँगा और आप लोगोंसे कोई द्वेष नहीं करूँगा। मैं तो सदा इसी प्रकार बढ़ई रहूँगा। सिसकती हुई स्त्रीको सँभाले हुए वह दर्वाजेकी ओर बढ़े। तुरन्त ही मैंने दर्वाजेमें ताला डाल दिया और चाबी जेबमें डालकर कहा—जरा इनकी ओर देखकर ही कह दीजिए कि मेरी बात मिथ्या है

" सुनते ही पुरुष क्रोधित हो उठे, उनका मुख विवर्ण हो गया। जिस निन्दनीय कार्यको आजतक बड़े प्रयत्नसे छिपाया था, अब उसीका भंडा फोड़ होते देखकर वह भयभीत हो गये। अपनी कीर्त्ति, मर्यादा, प्रतिष्ठा आदिका एकदम नाश होते देख उन्होंने एकदम चिल्लाकर कहा—तुम धूर्त हो, इस भाँति धन लेनेकी चेष्टा करते हुए क्या तुमको लज्जा नहीं आती ? तुमसे निम्नश्रेणीके पुरुषोंको उदार सहायता करनेका क्या इसी-प्रकारसे धन्यवाद दिया जाता है ?

" मेरी माताने घबराकर कहा—किसी प्रकार यहाँसे चलो—बाहर निकल चलो। परन्तु द्वारमें ताला पड़ा देख पुरुषने डाँटकर मुझसे कहा—यदि द्वार इसी समय न खोलोगे, तो मैं जबर्दस्ती डरा धमकाकर रुपये हथियाने तथा आक्रमण करनेके अपराधमें तुमको अवश्य जेल भिजवाऊँगा।

"मैं अबतक शान्त था। मैंने द्वार खोल दिया, वे अन्धकारमें अदृश्य हो गये।

" उनके जाते ही मुझे सहसा बोध हुआ कि मैं अनाथ एवं निस्सहाय हूँ और अब मेरा निस्तार भी नहीं है। रह रहकर मेरे हृदयमें शोकमिश्रित क्रोध, घृणा तथा ईर्षाकी लहरें उठने लगीं। पदताड़ित प्रेम, अपमान, क्षुद्रता, नीचता तथा अन्यायके कारण मेरे समस्त शरीरमें एक क्रान्तिसी उत्पन्न हो गई। स्टेशन पहुँचनेके लिए उनकी राह सीन नदीके किनारे हो कर जाती थी, अतएव उनको रास्तेहीमें घेरनेके अभिप्रायसे मैं तुरन्त ही उस ओर दौड़ पड़ा। थोड़ी ही देरमें मैंने उनको पकड़ लिया। इस समय चारों ओर घोर अन्धकार छाया हुआ था। मैं धीरे धीरे कदम उठाकर

उनका पीछा करने लगा कि कहीं वे मेरे आनेकी आहट न पालें। मेरी माता इस समय भी रो रही थीं। मेरे पिता कह रहे थे कि यह सब तुम्हारी ही करनीका फल है। तुमने उससे मिलनेकी इच्छा ही क्यों की? यह आचरण हमारी मर्यादा एवं प्रतिष्ठाके प्रतिकूल था। पास न जाकर दूरहीसे हम उसकी सहायता कर सकते थे। ऐसे आने जानेसे अब क्या लाभ? हम उसे पहचान तो सकते ही नहीं।

"इसी समय मैं यह कहते हुए उनकी ओर दौड़ा कि—देखो, तुम ही मेरे माता पिता हो। एक बार तो तुम मुझे त्याग चुके हो, अब क्या फिर मुझे ठुकराओगे?

"श्रीमान्, मेरे मुखसे ये शब्द निकलते ही उन्होंने मुझे पीटना प्रारम्भ कर दिया। यह बात मैं श्रीमान्के सम्मुख अपनी मान-मर्यादा तथा प्रतिष्ठाकी शपथ खाकर कहता हूँ कि उन्होंने मुझे मारा। इसके पश्चात् मैंने उनकी गर्दन धर दबाई और उन्होंने जेबसे पिस्तौल निकाल लिया।

"मेरे मस्तिष्कमें रक्त दौड़ गया। मुझे कुछ सुध न रही कि मैं क्या कर रहा हूँ। मेरी जेबमें कम्पास तो था ही, बस मैंने उसे निकाल कर उनको जहाँतक मुझसे हो सका खूब पीटा।

"अब तो वह भी चिल्लाने लगीं। खून हो गया! दौड़ो! और उन्होंने भी मेरी डाढ़ी नोच डाली। मैंने उनको भी मार डाला। उस समय मैंने क्या क्या किया, यह बात अब इस समय बताना मेरी शक्तिसे बाहर है।

"फिर उन दोनोंको पृथ्वीपर पड़े देख, बिना विचारे मैंने सीन नदीमें उठाकर फेंक दिया।

"बस, यही मेरी कथा है। अब आप मुझे सजा दे दीजिए।"

कैदी यह कह कर बैठ गया। यह बातें मालूम होनेपर मुकदमा सैशन-सुपुर्द कर दिया गया। हाल हीमें उसकी पेशी होगी। यदि कहीं हम भी ज्यूरी चुन लिये गये तो बताइए, हमको इस मातृ-पितृ-हन्ताके सम्बन्धमें क्या राय देनी चाहिए?

यात्रा-प्रसङ्ग।

जब गाड़ी 'केन्स' से चली, तब बिल्कुल भरी हुई थी। हम सब एक दूसरेसे खूब परिचित तो थे ही, बस बातें छिड़ गईं। 'टारा सकन' आते ही किसीने कहा—" यही स्थान है, जहाँ खून बहुधा हुआ करते हैं। " फिर क्या था, उसी अद्भुत खूनीकी बातें होने लगीं जिसने कि पिछले दो वर्षोंमें कई पुरुषोंका वध कर डाला था और आजतक नहीं पकड़ा गया था। प्रत्येक यात्री पृथक् पृथक् अनुमान लड़ाता और रायज़नी कर रहा था। विचारी स्त्रियाँ अँधेरी रात्रिमें खिड़कीकी ओर देख देख कर काँप रहीं थीं और भयभीत हो रही थीं कि कहीं वह दुष्ट सहसा खिड़कीपर ही न आ जाय! यात्री आप बीती रोमहर्षण घटनायें सुना रहे थे— किसीने डाकगाड़ीमें पागलका मुकाबिला किया था, तो किसीने सन्देहजनक पुरुषोंके साथ अकेले ही घंटों बिताये थे।

प्रायः सभी यात्रियोंने बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ झेलकर अद्भुत धैर्य्य तथा साहससे किसी न किसी धूर्त्तको या तो डराया धमकाया था, अथवा मार भगाया था। एक डाक्टर महाशयने—जो शीतकाल लगते ही प्रत्येक वर्ष दक्षिणी फ्रान्समें जाकर निवास किया करते थे—अपनी बारी आनेपर एक घटना यों सुनाई—

" मित्रो, मुझे स्वयं तो कभी आप लोगोंकी भाँति अपने साहस और धैर्य्यकी परीक्षा करनेका अवसर नहीं मिला; परन्तु मैं एक स्त्रीको अवश्य जानता था, जिसको रेल-यात्रामें एक ऐसी विचक्षण घटना घटी कि उसका सादृश्य इस संसारमें मिलना दुर्लभ नहीं तो कठिन अवश्य है। वह मेरी चिकित्सामें थी; किन्तु अब उसका प्राणान्त हो गया है।

" वह रशियन महिला थी। उसका पूरा नाम 'काउण्टेस मेरी वारनो' था। वह बहुत उच्च घरानेकी थी और अत्यन्त रूपवती थी। रूसी स्त्रियाँ कैसी सुन्दरी होती हैं, इस बातके कहनेकी आवश्यकता नहीं है। उनके पतले नथुने, कोमल मुख, अवर्णनीय छायायुक्त, किञ्चित नीले भूरे, सुन्दर

नेत्र, तथा कमनीय छवि कैसी भली मालूम पड़ती है। उनमें नटखटी और मोहनी शक्ति, अहंकार और नम्रता, उग्रता और कोमलताका कुछ ऐसा विचित्र मिश्रण होता है कि प्रत्येक फ्रांसीसीका हृदय बरबस उनकी ओर खिंचा चला जाता है।

"फुफ्फुस रोगके कारण चिकित्सक कई वर्षोंसे उनको दक्षिणी फ्रांस जानेका परामर्श दे रहे थे; परन्तु वह हठात् सेंट पीटर्सवर्ग छोड़ना ही न चाहती थीं। लाचार होकर चिकित्सकने उनके पति महोदयसे कह दिया कि यदि यह यहाँ और अधिक रहीं, तो इनके जीनेकी आशा करना व्यर्थ है। यह सुनते ही उन्होंने उन्हें तुरन्त 'मैनटोन' भेज दिया।

"वह अपनी गाड़ीमें अकेली ही थीं। नौकर दूसरे डब्बेमें बैठा था। दौड़ती हुई रेलगाड़ीकी खिड़कीसे झाँककर, वह अपने देशको—वेगसे पिछड़ते हुए ग्रामसमूहको—कुछ व्यथितसी होकर देखती चली जाती थीं।

"उनके साथ न तो कोई सन्तान ही थी और न कोई बन्धु अथवा सहायक। एकाकी एवं परित्यक्ता होनेके कारण उनके हृदयमें तीव्र वेदनायें उठ रही थीं। पति-प्रेम भी शुष्क हुआसा प्रतीत होता था, नहीं तो भृत्यके बीमार पड़नेपर जिसप्रकार स्वामी उसको अस्पतालमें भेज देते हैं, उसी-प्रकार उनके पति महोदय साथ न जाकर उन्हें पृथ्वीके दूसरे छोरपर क्यों इस प्रकार अकेला भेज देते ?

"प्रत्येक स्टेशनपर उनका नौकर आइवन् आकर पूछ जाता था कि किसी वस्तुकी आवश्यकता तो नहीं है। यह पुराना सेवक–अन्धभक्त सेवक—उनकी प्रत्येक आज्ञा पालन करनेको सदा जी जानसे तैयार रहता था।

"रात्रि हो गई, रेलगाड़ी पूरे वेगसे दौड़ी जारही थी। बेचैनीके कारण उनकी निद्रा भंग हो गई थी। स्वामीने चलते समय जो रुपये उनको दिये थे, उन्हें गिननेका विचार उनके मनमें सहसा उत्पन्न हुआ। बटुएका मुख खोलकर उन्होंने उलट दिया, और बहुतसी चमचमाती हुई स्वर्णमुद्रायें उनके घुटनोंपर फैलकर गिर पड़ीं।"

"सहसा ठंडी हवाका झोंका उनके मुखपर आकर लगा। आश्चर्य्यान्वित होकर उन्होंने जो मस्तक ऊपरको उठाया तो क्या देखती कि

दर्वाजा खुला हुआ है। काउंटैस यह देखकर घबरा गईं और उन्होंने तुरंत ही घुटनोंपर फैली हुई स्वर्ण-मुद्राओंपर दुशाला डाल लिया। कुछ सैकिंड ही बीते होंगे कि एक पुरुष गाड़ीपर चढ़ता हुआ दिखाई दिया। इसका सिर नंगा था, हाथ घायल और दम फूल रहा था। गाड़ीमें आते ही उसने दर्वाजा बन्द कर दिया और एक किनारे जाकर बैठ गया। अपने दीप्त नेत्रोंसे पहले तो वह कुछ देर तक काउंटैसकी ओर देखता रहा और फिर अपनी कलाईपर बहती हुई रक्तधाराको रोकनेके लिए वह रूमाल बाँधने लगा।

"काउंटैस डरके मारे अधमरीसी हो रहीं थीं। इस पुरुषने मुझे स्वर्ण-मुद्रा गिनते हुए देख लिया है, अतएव यह मुझको मार सब माल लूटकर ले जायगा, उनके मनमें यह विचार बारम्बार उठने लगा।

"नवागन्तुकका दम अब भी फूल रहा था और वह काउंटैसकी ओर इस समय भी इस प्रकारसे घूर रहा था मानों उनपर टूट पड़ना चाहता हो। सहसा उसने कहा—श्रीमती, आप कुछ भय न करें।

"उन्होंने कुछ उत्तर नहीं दिया, उनमें तो मुख खोलनेकी भी शक्ति न थी। यह देखकर कि काउंटैस अब भी काँप रही हैं, उसने फिर दो बारा कहा—श्रीमती, मैं डाकू नहीं हूँ।

"इसपर भी वह बोलीं तो कुछ नहीं, वरन् उन्होंने अपने घुटने भयके कारण और ऊपरको सिकोड़ लिए। ऐसा करते ही छमछमाती हुई स्वर्ण-मुद्रायें नालीके पानीकी भाँति बहुतायतसे नीचे गिर पड़ीं।

"वारिधाराकी भाँति मुद्राओंको गिरते हुए देखकर नवागन्तुक ससम्भ्रम हो उठ खड़ा हुआ और उनको उठानेके लिए झुका।

"उसके ऐसा करते ही काउंटैस भयसे इतनी विह्वल हो गईं कि अपनी समस्त स्वर्णमुद्राओंको छोड़ गाड़ीसे कूदनेके लिए दर्वाजेकी ओर दौड़ पड़ीं। परन्तु नवागन्तुक उनके विचारको क्षणभरमें ही ताड़ गया। उसने तत्क्षण ही दौड़कर उनकी कौलिया भर ली और विवश कर फिर ला बैठाया और कहा—श्रीमती, मैं फिर कहता हूँ कि मैं डाकू नहीं हूँ और अभी एक क्षणमें ये सब स्वर्णमुद्रायें बटोरकर आपको दिये देता हूँ।

"देखिए, यदि आपने सीमा पार करनेमें मेरी सहायता नहीं की, तो मैं कहींका भी न रहूँगा, मेरा सर्वनाश हुआ समझिए। इससे अधिक मैं

आपसे नहीं कह सकता। एक घंटेमें रूसका अन्तिम स्टेशन आ जायगा और एक सवा घंटेमें हम लोग इस साम्राज्यकी सीमाके भी पार पहुँच जायँगे। यदि आपने मेरी रक्षा नहीं की, तो निस्सन्देह मेरा नाश हो जायगा। मैं शपथ खाकर आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैंने आजतक न तो किसीकी हत्या ही की है और न किसीका माल ही मारा है और न कभी कोई ऐसा कार्य्य किया है जिससे मेरी कीर्त्तिमें बट्टा लगे।

" इतना कह कर वह घुटनोंके बल बैठ गया और बिखरी हुई स्वर्ण-मुद्राओंको बटोरकर बटुवेमें भरने लगा। बटुआ भर जानेपर उसने बिना कुछ कहे हुए काउंटैसको दे दिया और आप चुपचाप गाड़ीके एक कोनेमें जा बैठा।

" वे दोनों इस समय स्थिर थे। काउंटैसका मारे भयके इस समय भी बुरा हाल हो रहा था; परन्तु धीरे धीरे वह भी स्वस्थ हो गई। नवागन्तुक भी बिल्कुल चुपचाप बैठा हुआ था। उसके नेत्र निश्चल थे तथा मुख विवर्ण हो रहा था, मानो उसकी मृत्यु हो गई हो। काउंटैस कभी कभी अपनी दृष्टि उसकी ओर डालकर तुरन्त ही दूसरी ओर फेर लेती थीं। नवागन्तुकका वयस ३० वर्षका होगा और देखनेमें वह अत्यन्त सुन्दर तथा सभ्य मालूम पड़ता था।

" उस अँधेरी रात्रिमें रेलगाड़ी भी कभी मन्द और कभी द्रुतगतिसे—चीखती चिल्लाती हुई दौड़ी चली जा रही थी। सहसा उसकी गति मन्द पड़ गई और वह सीटी देकर खड़ी हो गई।

" आइवन खिड़कीके पास आज्ञा लेने आया।

" काउंटैसने काँपते हुए प्रथम तो अपनी दृष्टि एक क्षणके लिए नवागन्तुककी ओर डाली और फिर सहसा नौकरकी ओर देखकर बोलीं—आइवन, तुम पतिके पास लौट जाओ, मुझे अब तुम्हारी आवश्यकता नहीं है।

" बेचारा सुनते ही अवाक्सा रह गया। फिर अपनी बड़ी बड़ी आँखें फाड़कर अचकचाकर बोला—परन्तु...श्रीमती,...

" वह बोलीं—नहीं, मैंने अपने पूर्व विचार बदल दिये हैं, तुम्हारे चलनेकी अब कोई आवश्यकता नहीं है। अब तुम रूसहीमें रहो। लो, यह अपने लौटनेका खर्चा। अपनी टोपी और लबादा मुझे दे दो।"

" वृद्ध नौकरका गला भर आया। उसने तुरन्त ही अपनी टोपी और चोगा उतार कर दे दिये। अपने स्वामियोंके शीघ्र परिवर्त्तनशील स्वभाव और अद्भुत मानसिक विकारोंसे भली भाँति परिचित होनेके कारण उनके आदेशोंको विना चूँ किये हुए पालन करनेका उसको खूब अभ्यास था। उसकी आँखोंमें आँसू भर आये और वह लौट गया।

" रेलगाड़ी जब फिर सीमाकी ओर दौड़ती हुई चल दी, तो काउंटेसने अपने साथीसे कहा कि महाशय, इन वस्तुओंको आप पहन लीजिए। अबसे आप मेरे भृत्य आइवन हो गये। परन्तु मेरी भी एक शर्त है और वह यह कि आप मुझसे कदापि न बोलें और न मुझे किसी कार्यके लिए धन्यवाद दें।

" विना कुछ कहे नवागन्तुकने मस्तक नत कर लिया और काउंटैसकी प्रतिज्ञा स्वीकार की।

" थोड़ी ही देरमें रेलगाड़ी फिर एक स्थानपर रुकी और सरकारी वर्दी धारण किये हुए कुछ अफसर आगये। काउंटैसने अपने पत्र उनको दिखाकर, कौनेमें बैठे हुए नवागन्तुककी ओर इंगित कर कहा—वह मेरा नौकर आइवन है। उसके राहदारीके पर्वाने ये हैं।

" गाड़ी फिर चल दी। रात्रि भर वे एक दूसरेकी ओर देखते रहे, परन्तु कोई बात नहीं हुई।

" जर्मनीके स्टेशनपर प्रातःकाल गाड़ी पहुँचते ही अपरिचित उतर पड़ा और सीधा खिड़कीके पास आकर कहने लगा—श्रीमतीजी, मेरे प्रतिज्ञा तोड़नेके अपराधको क्षमा करना। मेरे ही कारण आप नौकरका कष्ट भोग रही हैं, अतएव मेरा यह धर्म है कि उसकी भाँति आपकी सेवा करूँ। क्या आपको किसी वस्तुकी आवश्यकता है ?

" उन्होंने स्थिर एवं उदासीन भावसे कहा—आप मेरे लिए एक नौकरनी ढूँढ़ दीजिए।

" यह सुनकर वह वहाँसे चल दिया और फिर दिखाई न दिया।

" मैनटोन पहुँचकर वह गाड़ीसे उतरकर जब होटलमें पहुँचीं, तो क्या देखती हैं कि वही अपरिचित व्यक्ति बहुत दूरीसे उनकी ओर अब भी दृष्टिपात कर रहा है।"

इतना कहकर डाक्टर महोदय एक क्षणके लिए चुप हो गये और फिर उन्होंने यों कहना प्रारम्भ किया—

" एक दिन मैं अपने आफ़िसमें बैठा हुआ रोगियोंको देख रहा था कि एक लम्बा युवा पुरुष मेरे पास आया और कहने लगा—डाक्टर महोदय, मैं आपसे यह पूछने आया हूँ कि काउँटैस मेरी वारनोकी दशा अब कैसी है? वह तो मुझे नहीं जानतीं, पर उनके स्वामी मेरे मित्र हैं। मैंने कहा—उनका अन्तकाल आपहुँचा है, अब वह रूसको लौटकर न जास-केंगी। सुनते ही वह सिसकियाँ भरने लगा, फिर उठ खड़ा हुआ और मदोन्मत्तकी भाँति गिरता पड़ता वहाँसे चल दिया।

" उसी रात्रिको मैंने काउण्टैससे कहा कि एक अज्ञात पुरुष आज आपकी दशा पूछने मेरे पास आया था। सुनते ही वह कुछ विचलित सी हुई और फिर उन्होंने मुझे वह सब कथा—जो मैंने अभी आप लोगोंसे कही है—कह सुनाई और कहा—वह अपरिचित व्यक्ति अब मेरा पीछा किया करता है, बाहर निकलते ही मेरा उससे सदा साक्षात्कार होता है। मेरी ओर वह एक अद्भुत दृष्टिसे देखता है, परन्तु कभी कुछ नहीं कहता।

" इतना कहकर वह चुप हो गई और कुछ ठहरकर फिर बोलीं देखिए, मैं बाजी लगाकर कह सकती हूँ 'कि इस समय भी वह मेरी खिड़कीके नीचे ही खड़ा होगा। इतना कहकर वह अपनी आराम-कुर्सीसे उठीं और खिड़कीकी ओर जाकर उन्होंने पर्दा हटा दिया और इंगित कर मुझसे कहा कि देखिए। वास्तवमें वही पुरुष जो प्रातःकाल मेरे पास आया था, बैंचपर होटलकी ओर दृष्टि लगाये हुए इस समय भी बैठा हुआ था। हम दोनोंको देखते ही वह पहचान गया और वहाँसे विना गर्दन उठाये सीधा एक ओरको उठकर चल दिया।

" उस दिनके पश्चात् मैंने एक विषादमय एवं असाधारण दृश्य देखा। वह था—इन दो व्यक्तियोंका—अपरिचित् व्यक्तियोंका—मूक प्रेम।

"जान बचनेपर जिस प्रकारसे पशु बचानेवालेके प्रति मरणपर्यन्त प्रेम एवं भक्ति करता रहता है, उसी प्रकारसे यह अपरिचित भी काउण्टैसपर अनुरक्त था। यह तो वह भली भाँति जान ही गया था कि मुझे उसके गुप्त-प्रेमका पता लग गया है, अतएव वह अब मेरे पास आकर नित्यप्रति काउण्टैसका हाल पूछ जाता था। दिनपर दिन उनको क्षीण एवं पीत होते देखकर उसकी अविरल अश्रुधारा बह चलती थी।

" एक दिन काउण्टैसने मुझसे कहा कि यद्यपि मैंने उससे केवल एक बार ही वार्त्तालाप किया है, तथापि मुझे अब ऐसा प्रतीत होता है कि मैं उसे बीसियों बर्षोंसे जानती हूँ।

" जब कभी वह मिलते, तो काउण्टैस उसके अभिवादनका उत्तर सदा प्रेमपूरित मुस्कुराहटसे दिया करती थीं।

" काउन्टैस एक तो वैसे ही विदेशमें अकेली थीं, दूसरे उनको यह भी भलीभाँति विदित था कि मेरी भावी मृत्युका समय अब निकट ही है। इसपर भी उन्हें इस प्रकारके प्रेमसे—विशुद्ध भक्तिरंजित और भावुक प्रेमसे—अतीव प्रसन्नता होती थी। यह सब कुछ होनेपर भी काउन्टैसने अपनी मान, मर्यादा एवं प्रतिज्ञाके विरुद्ध न तो उसे कभी पुकारा ही और न बातचीत ही की और न कभी नाम ही पूछा। वह कहा करती थीं कि नहीं, ऐसा मैं कदापि न करूँगी, अन्यथा यह अद्भुत मैत्री नष्ट हो जायगी। हम दोनों अन्त तक अपरिचित ही रहेंगे।

" मुझको तो वह पुरुष भी कुछ कुछ डॉन क्विक्ज़ौट (Don Quixote) *सा ही प्रतीत होता था, क्योंकि उसने भी कभी उनके पास आनेका प्रयास तक नहीं किया। जान पड़ता है कि वह भी रेलमें की हुई अपनी क्षुद्र प्रतिज्ञाका—कभी बातचीत न करनेके वादेका—पालन करना चाहता था।

*इसका अनुवाद हिन्दीमें 'विचित्र वीर' के नामसे प्रकाशित हो गया है।

"क्षीण दशामें जब वह आराम-कुर्सीपर पड़ी पड़ी उकता जातीं, तो बहुधा उठकर थोड़ासा पर्दा हटाकर देखा करती थीं कि वह अपरिचित खिड़कीके नीचे अब भी बैंचपर बैठा है या नहीं। स्थिर भावसे सदा उसको बैंचपर बैठा देखकर उनके ओठोंपर मुस्कुराहट दौड़ जाती और वह फिर आराम-कुर्सीपर जा लेटती थीं।

"एक दिन लगभग १० बजनेके समय उनका देहान्त हो गया। होटलसे मेरे बाहर आते ही वह घबड़ाया हुआ मेरे पास आया। ऐसा भान होता था कि उसे भी मृत्युका समाचार मिल गया था।

"आते ही उसने कहा, मैं आपके सम्मुख केवल एक क्षणके लिए उनको देखना चाहता हूँ।

"मैं उसका हाथ पकड़ कर फिर मकानकी ओर चल दिया। मृतक-शय्याके पास पहुँचकर उसने मृत काउन्टैसका हाथ उठा कर सुदीर्घकाल तक प्रेमसे चुम्बन किया और फिर उन्मत्तकी भाँति वहाँसे भाग गया।"

यह कहकर डाक्टर फिर चुप हो गये और कुछ रुककर कहने लगे—

"मुझे तो यही सबसे अद्भुत और आश्चर्यकारक रेलवे-घटना मालूम होती है। निस्सन्देह पुरुष भी कभी कभी अद्भुत विचार-तरंगोंमें पड़ जाता है।"

एक स्त्रीने कुछ अस्फुट शब्दोंमें धीरे धीरे कहा—आप लोग जैसा समझते हैं, वैसे वे दोनों व्यक्ति उन्मत्त नहीं थे। वे दोनों—वे दोनों तो—

परन्तु वह अधिक न कह सकी; उसका गला भर आया था और वह रो रही थी। हम सब लोग उसे ढाढस दिलाने लग गये, अतएव हमको फिर यह ज्ञात न हुआ कि वह क्या कहा चाहती थी।

हमारे दोनों कुत्ते टमटमके पिछले भागमें बैठे हुए थे; परन्तु शिकारकी गन्ध पाकर वे भी बड़ी बेचैनीसे उचक उचक कर सूँ सूँ कर रहे थे।

वैरन महाशय विषादयुक्त दृष्टिसे नारमंडीके सुदूरस्थित प्राकृतिक दृश्योंको देख रहे थे। जहाँतक दृष्टि जाती थी, वृक्षों और सुन्दर झाड़ियोंसे घिरा हुआ हरा भरा विस्तृत मैदान ही दृष्टि-गोचर होता था। यह कहीं तो ऊँचा था और कहीं नीचा। स्थान स्थान पर सेवके खेतोंके चारों ओर दुहरी और कहीं कहीं तिहरी वृक्षोंकी पंक्तियाँ लगी हुई थीं। राजकीय प्राकृतिक उपवनोंकी भाँति इस स्थानकी असीम सुन्दरता देख मैं मुग्ध हो गया। इतनेमें वैरनने एकाएक उच्चस्वरसे कहा—यह भूमि मुझे अत्यन्त प्रिय है; क्योंकि यहाँ मेरा मूल स्थान है।

वैरन शुद्ध नॉरमन थे। उनकी देह लम्बी तथा बलिष्ठ थी। प्राचीन-कालमें उनके पुरुखाओंने ही विविध समुद्रोंके किनारे राज्योंकी स्थापना की थी। उनकी अवस्था ५० वर्षकी होगी। वह बूढ़े कोचवानसे १० वर्ष छोटे थे। परन्तु वह बहुत ही दुबला था। उसके शरीरमें हड्डी और चमड़ेके सिवाय कुछ न था। ऐसे ही मनुष्य सौ सौ वर्षतक जिंदा रहते हैं।

पथरीले रास्तों तथा मैदानोंको पार करके दो घंटेमें कहीं हमारी गाड़ी किसानके झोपड़े तक पहुँची। बरसोंसे बेमरम्मत होनेके कारण झोपड़ा जगह जगहसे टूट रहा था। रसोईघर भी काफी बड़ा था, पर उसमें धुआँ खूब भर रहा था। ताँबे तथा चीनीके बर्त्तन चूल्हेकी आँचके प्रकाशमें चमक रहे थे। कुर्सीपर एक बिल्ली पड़ी सो रही थी। मेजके नीचे एक कुत्ता लोट लगा रहा था। कहींपर दूध रक्खा हुआ था, तो कहींपर सेव पड़े थे। किसानोंके घरोंमें घुसते ही जिस प्रकारकी एक विशेप गन्ध आया करती है, वैसी ही यहाँ भी आरही थी। इस गन्धमें मिट्टी, दीवार, असवाब, नर तथा पशु आदि सभीका मिश्रण था।

मैं खेतोंको देखने चल दिया। खेत बहुत बड़े बड़े थे और उनमें छोटे छोटे सेवके वृक्ष फलोंसे लदे हुए खड़े थे। बहुतसे टूटे हुए फल जहाँ तहाँ वृक्षोंके नीचे हरी घासपर फैले हुए पड़े थे। दक्षिणी फ्रान्सकी नारंगियोंकी कलियोंकी भाँति यहाँपर भी सेव-पुष्पकी गन्धसे वायु-मंडल व्याप्त हो रहा था।

खेतोंके चारों ओर वीचि-वृक्षोंकी चौहरी पंक्तियाँ लगी हुई थीं । यह वृक्ष-श्रेणी इतनी ऊँची थी कि इस समय रात्रिके कारण ऐसा प्रतीत होता था मानों आकाशसे बातें कर रही है । वायुके कारण उनकी ऊँची ऊँची फुन-गियाँ वेगसे झुकी जा रही थीं । मानों वे एक विषादयुक्त असीम गीतिका गा रही हों ।

मैं घरको लौट पड़ा । आकर क्या देखता हूँ कि वैरन महाशय अग्निसे पैरोंको ताप दे रहे हैं और किसानसे देहातके समाचार भी सुन रहे हैं। समाचार क्या थे, यही ग्रामकी सीधी सादी बातें थीं कि अमुकका विवाह हो गया । अमुकके घर बालक उत्पन्न हुआ, अमुककी मृत्यु हो गई, नाजका भाव मद्दा हो गया, पशुओंकी दशा ऐसी है, कामधेनु गाय जूनमें एक बछिया ब्याई है, सेवकी फसल अबकी बार अच्छी नहीं हुई और आड़ू तो गाँवसे सदाके लिए बिदा हो रहे हैं।

इसके पश्चात् हमने भोजन किया । था तो वह देहाती और सादा, परन्तु इतना प्रचुर स्वादिष्ट और सुरस था कि हृदयको अतीव शान्ति मिली । यों तो जबसे मैं यहाँ आया था तभीसे वैरन महाशय तथा किसा-नमें मुझे एक विशेष प्रकारकी मित्रता दिखाई दे रही थी; परन्तु भोजन करते समय मेरा ध्यान इस ओर विशेषरूपसे आकर्षित हुआ ।

वायु-वेगके कारण वृक्षावली अब भी ठंडी उसासें भर रही थी । बाहर खपरैलोंमें बँधे हुए कुत्ते भीषण स्वरसे भौंक रहे थे । अँगीठीकी अग्नि-ज्वाला भी धीरे धीरे शान्त हो रही थी । नौकरनी तक घरको चली गई थी । बेचारा बूढ़ा किसान कबतक बैठा रहता । अन्तमें उसने भी यह कहकर वैरनसे बिदा माँगी कि सरकार, यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं भी आराम कर लूँ। मुझे देर तक जागनेका अभ्यास नहीं है। वैरनने बड़े तपाकसे अपना हाथ उसकी ओर बढ़ा कर कहा—‘ मित्र, तुम प्रसन्नतासे जाकर आराम करो।’ परन्तु इन शब्दोंको उन्होंने कुछ ऐसे प्रेमसे कहा कि किसानके वहाँसे बिदा होते ही मैंने उनसे कहा कि यह किसान तो तुम्हारा असीम भक्त मालूम पड़ता है !

प्यारे मित्र, इससे भी कहीं अधिक। यह एक नाटक है और वह भी दुःखान्त। परन्तु इतना सरल और विषादमय है कि इसीके कारण मुझे इससे असीम स्नेह हो गया है। वह कथा इस प्रकारसे है—

"यह तो तुमको मालूम ही है कि मेरे पिता एक रिसालेमें कर्नल थे। उस समय यह बुड्ढा किसान नवयुवक था और उनकी अर्दलीमें रहा करता था। पेंशन लेकर हमारे पिताने इस भूत-पूर्व सिपाहीको ही अपने यहाँ नौकर रख लिया। उस समय यह ४० वर्षका था और मैं ३० वर्षका।

"मेरी माके पास उस समय एक नवयुवती अत्यन्त रूपवती दासी रहा करती थी। सुकुमार देह, पतली कमर, सुन्दर केश-कलाप और रंगीली चाल, ये बातें तो पूर्वकालकी ही स्वामिभक्त दासियोंमें पाई जाती थीं, अब तो इनका ढूँढ़नेपर भी पता नहीं चलता। आजकलकी दासियाँ तो अपने समयसे पूर्व ही कुमार्गगामिनी हो जाती हैं। रेलगाड़ी बन जानेके कारण यौवनावस्था प्राप्त करते ही वे मंत्रमुग्धाकी भाँति पैरिसहीकी ओर खिंची चली आती हैं और वहाँके दूषित वायुके कारण थोड़े ही कालमें मलिन होकर अपना सर्वस्व खो देती हैं। पूर्वकालकी दासियों-कीसी सरलता उनमें कहाँ है?

"पूर्वकालीन अफ़सर जिस प्रकार सेनाके लिए रंगरूटोंको फँसाते थे, उसी प्रकार प्रत्येक राहगीर इनकी अनिच्छा होनेपर भी प्रलोभनद्वारा वशमें करके इन मूर्खाओंका सर्वनाश कर डालता है। यही कारण है कि दास्य-कार्यके लिए अब अत्यन्त नीच स्त्रियाँ ही उपलब्ध होती हैं; अर्थात् आलसी, निर्लज्ज, आचारभ्रष्ट और इतनी कुरूपा कि उनसे हास्य करनेको भी मन नहीं चाहता।

"परन्तु यह छोकरी तो अत्यन्त ही मनोमोहिनी थी। मैं भी अकेली मिल जानेपर यदा कदा उसका चुम्बन कर लेता था। परन्तु इससे अधिक मैंने कुछ नहीं किया, शपथ खाकर कह सकता हूँ। कारण यह है कि प्रथम तो वह ही शुद्धाचारिणी थी और फिर मुझको भी अपने घरानेकी कीर्तिका

सदा ध्यान बना रहता था। आजकलके लम्पट पुरुष तो इसका लेशमात्र भी विचार नहीं करते।

"कालकी गति तो देखो कि हमारा नौकर, भूतपूर्व सैनिक, यही बुड्ढा किसान जो अभी तुम्हारे सामने गया है, इस लड़कीके प्रेम-पाशमें बेढब फँस गया। हम लोगोंका ध्यान उसकी ओर सबसे प्रथम आकर्षण होनेका कारण यह था कि उसको न तो किसी बातकी सुध ही रहती और न वह कोई बात ध्यान देकर सुनता ही था।

"मेरे पिता उससे बार बार पूछा करते थे कि जीन, तुझे यह हो क्या गया है? क्या बीमार है? परन्तु वह सदा यही कहकर टाल देता कि सरकार मुझे कोई बीमारी नहीं है, आप कुछ चिन्ता न करें।

"धीरे धीरे उसकी देह भी सूखने लगी। जब हमको मेज़पर भोजन परोसते समय उसके हाथसे बहुधा गिलास और रकाबियाँ तक भी गिरने लगीं, तो हमारे पिताको विश्वास हो गया कि अवश्य ही इसको वातव्याधि हो गई है। अतएव उन्होंने एक डाक्टरको बुला भेजा। उन्होंने देखकर सौपुन्न रोग बताया। सुनते ही पिताजी तो सोचमें पड़ गये। अन्तमें उन्होंने इस स्वामिभक्त नौंकरको अस्पताल भेजना ही निश्चय किया।

"बेचारे नौकरको जब पिताजीका यह निश्चय मालूम हुआ तो उसने बचनेका कोई और उपाय न देखकर सब बात जी खोलकर कह दी। बोला—अन्नदाता!

'क्या बात है?'

'मुझे ओषधिकी बिल्कुल आवश्यकता नहीं है।'

'तो तुझे आरोग्य-लाभ कैसे होगा?'

'विवाहसे।'

सुनते ही पिताजी मुँह मोड़ उसकी ओर आश्चर्यान्वित दृष्टिसे देखकर बोले—'अरे, क्या बकवाद कर रहा है।'

'विवाह।'

'विवाह? धिक् मूर्ख, यह क्यों नहीं कहता कि प्रेममें फँस गया है?'

'सरकार, ठीक कहते हैं। बात तो यही है।'

" पिताजी यह सुनकर इतने ज़ोरसे खिल खिलाकर हँसे कि दूसरे कमरेमें बैठी हुई मेरी माने पुकारकर कहा कि आज तुमको कुछ हो तो नहीं गया जो इस प्रकार हँस रहे हो?

" उन्होंने कहा—केथरीन, यहाँ तो आओ।

" जब मेरी माता वहाँ आई तो पिताजीने—जिनके हँसते हँसते नेत्रोंमें आँसूतक भर आये थे—कहा कि इस मूर्ख नौकरको तो देखो। यह भी प्रेम-रोगी हो गया है।

" यह बात सुनकर माता नहीं हँसी, बल्कि उनपर इस बातका गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने सेवकसे पूछा—तुम किससे प्रेम करते हो?

" स्थिरभावसे उसने उत्तर दिया-लूसीसे।

" अत्यन्त गम्भीर भावसे मेरी माताने कहा—अच्छा, जहाँतक हमसे बनेगा हम तुम्हारा विवाहसंबंध करानेका यत्न करेंगे।

" उसी समय लूसी बुलाई गई। माताके पूछनेपर उसने कहा कि मैं जीनका प्रेम भली भाँति जानती हूँ। जीन स्वयं मुझसे कई बार प्रार्थना कर चुका है, परन्तु मैं उसे नहीं चाहती। न चाहनेका हेतु बताना उसने अस्वीकार किया।

" दो महीने तक निरन्तर मेरे माता पिता जीनसे विवाह करनेके लिए लूसीको ज़ोर देते रहे। यह स्वीकार कर लेनेपर भी कि वह किसी अन्य पुरुषसे प्रेम नहीं करती, उसने जीनसे विवाह न करनेका कोई उचित कारण नहीं बताया। अन्तमें पिताजीने बहुतसा धन देकर उसका यह हठ तोड़ा और नव-दम्पतीको, एक खेत भी—यही जहाँपर तुम इस समय बैठे हुए हो—जीवननिर्वाहके लिए प्रदान कर दिया।

"तीन वर्ष तक फिर वे दोनों मुझे नहीं मिले। इसके पश्चात् मैंने सुना कि लूसीका क्षयरोगसे प्राणान्त हो गया। परन्तु कुछ कालके आगे पीछे मेरे माता पिताका देहान्त हो जानेके कारण मैं और दो वर्ष तक जीनसे न मिल सका।

" अन्ततः अक्टूबर मासमें एक दिन मैंने अपनी जमीन्दारीके इस

भागमें आकर मृगया खेलनेका विचार किया। पिताजी बहुधा कहा करते थे कि इस भूखण्डमें शिकारकी बहुतायत है।

"बस, फिर क्या था, एक दिन वर्षाहीमें, मैं यहाँपर सन्ध्या समय आगया। पिताके इस पुराने सेवकके सिरके सब बाल ४५–४६ वर्षकी अवस्थाहीमें श्वेत होते देख मेरे हृदयपर गहरा आघात हुआ। अपने पास बिठाकर मैंने उसके साथ इसी मेजपर उस दिन भोजन किया। उस समय घोर वर्षा हो रही थी। छत, दीवार तथा खिड़कियोंपर वर्षा-विन्दुओंके आघातका शब्द यहाँपर बैठे होनेपर भी साफ़ सुनाई दे रहा था। खेतोंमें तो पानीकी बाढ़ सी आगई थी। आज जिस प्रकार कुत्ते खपरैलमें भौंक रहे हैं, मेरा कुत्ता भी उस रात्रिको इसी प्रकारसे भौंक रहा था।

"दासीके जानेके पश्चात् तुरन्त ही इस किसानने दबे स्वरमें यह कहा—सरकार!

"जीन, क्या बात है?"

"मैं कुछ निवेदन करना चाहता हूँ।"

"प्रसन्नतापूर्वक कहो, डरो मत।"

"आपको मेरी स्त्री लूसीकी तो याद है?"

"खूब, बहुत अच्छी तरह।"

"अच्छा, तो वह आपके लिए एक सन्देशा छोड़ गई है।"

"क्या सन्देशा है?"

"न......नहीं, सन्देशा नहीं।"

"किस बातका।"

"वह बात—वह बात—मेरी इच्छा तो यह थी कि आपसे न कहूँ—नहीं, नहीं, मुझे अवश्य कहनी चाहिए। बात यह है कि उसकी मृत्यु क्षयरोगसे नहीं हुई। संक्षेपमें उसकी मृत्युका कारण दुःख था। विवाहोपरान्त हमारे यहाँ आते ही वह दिनपर दिन सूखने लगी; थोड़े ही दिनोंके पश्चात् उसकी दशा ऐसी हो गई कि सरकार, यदि आप उसे देखते तो कदापि न पहचान सकते। विवाहसे पूर्व जो मेरी दशा थी, यहाँ आनेपर ठीक

वैसी ही दशा उसकी भी हो गई। परन्तु यह बिल्कुल विपरीत बात थी। तब मैंने डाक्टरको बुलाया। देखभालकर उन्होंने उसका यकृत् खराब बतलाया और कहा कि वह अभियाकृतीय रोगसे पीड़ित है। सरकार, मैं तो गँवार ठहरा, भला इन कठिन शब्दोंका अर्थ क्या समझ सकता हूँ। मैंने बहुत इलाज किया, घरमें बोतलोंका ढेर लग गया, ३०० फ्रैंक भी खर्च हो गये, परन्तु कुछ लाभ न हुआ। वह बहुधा मुझसे कहा करती कि प्यारे जीन, क्यों व्यर्थकी औषध दे रहे हो, मुझे लाभ न होगा। मुझे यह तो मालूम हो गया कि वह किसी गुप्त व्यथासे पीड़ित है और मैंने उसे एकबार रोते हुए भी देखा, परन्तु मेरी समझमें कोई उपाय नहीं आया। मैंने उसके लिए टोपियाँ खरीदीं और कपड़े बनवाये, सुगंधित तैल तथा कर्णफूल लाकर दिये, परन्तु उसे कुछ भी लाभ न हुआ। मुझको अब उसकी मृत्यु प्रत्यक्ष दिखाई देने लगी। नवम्बर मासके अन्तमें दिनभर रोग-शय्यापर पड़े रहनेके पश्चात् रात्रिके समय—खूब हिम पड़ती हुई रात्रिके समय—उसने मुझसे पादरीको बुलानेके लिए कहा। मैं उनको बुलाने गया। उनके आते ही उसने मुझसे कहा कि प्यारे जीन, मैं, तुमसे एक बात क़बूलना (स्वीकार करना) चाहती हूँ। मेरा कर्त्तव्य है कि वह बात मैं तुमसे कहूँ। मैंने आजतक कभी तुम्हारे प्रति कोई मिथ्याचरण नहीं किया। न तो विवाहसे पूर्व और न उसके पश्चात्। पादरी महाशय भी यहाँ उपस्थित हैं और वह मेरे साक्षी हैं। मेरी आत्मा तकसे वह भली भाँति परिचित हैं। जीन, ध्यानपूर्वक मेरी बात सुनो। प्रासाद छोड़नेके उपरान्त मैं अपने मनको आश्वासन न दे सकी, इस कारण मेरी मृत्यु हो रही है। वैरन महाशयके पुत्रपर मेरा बहुत अनुराग था। परन्तु जीन भूलना मत, वह केवल विशुद्ध अनुरागमात्र ही था, उसमें कोई अनौचित्य न था। वही अब मेरी मृत्युका कारण हो रहा है। उनके दर्शन बन्द होते ही मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा कि मेरी मृत्यु हो जायगी। यदि मुझको उनके दर्शन—केवल दर्शनमात्र ही—होते रहते, तो मेरी मृत्यु न होती। मेरी इच्छा है कि मेरी मृत्युके उपरान्त—जब मैं संसारमें न रहूँ तब—किसी दिन यह सब वृत्तान्त तुम उनसे अवश्य कह देना। जीन, शपथ खाओ। इन पादरी महाशयके सम्मुख शपथ खाओ कि तुम उनसे यह सब अवश्य कहोगे। मुझे सुनकर

सन्तोष होगा यदि तुम शपथ खाकर कहो कि उनको यह वृत्तान्त–मेरी मृत्युका कारण–एक दिन अवश्य मालूम हो जायगा।

"सरकार, मैंने उसे वचन दे दिया और धार्मिक पुरुषकी भाँति मैंने उसका पालन किया है।

"इतना कहकर वह चुप हो गया। उस समय उसकी आँखें आँसुओंसे भरी हुई थीं।

"प्यारे मित्र, ईश्वर साक्षी है कि बरसतेमें उस रात्रिको–इसी रसोई घरमें—जब इस बेचारेने मुझको अपनी कथा सुनाई, तो यह जानकर कि अनजानमें मैं ही उसकी पत्नीकी मृत्युका कारण हुआ, मेरा हृदय किस प्रकार करुण रससे भर आया; तुम इसका क्या अनुमान कर सकते हो!

"मैं चिल्लाकर केवल यही कह सका कि 'प्यारे जीन, मेरे प्यारे जीन!' उसने गिड़गिड़ा कर कहा कि सरकार, बस फिर उसकी मृत्यु हो गई। मैं क्या करता, बेबस था और अब तो सब इतिश्री ही हो गई।

"मेज़पर रक्खे हुए उसके हाथोंको पकड़ कर मैं रोने लगा।

"उसने कहा—क्या आप उसकी समाधिपर चलेंगे? बोलनेकी शक्ति न होनेके कारण मैंने गर्दन हिलाकर ही अपनी सम्मति दे दी। उसने उठकर लालटैन जलाई, उसीके प्रकाशमें हम दोनों उसी समय–घटाटोप वर्षाहीमें–चल पड़े।

"उसने एक फाटक खोल दिया, जहाँपर मुझको बहुतसे काठके काले सलीब दृष्टिगोचर हुए।

"एकाएक उसने एक स्फटिककी पटियाके समीप आ रुककर कहा कि—यही उसकी समाधि है—और यह कहकर उसने लालटैनका प्रकाश इतना समीप कर दिया कि मैंने बहुत सुगमतासे उसपर लिखे हुए लेखको पढ़ लिया—

"लुइसी हौरटैन्स मारिनैट।"

"जीन फ्रैंकोय नामक किसानकी धर्मपत्नीकी स्मृतिमें।

वह पति-परायणा थी।

परमेश्वर उसकी आत्माको शान्ति दे।"

"हम लोग, अर्थात् मैं और वह दोनों उसी गीली घासमें घुटनोंके बल बैठ गये, लालटैन हमारे मध्यमें रक्खी हुई थी। वर्षाकी बूँदें उस समय भी स्फटिककी पटियापर वेगसे आघात कर रहीं थीं। मुझको उस समय उस अबलाके समाधिस्थ सुप्त-हृदयका ध्यान हो आया। आह! बेचारा कोमल, भग्न-हृदय! विदीर्ण हृदय!

"उस दिनसे मैं यहाँ प्रत्येक वर्ष आता हूँ। यद्यपि यह मुझको सर्वदा क्षमापूर्ण दृष्टिसे ही देखता है, तथापि किसी अज्ञात कारणवश मुझे सदा ऐसा भान होता रहता है कि मैं इस पुरुषके सम्मुख दोषी हूँ।"

मेरी पत्नी।
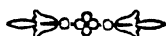
यह एक भोजकी बात है। यह भोज कुछ कालके अनन्तर होता था और कुँवारे रहनेकी दशामें जिसप्रकार लोग इसमें सम्मिलित हुआ करते, उसी प्रकार अब, विवाह हो जानेपर भी अकेले, भार्य्याओंके विना ही इसमें भाग लेनेकी परिपाटी थी। इसमें घंटोंतक भोजन तथा मदिरा-पान होता था, चित्तको प्रसन्न करनेवाली अतीत वार्त्तायें भी खूब होती थी, यहाँ तक कि ओठोंपर मुस्कुराहट आजाती और हृदयोंमें फुरफुरी उठ खड़ी होती थी। उनमेंसे एकने कहा—जॉर्ज, हमारी सेंट-जर्मेनकी उस यात्राका तो तुम्हें स्मरण होगा, जब मौंट माइट्रीकी दो कुमारियाँ भी हमारे साथ थीं ?

"हाँ, कुछ ध्यान तो आता है।"

बस, फिर क्या था, इस घटनाके इधर उधरके सभी वृत्त धीरे धीरे स्मरणमें आने लगे और सबके चित्त प्रफुल्लितसे हो उठे।

फिर विवाह-विषयक चर्चा छिड़ पड़ी और प्रत्येककी अन्तरात्मासे यही भाव निकले कि—"यदि दो बारा फिर वैसा ही हो जाय, तो क्या ही उत्तम हो।" इसपर जॉर्ज ड्यूपोर्टिनने इतना और कहा कि बड़े आश्चर्यकी बात तो यह है कि पुरुष कितनी सरलतासे इसमें फँस जाते हैं। कभी विवाह न करनेका पक्का निश्चय कर लेने पर भी, वसन्त ऋतुमें देहातोंमें जाते ही, उष्ण वायु, सुन्दर हरे भरे एवं फूलोंसे लदे हुए खेतोंके मध्यमें, किसी मित्रके यहाँ कुमारीके दर्शन मात्र भी हो गये, तो बस सब विचार काफूर हो जाते हैं। विवाह करके ही लौटना पड़ता है।

यह सुन पियेरी लैटोयलने चिल्लाकर कहा—"ठीक! बिल्कुल ठीक! मेरी भी यही गति हुई। परन्तु घटना कुछ ऐसी विचित्र थी—" मित्रोंने उनकी बात बीचहीमें काट कर कहा कि तुमको किस बातकी शिकायत है? तुम्हारी स्त्री तो संसारकी सर्वोत्तम स्त्रियोंमें गिनी जाती है—सुन्दरी, मंजुभाषिणी और सर्वगुणसम्पन्ना! तुम वास्तवमें हम सबसे कहीं अधिक सुखी हो।

इसपर उन्होंने कहा कि "इसमें मेरा अपराध क्या है?"

" यह तुमने क्या कहा ? "

" मेरी स्त्रीके सर्वगुणसम्पन्ना होनेमें कोई सन्देह नहीं, परन्तु मैंने अपनी इच्छाके विरुद्ध उससे विवाह किया था।"

" क्यों बकबाद करते हो ? "

" मैंने ठीक ठीक ही कहा है। लो, समस्त घटना ही सुनाये देता हूँ—

मैं ३५ वर्षका था, उस समय मुझे, विवाह करना, अपनेको फाँसी देनेके सदृश प्रतीत होता था। कुमारियाँ बुद्धिहीन एवं निस्सार दीखती थीं, मुझको केवल सुखहीकी चाह थी।

मईके महीनेमें मेरे पास, हमारे चाचाके लड़के साइमन-डि-इरेविलके विवाहमें नारमंडीमें सम्मिलित होनेका निमंत्रण आया। यह विवाह नारमंडीके विवाहोंकी भाँति किया गया था। सन्ध्याके ५ बजे मेजपर हम भोजन करने बैठे। फिर भी रात्रिके ११ बजे तक भोज समाप्त न हुआ! इस समय मेरे पास एक पेंशनभोगी कर्नेलकी प्राप्तयौवना कन्या बैठी हुई थी, जिसका नाम था—ड्यू मौलिन। इसका मुख सुन्दर और आकृति सुडौल थी। यह बड़ी स्पष्टवक्ता तथा खूब बातचीत करनेवाली थी। इसने मुझपर दिन भर पूरा प्रभुत्व जमाये रक्खा। कभी मुझे पार्कमें ले जाती और कभी मेरे साथ विविध प्रकारके नृत्य करती, यहाँ तक कि मैं बिल्कुल ऊब गया। मैंने मनमें कहा—आज तो जो होना था सो हो गया, परन्तु कलको मैं इससे निकल भागूँगा। इसी प्रकारसे इसकी इतिश्री होगी।

रात्रिके ११ बजेके पश्चात् स्त्रियाँ तो अपने अपने कमरोंमें चली गईं; परन्तु पुरुष धूम्रपानके अनन्तर मदिरापानके लिए—अथवा मदिरापानके पश्चात् धूम्रपानके लिए, चाहे जिस प्रकारसे समझ लीजिए–बैठे रह गये।

खुली हुई खिड़कीसे नृत्य करते हुए देहाती दिखाई दे रहे थे। किसान और उनकी लड़कियाँ घेरा बाँधकर कूद रही थीं और तीव्र स्वरसे नृत्य-गीत गाती जाती थीं। साथमें दो सारंगी और एक तुरही भी क्षीण स्वरसे बज रहीं थीं। किसानोंके ग्राम्य-गीतोंसे कभी कभी तो वाद्य-यंत्रोंका स्वर बिल्कुल ही दब जाता था और रागोंके ठीक नियन्त्रण न होनेके कारण, अकारण ही अनुदात्त और स्वरित होजाने पर, यंत्रोंका क्षीण स्वर भी हमको यदा कदा ही सुनाई पड़ रहा था। इस जमघटके पानके लिए दो बड़े बड़े मदिरासे भरे पीपे रक्खे हुए थे और उनके चारों ओर मशालें जल रही थीं। दो पुरुष गिलासों तथा प्यालोंको बाल्टीमें डालकर धोनेमें लिप्त थे। इसके उपरान्त वे तुरन्त ही पीपोंके छिद्रोंपर लगा दिये जाते थे, जिनमेंसे मदिरा-की लाल तथा शुद्ध साइडर (सेवकी मदिरा) की सुनहरी धारायें बह रही थीं। प्यासे नर्तक, हाँफती हुई कुमारियाँ तथा शान्त-प्रकृतिके वृद्धजन आते थे और हाथ बढ़ा बढ़ाकर प्याले उठा, सिरोंको पीछेकी ओर कर, मनचाही मदिरा कण्ठमें उड़ेल लेते थे। एक मेज़पर मक्खन, रोटी, पनीर तथा सौसेन (मांसयुक्त पदार्थविशेष) रक्खे हुए थे। जब तब लोग यहाँ आकर बैठते और एक कौर खा लेते थे। चाँदनी रातमें यह स्वास्थ्य-वर्द्धक एवं तीव्र व्यायाम अत्यन्त भला मालूम पड़ता था। देखनेवालोंको भी इन बड़े पीपों द्वारा मदिरापान तथा कच्ची प्याज़के साथ स्वयं मक्खन-रोटी खाने जैसा आनन्द आ रहा था।

इस विनोदमें भाग लेनेका मुझपर भी सहसा पागलपन सवार हो गया, अतएव मैं भी अपने साथियोंको छोड़ उनमें जा मिला। यह मैं मानता हूँ कि उस समय भी मुझे कुछ कुछ नशा चढ़ रहा था और कुछ कालके अनन्तर तो मैं बिल्कुल मदसे चूर हो गया।

मैंने झपटकर एक हाँफती हुई किसान-स्त्रीका हाथ पकड़ लिया और उसके साथ इतना नृत्य किया कि स्वयं मेरा दम फूल गया!

इसके पश्चात् मैंने कुछ मदिरा-पान किया और फिर दूसरी बालिकाको जापकड़ा। फिर दोबारा शक्ति प्राप्त करने और मनको विश्राम देनेके लिए मैं साइडर (सेवकी मदिरा) का प्याला मुखमें उड़ेल इस प्रकार कूदने लगा, मानों मेरे ऊपर कोई भूत सवार हो।

मेरे पैर बहुत हल्के और फुर्तीसे पड़ रहे थे। लड़के प्रसन्नचित्त हो मुझको ध्यानपूर्वक देख रहे थे और मेरी भाँति नाचनेका प्रयत्न करते थे। समस्त लड़कियाँ मेरे ही साथ नृत्य करना चाहती थीं और गायोंकी भाँति सुन्दरतासे इधर उधर फुदक रही थीं।

प्रत्येक नृत्यकी समाप्तिपर, मैं, या तो मदिराका या साइडरका प्याला पीता था। जब प्रातःकाल घड़ीमें दो बजने आये तो पानकी अधिकताके कारण मैं कठिनतासे खड़ा हो पाता था।

मुझे अपनी दशाका ज्ञान था। अतएव मैंने अपने कमरेतक पहुँचनेका प्रयत्न किया। सब सो रहे थे तथा मकानमें सन्नाटा और अँधेरा छा रहा था।

मेरे पास दियासलाई न थी और सब लोग अपनी अपनी शय्याओं-पर चले गये थे। दहलीजतक पहुँचते पहुँचते मेरे माथेमें चक्कर आ गया। सीढ़ियोंपर लगे हुए बारजेके खड़े खम्भेको ढूँढ़नेमें मुझे बड़ी कठिनाई पड़ी। अन्तमें जब मेरा हाथ अकस्मात् उसपर जा पड़ा तो मैं पहली सीढ़ीपर ही बैठ अपनी बुद्धिको स्थिर करनेका प्रयत्न करने लगा।

मेरा कमरा दूसरे तल्लेपर बाईं ओरको तीसरे नंबरपर था। सौभाग्यसे मैं यह बात नहीं भूला था। इस ज्ञानसे सुसज्जित हो मैं कठिनाईसे उठा और सीढ़ियोंपर धीरे धीरे चढ़ने लगा। गिर पड़नेके भयसे मैंने अपने हाथोंसे लोहेके जंगलेको दृढ़तापूर्वक पकड़ रक्खा था और भरसक ऐसा प्रयत्न किया कि शब्द न होने पावे।

सीढ़ियोंपर केवल तीन चार बार ही मेरा पैर फिसला और मैं घुटनोंके बल आरहा; परन्तु बलिष्ठ हाथ तथा दृढ़ इच्छाके कारण बिल्कुल नीचे गिरनेसे बच गया।

बड़ी कठिनाईसे मैं दोतल्ले तक पहुँचा और दीवारके सहारे हॉलमें चलने लगा। पहले मुझे एक दर्वाज़ा मालूम पड़ा। मैंने कहा—'एक,'

परन्तु इसके पश्चात् तुरन्त ही मेरे माथेमें चक्कर आगया, दीवार हाथसे छूट गई और मैं दूसरी दीवारपर गिर पड़ा। मैंने फिर मुड़नेका प्रयत्न किया। इसमें मुझे बड़ी कठिनाई पड़ी; परन्तु जैसे तैसे छोरतक आ ही लगा। फिर समझ-बूझकर दीवारके सहारे चल दिया, इतनेमें दूसरा दर्वाज़ा आगया। भूलका पूरा बचाव करनेके लिए, मैंने फिर उच्च स्वरसे कहा—'दो।' अब मैं और आगे बढ़ा और अन्तमें तीसरा दर्वाज़ा भी मुझे मिल-गया। मैंने कहा—'तीसरा भी आगया। यही मेरा कमरा है।' बस, मैंने हैंडिल घुमा दिया और दर्वाज़ा खुल गया। मदमत्त होनेपर भी मेरे मनमें यह विचार आया कि 'जब दर्वाज़ा ही खुल गया तो अवश्य यह मेरा ही कमरा होगा।' दर्वाज़ा धीरेसे बन्द कर मैं अँधेरेमें कुछ दूर ही चला हूँगा कि किसी नर्म वस्तुसे टकराया। यह मेरी आराम-कुर्सी थी। मैं तुरन्त ही इसपर लेट गया।

मेरी जैसी दशामें लिखनेकी मेज़, मोमबत्तियाँ और दियासलाई ढूँढ़-ना भी उचित न समझा जाता। ऐसा करनेमें मुझे कमसे कम दो घंटे लगते, इसके पश्चात् कपड़े उतारनेमें भी शायद इतना ही समय और लगता, इतने पर भी बहुत सम्भव है कि मैं अकृतकार्य्य ही रह जाता। अतएव मैंने इस विचारहीको छोड़ दिया।

मैंने केवल अपने जूते उतारे। दम घुटनेके कारण वेस्टकोटके बटन खोले और पतलून ढीली कर सो रहा।

मैं वास्तवमें बहुत देरतक सोता रहा। सहसा एक गम्भीर स्वरके कारण मेरी आँख खुल गई और ये शब्द सुनाई दिये—"अरी, आलसी लड़की, अभीतक बिस्तरपर ही पड़ी है? दस बज गये।"

इसपर एक स्त्रीका स्वर सुनाई दिया—"इतनी जल्दी, अभीसे। मैं कल बहुत ही थक गई थी।" मैं घबराकर सोचने लगा कि यह बातचीत कैसी हो रही है? मैं हूँ कहाँ? मैंने किया क्या? मेरा मन इस समय अस्थिर हो रहा था और चारों ओर घना धुंधसा फैला हुआ दिखाई दे रहा था। इतनेमें प्रथम स्वर फिर यह कहते हुए सुनाई दिया कि "मैं पर्दे उठाता हूँ।"

पैरोंकी आहट अब मेरे निकट आने लगी। मैं सिटपिटा रहा था कि क्या करूँ, पर कुछ समझमें न आता था; किन्तु फिर भी उठ बैठा। इतनेमें एक हाथ मेरे सिरसे लगा। मैं चौंका। फिर वही स्वर सुनाई पड़ा—'भीतर कौन है?' मैंने जान बूझकर कुछ उत्तर नहीं दिया। अब मुझे किसीने दृढ़तासे पकड़ लिया। मैंने भी अपने बचावके लिए उसको पकड़ा और खींचा तानी प्रारम्भ हो गई। हम चारों ओर खिसक रहे थे, कभी कमरेमें रक्खी हुई मेज़ कुर्सियोंसे टकराते तो कभी दीवारोंसे। एक स्त्रीका कातर स्वर 'सहायता'के लिए पुकारता हुआ सुनाई दे रहा था। पर्दे अब खुल गये थे। मैं कर्नल ड्यू मौलिनके साथ झगड़ रहा था।

मैं उनकी लड़कीके पास शय्यापर सो गया था।

लोगोंके पृथक् कर देने पर, मैं हतबुद्धि हो अपने कमरेकी ओर बचकर निकल भागा। वहाँ पहुँचकर मैंने अन्दरसे किवाड़ बन्द कर लिये। मेरे जूते लड़कीके कमरेमें ही रह गये थे, अतएव अपने पैरोंको कुर्सीके सहारे ही रखकर मैं वहाँ बैठ गया।

किवाड़ोंके खुलने तथा बन्द होने, पैरोंकी आहट और काना-फूसीके कारण इस समय समस्त घरमें मुझे शोर मचा हुआसा दिखता था। लग-भग आध घंटेके पश्चात् किसीने मेरा द्वार खटखटाया। मैंने पुकारकर कहा—कौन है? मेरे चचा, अर्थात् वरके पिता द्वार खटखटा रहे थे। मैंने किवाड़ खोल दिये।

उनका मुख, पीला पड़ रहा था और वह क्रोधमें भर रहे थे। आते ही उन्होंने मुझसे कठोरतापूर्वक कहा—सुनते हो, तुमने मेरे घरमें दुराचा-रीकी भाँति कृत्य किया है।

इसके पश्चात् फिर कुछ नर्मीसे बोले—अरे, बेवकूफ, अपनेको पकड़ा-नेके लिए प्रातःकाल १० बजेतक तू वहाँ बैठा ही क्यों रहा? सिंहकी भाँति वहाँ शयन करनेको तो पहुँच गया, परन्तु तुरन्त ही—थोड़े कालके अनन्तर फौरन ही—वहाँसे लौट आनेके स्थानमें—

मैंने चिल्लाकर कहा—परन्तु चचा, मैं विश्वास दिलाता हूँ कि मैंने वहाँ कोई कुकृत्य नहीं किया। मैं मदिरासे उन्मत्त होनेके कारण गलत कमरेमें चला गया था।

इसपर उन्होंने चमक कर कहा—वृथा बकबाद मत करो। मैंने हाथ उठा चिल्लाकर कहा—मैं आपके सम्मुख अपनी मान-मर्यादाकी शपथ खाकर कहता हूँ। परन्तु चचा यही कहते रहे–हाँ, ठीक तो है, अब तुमको यही कहना चाहिए।

यह सुन मुझे भी क्रोध आ गया और मैंने उनको समस्त दुःखदायी घटना सुना डाली, तब तो वह भी मेरी ओर आँखें फाड़कर देखने लगे। उनकी समझमें यह नही आता था कि वे किस बातपर विश्वास करें।

इसके पश्चात् वह उठकर बाहर कर्नलसे बातें करने चले गये।

मैंने फिर सुना कि वहाँपर माताओंकी भी एक ज्यूरी बैठाई गई है और उनके सम्मुख भी इस घटनाका समस्त वृत्त रक्खा गया है।

एक घंटेके पश्चात् वह लौटकर आये और विचारपतिके सदृश गम्भीरता-पूर्वक बैठकर मुझसे कहने लगे—खैर कुछ भी हुआ हो, अब तो तुम्हारे बचनेका केवल एक यही उपाय है कि तुम कुमारी ड्यू मौलिनसे विवाह कर लो।

मैं कुर्सीसे उछल पड़ा और चिल्लाकर बोला—कभी नहीं, यह असम्भव है।

उन्होंने गम्भीरतासे कहा—फिर तुम क्या करना चाहते हो।

मैंने इसका केवल यही उत्तर दिया कि जूते मिलते ही मैं यहाँसे चल दूँगा।

यह सुन मेरे चचाने कहा—भाई, ठठोल न करो। कर्नल तो देखते ही तुम्हारा सिर उड़ानेको कहते हैं और तुम जानते ही हो कि यह उनकी कोरी बकवाद नहीं है। मैंने तो उनसे द्वन्द्व-युद्ध करनेको भी कहा था, परन्तु उन्होंने कहा—नहीं, मैं उसके सिरपर गोली दागूँगा।

हमको इस प्रश्नपर दूसरे दृष्टिकोणसे भी विचार करना चाहिए। या तो तुमने कोई कुकृत्य किया है—जो तुम जैसे लड़केके लिए वैसे ही बुरा है; कुमारीके पास तो किसीको भी न जाना चाहिए; या जैसा तुम कहते हो यह गलती नशेमें हुई,—और तुम धोखेसे कमरेमें चले गये, तो यह उससे भी अधिक बुराईकी बात है। तुमको निर्बुद्धियोंके सदृश ऐसी परिस्थितिमें न पड़ना चाहिए था। अब तुम चाहे कुछ कहो, बेचारी

लड़कीके यशको तो बट्टा लग ही गया। शराबीकी बातको कौन पतियाने लगा है। इस मुआमिलेमें वास्तविक शिकार लड़कीका ही हुआ है। इस बातपर तनिक फिर विचार कर लो।

वह चले गये और मैं चिल्लाता ही रह गया—तुम कुछ ही कहो, मैं इस लड़कीसे कभी विवाह न करूँगा।

मैं और एक घंटे अकेला बैठा रहा। इसके पश्चात् मेरी चची आईं। वह रो रही थीं। उन्होंने सभी दलीलें दे डालीं। किसीको मेरी बातपर विश्वास न होता था। ऐसे भरे मकानमें लड़की रातको अन्दरका ताला लगाये विना ही सो जायगी, यह बात विचारकोटिके बाहर समझी गई। कर्नलने अपनी लड़कीको पीटा था और वह प्रातःकालसे अबतक रो रही है। यह कलङ्क ऐसा भयङ्कर है कि इसे कोई भी कभी न भूलेगा। यह सब कुछ कहकर भोली चाचीने अन्तमें यह कहा—अब तो जैसे हो उस बालिकाके पाणिग्रहणकी ही प्रार्थना करो। बहुत सम्भव है कि काग़ज़ात लिखते समय तुम्हारे बचनेका कोई बहाना ही मिल जाय।

अन्तिम बातसे मेरी आशा बँध गई और मैंने प्रार्थनापत्र लिखना स्वीकार कर लिया। एक घंटेके पश्चात मैं पैरिसको चल दिया। अगले दिन मुझे प्रार्थना स्वीकृतिकी खबर भी मिल गई।

मेरे बहाना ढूँढ़नेसे प्रथम, तीन सप्ताहके भीतर ही, गिर्जाघरमें हमारे नाम लोगोंको सुना दिये गये, मुआपदोंपर दस्तखत करा लिये गये और एक सोमवारको प्रातःकालके समय एक रोती हुई कन्याके पार्श्वमें स्थित हो मैंने मजिस्ट्रेटके सम्मुख उसको अपनी सहचरी बनानेकी स्वीकृति भी दे डाली। अन्त—बुरा, भला चाहे कैसा ही क्यों न हो।

उक्त घटनाके पश्चात् मैंने उसे नहीं देखा था, अतएव कनखियोंसे उसकी ओर देखनेपर मुझे आश्चर्य भी हुआ और ईर्ष्या भी। वह कुरूपा न थी। मैंने मनमें कहा–ऐसी मिली जो नित्यप्रति तो न हँसेगी।

सन्ध्या तक उसने न तो मेरी ओर देखा और न कोई शब्द मुखसे ही निकाला।

लगभग अर्द्धरात्रि बीत जानेपर मैंने बधूके शयनागारमें अपना निश्चय प्रकट करनेके विचारसे प्रवेश किया। कारण यह कि मैं अब स्वामी था।

मैंने देखा कि वह सब कपड़े पहने हुए आरामकुर्सीपर बैठी है। उसका मुख पीला हो रहा था और नेत्र रक्त। मेरे अन्दर घुसते ही वह खड़ी हो गई और धीरे धीरे मेरी ओर बढ़ कर यह बोली—महाशय, मैं आपकी आज्ञा पालनके लिए सदा प्रस्तुत हूँ। यदि आप कहें तो आत्मघात तक कर सकती हूँ। वीरवेशमें यह कहती हुई कर्नलकी लड़की अत्यंत रूपवती प्रतीत होने लगी। मैंने उसका चुम्बन कर लिया, यह मेरा अधिकार था।

मुझे यह बात बहुत शीघ्र ही मालूम पड़ गई कि इस सौदेमें मुझे टोटा नहीं रहा। मेरा विवाह हुए अब पाँच वर्ष बीत गये; परन्तु आजतक मुझे तनिक भी पछतावा न हुआ। यह कहकर पियरी लैटोयल तो चुप हो गये; परन्तु उनके साथी हँसते ही रहे। उनमेंसे एकने कहा—भाई, विवाह तो वास्तवमें लॉटरी (द्यूत-विशेष) है; इसमें किसी संख्याको पहले ही पसन्द न कर लेना चाहिए। अललटप्प रहना ही सबसे अच्छा है।" इसपर दूसरेने कहा—"हाँ, है तो ठीक। परन्तु यह क्यों नहीं कहते कि पियरीकी बधू तो मद्यपियोंके देवताने बरी ?"

वैवाहिक उपहार ।
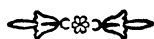
जेक्सने बहुत दिनोंसे विवाह न करनेका निश्चय किया था; परन्तु एकाएक उन्होंने अपना विचार बदल दिया। यह परिवर्त्तन ग्रीष्म ऋतुमें समुद्र-तटपर सहसा एक ही दिनमें हो गया।

बात यह थी कि एक दिन प्रातःकाल समुद्र तटकी बालुकामें लेटे हुए वे स्नानकर लौटी हुई स्त्रियोंको देख रहे थे कि सहसा उनका ध्यान, एक स्वच्छ एवं सुकुमार पैरोंकी ओर आकर्षित हुआ; आँख उठाकर जो देखा तो पैरों और मुखमण्डलको छोड़कर समस्त शरीर फलालेनसे ढका पाया। परन्तु इसपर भी आकृति तथा गठन ऐसी भली मालूम पड़ी कि उनका सारा वदन खिल उठा। लोग उनको इसी कारण विषयी एवं लम्पट कहा करते थे। मनोहर लाल कपोलों तथा युवतीके सुन्दर सुकुमार मुख एवं भोली प्रकृतिपर तो वह मुग्ध ही हो गये। धीरे धीरे कुटुम्बियोंसे भी परिचय हुआ और वह भी उनसे मिलकर प्रसन्न हुए। कुछ ही दिनोंमें वह उसके प्रेमपाशमें बुरी तरह फँस गये। समुद्र-तटपर दूर तक फैली हुई पीली बालुकामें 'वर्थी जैनिस'को दूरसे आते देखते ही उन्हें रोमांच हो आता था। समीप आनेपर यत्न करने पर भी मुखसे शब्द तक न निकलता, ज़ोर देनेपर भी स्मरणशक्ति लुप्त ही बनी रहती, हृदयकी गति तीव्र हो जाती, कान बजने लगते और मन उचाट हो जाता—क्या यह प्रेम था?

विना सोचे समझे कि मैं क्या कर रहा हूँ, उन्होंने इस बालिकाको अपनी वधू बनानेका निश्चय कर लिया; परन्तु इनके सम्बन्धमें बुरी बुरी अफ़वाहोंके फैलनेके कारण, माता पिता बहुत कालतक अपनी कन्याका सम्बन्ध करनेमें हिचकते रहे। लोग कहते थे कि अब भी उनकी एक प्रेयसी है। उन्होंने तो अपनी समझमें उससे भी अपना नाता तोड़ डाला था, परन्तु ऐसी दशाओंमें सम्बन्ध विच्छेद हो जाने पर भी बना रहता है।

प्रत्येक राह चलती स्त्रीको जो उनकी पहुँचमें हो कुछ न कुछ समय तक प्यार करनेकी मानों उनकी टेव सी पड़ गई थी। परन्तु उन्होंने अब अपनी पुरानी कुचालोंको छोड़नेका दृढ़ निश्चय कर लिया था। उस प्रेयसीका, जिसका उनसे इतने दिनोंसे सम्बन्ध था, अब उन्हें मुखतक देखना भी न रुचता था। एक मित्रकी कृपासे इस बेचारीकी मासिक वृत्ति नियत हो गई थी। जेक्स प्रतिमास नियमपूर्वक यह खर्चका रुपया तो भेज देते थे; परन्तु अब उनको उसका हाल तक सुननेकी इच्छा न होती थी। मानों वे उसका नाम तक भूलनेका यत्न कर रहे हों। उसने कई पत्र भी भेजे, परन्तु उन्होंने उनको खोला तक नहीं। प्रत्येक सप्ताह वह पत्र भेजती, लिफाफेके ऊपर लिखे हुए, भोंड़े अक्षरोंको, देखते ही वे तुरन्त ताड़ जाते कि ये पत्र उसके हैं। फिर तो उनके क्रोधका कुछ ठिकाना न रहता। यह तो वह जानते ही थे कि उनमें सिवाय दुःख, क्रोध और भर्त्सनाके और क्या हो सकता था; अतएव वह उन पत्रोंको विना एक सतर पढ़े हुए–विना खोले ही—फाड़कर फेंक देते थे।

उनके मनकी चंचलता तो प्रसिद्ध ही थी, अतएव शिशिरके अन्त तक उनकी परीक्षा होती रही। वसन्त ऋतुमें जाकर कहीं उनका 'वर्थी' के साथ पैरिसके एक गिर्जाघरमें मई मासमें पाणिग्रहण हुआ।

नवदम्पतीने अन्य पुरुषोंकी भाँति विवाहके उपरान्त तुरन्त ही यात्रा करनेका निश्चय नहीं किया था। उनका विचार तो यह था कि नृत्य केवल रात्रिके ११ बजे तक हो, जिससे थकावट न हो और इसके उपरान्त विवाहकी प्रथम रात्रि भर बालिकाके पिताके यहाँ ही विश्राम किया जाय और प्रातःकाल होते ही उसी समुद्रतटकी फिर यात्रा हो जहाँपर उनका प्रथम मिलन हुआ था।

रात्रि हो गई। बड़े कमरेमें नृत्य हो रहा था। दम्पति-युगल एक छोटेसे बग़ली कमरेमें बैठे थे, जिसमें रेशमके पर्दे लगे हुए थे। छतसे बड़े अंडेकी भाँति लटकती हुई जापानी कंदीलका प्रकाश हो रहा था। खिड़की द्वारा बाहरकी शुद्ध सुगन्धित वायु उनके मुखोंका चुम्बन कर रही थी। दम्पति-युगल एक दूसरेका हाथ थामे हुए–जिसको वह कभी कभी अपने पूरे बलसे दबा देते थे—चुपचाप बैठे हुए थे। नवबधू अपने जीवनमें परिव-

र्त्तन होनेके कारण मन ही मन कुछ सोचकर मुस्कुरा रही थी। हर्षाधिक्य-के कारण उसका हृदय द्रवीभूत सा हो रहा था और उसको तन मनकी भी सुध न थी। इस नवीन-सम्बन्धके कारण उसको अब समस्त जगत् परिवर्तित हुआ सा प्रतीत होता था। विना किसी ज्ञात हेतुके, उसका मन कभी कभी बेचैनसा हो जाता था। रह रह कर उसे अपना समस्त शरीर ही नहीं, प्रत्युत आत्मा तक किसी अपूर्व, अवर्णनीय एवं सरस आलस्यसे ओत-प्रोत हुआ प्रतीत होता था।

पति महाशय भी पत्नीकी ओर मुस्कुराहटपूर्ण दृष्टिसे देख रहे थे। वह बार बार कुछ कहनेका उद्योग करते थे; परन्तु कोई कहने योग्य बात ही उस समय उनके मस्तिष्कमें नहीं आती थी। अतएव वह हस्तमर्दनद्वारा ही अपना समस्त प्रेम प्रदर्शित कर रहे थे।

समय समयपर उनके मन्द अस्फुट स्वरसे 'वर्थी' कहकर बधूको सम्बोधन करते ही वह तत्क्षण उनकी ओर देखने लग जाती। एक क्षणतक वे दोनों एक दूसरेको इस प्रकारसे देखते रहते और इसके उपरान्त बधू उनकी दृष्टिसे विधकर अथवा मोहित होकर तुरन्त ही अपने नेत्र नीचेकी ओर कर लेती।

वार्तालाप करनेके योग्य कोई विषय समझमें न आनेके कारण वे दोनों चुपचाप बैठे थे। केवल कुछ व्यक्ति नृत्य करते करते किसी रहस्यके बुद्धिमान् एवं विश्वसनीय साक्षीकी भाँति उनकी ओर कभी कभी दृष्टिपात कर देते थे।

सहसा कमरेका दर्वाजा खुला और एक नौकर रकाबीमें पत्र रखकर लाता हुआ दिखाई पड़ा। इस पत्रको किसी अज्ञात पुरुषने अभी लाकर दिया था। इसे देखते ही पति महोदयका हृदय अज्ञात तथा रहस्यमय अनिष्टकी आशंकासे एकदम त्रसित एवं भयभीत हो उठा।

वह बहुत देरतक लिफाफेकी ओर देखकर भी यह निश्चय न कर सके कि यह किसने भेजा है। न तो उनको उस पत्रके खोलनेका साहस ही होता था और न पढ़नेकी इच्छा; अतएव उसको जेबमें रखकर दृढ संकल्प करके उन्होंने मनमें यह विचार किया कि मैं इसे कल पढ़ूँगा और

उस समय मैं यहाँसे न जाने कितनी दूरी पर हूँगा। परन्तु पत्रके कोनेपर लिखे हुए "अत्यन्त आवश्यक" शब्दोंपर, तथा उनके नीचे खिंची हुई लाल रेखापर दृष्टि पड़ते ही वे फिर भयसे काँपने लगे।

'प्यारी, मुझे एक क्षणके लिए क्षमा करो।' यह कहकर उन्होंने लिफाफेको खोला और पत्र पढ़ा। पढ़ते ही उनका मुख पीला पड़ गया। उन्होंने फिर दोबारा एक एक अक्षर ध्यानपूर्वक पढ़ना प्रारम्भ किया और इसके पश्चात् जब उन्होंने अपना मस्तक ऊपरको उठाया तो ऐसा मालूम पड़ता था कि वह बहुत ज्यादह परेशान हैं। अस्फुट शब्दोंमें उन्होंने बधूसे कहा कि यह मेरे एक परम हितैषी मित्रकी चिट्ठी है, जिनपर सहसा विपत्ति आपड़ी है। जीवन-मृत्युका प्रश्न है और मेरा जाना नितान्त आवश्यक है। क्या तुम मेरी आध घंटेकी अनुपस्थिति क्षमा कर सकती हो? मैं लौट कर सीधा यहीं आऊँगा। बधू बेचारी सुनते ही काँप उठी। विवाह हुए अभी समय ही कितना हुआ था, इस कारण वह और पूँछ ताँछ ही क्या कर सकती थी। अतएव पति महोदयको जानेकी तुरन्त आज्ञा मिल गई। बराबरवाले हॉलमें अब भी नृत्य हो रहा था, नव-बधू अब अकेली ही बैठी उसे देखने लगी।

जो हैट तया ओवरकोट पति महोदयको सबसे पहले दृष्टिगोचर हुआ, उन्होंने उसीको उठा लिया और तीन तीन सीढ़ियाँ एक बारमें लाँघकर जल्दीसे मकानसे बाहर आनेके प्रथम ही उन्होंने दहलीज़में गैसके प्रकाशमें वह पत्र खोलकर फिर पढ़ा, उसमें लिखा था—

प्रिय महाशय, रैवट नामकी बालिकाने—जो आपकी प्रेयसी है—एक शिशु प्रसव किया है, जो आपसे है। जननी आसन्न-मृत्यु हो रही है और आपके दर्शन किया चाहती है। रमणीकी ओरसे मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि आप उस अभागिनीकी अन्तिम प्रार्थनाको विशेषतया इस दयनीय दशामें अवश्य ही स्वीकृत करें। आशा है कि आप मेरी इस उद्दण्डताको कृपापूर्वक क्षमा करेंगे।

आपका हितेच्छु—
डाक्टर बोनार्ड।

रोगिणीके पास पहुँचनेपर उन्होंने देखा कि उसका अन्तकाल अब निकट ही है; परन्तु वह उसे एकाएक न पहचान सके। एक डाक्टर तथा दो धात्री उसकी शुश्रूषा कर रहीं थीं। कमरेमें फ़र्शपर बर्फ़से भरी हुई बहुतसी बाल्टियाँ रक्खी हुई थीं और जहाँ तहाँ खूनसे सने हुए बहुतसे चिथड़े पड़े थे, दरी तक पानीसे तर थी। एक आलेमें दो मोमबत्तियाँ जल रही थीं। शय्याके पास ही एक छोटेसे टोकरेमें पड़ा हुआ नवजात शिशु रो रहा था। शिशुका क्रन्दन सुनते ही, बर्फ़से स्थान स्थानपर ढकी होनेके कारण, ठंडसे काँपती हुई माता मानसिक कष्टके कारण बारम्बार उठनेका प्रयत्न कर रही थी।

प्रसवके कारण रमणी मर्माहत हो गई थी। उसका जीवन-रक्त समस्त बहा जाता था। चिकित्सा, शुश्रूषामें कोई त्रुटि न थी; परन्तु फिर भी रमणीके शरीरसे रक्तप्रवाह बन्द न होता था। उसकी मृत्यु प्रत्यक्ष दिखाई दे रही थी।

वह जैक्सको देखते ही पहचान गई और उसने प्रेमसे उनकी ओर हाथ बढ़ाने चाहे, परन्तु निर्बलताके कारण अपनेको इसमें भी असमर्थ देखकर उसके रक्तहीन कपोलोंसे अश्रुधारा बह चली।

रोगिणीकी शय्याके पास आकर वे घुटनोंके बल बैठ गये और उसके हाथोंको अधीरतासे बारम्बार चुम्बन करने लगे। धीरे धीरे वे उसके रक्तहीन, दुर्बल मुखमण्डलकी ओर खिसकने लगे। धात्रीने मोमबत्तीका प्रकाश उनके और समीप कर दिया। डाक्टर महोदय भी इनके सम्मिलनको कमरेके पीछेकी ओरसे देख रहे थे।

तब रोगिणीने अपने क्षीण स्वरसे, जो निर्बलताके कारण बहुत दूरीसे आते हुए स्वरके समान प्रतीत होता था, कहा—प्रियतम, मेरा अन्तकाल आपहुँचा है, देखो अब मुझे अकेले मत छोड़ना, अन्त समयमें तो मेरा साथ दे दो।

प्रेमावेशमें उन्होंने रोगिणीका मुख और फिर केश-कलाप-चुम्बन कर रोते रोते कहा—तुम, अधीर मत हो, अब मैं यहाँ ही रहूँगा।

कुछ क्षणके उपरान्त फिर कहीं रोगिणीको दम आया और उसने कहा—यह शिशु तुम्हारा है। मैं अपनी तथा भगवान्‌की सौगन्ध खाकर

कहती हूँ। मेरी अन्तकालिक शपथपर विश्वास करो। मैंने तुमको छोड़ किसी अन्य पुरुषकी ओर दृष्टि उठाकर भी कभी नहीं देखा। मुझे वचन दो कि तुम इस शिशुकी रक्षा करोगे। वह उस अस्थिपंजर-मात्र शरीरको अपने हाथोंमें उठानेका प्रयत्न कर रहे थे। अनुताप एवं खेदके कारण उनका मस्तिष्क विकृतसा हो गया था। रुँधे हुए कण्ठसे वह केवल यही कह सके कि मैं शपथ खाकर कहता हूँ कि मैं इसकी सदा रक्षा करूँगा और कभी जुदा न होने दूँगा।

कृतज्ञताका भाव दिखाती हुई रमणीने जैक्सको चुम्बन करनेका यत्न किया; परन्तु निर्बलताके कारण वह अपने श्वेत ओष्ठ कुछ ही ऊपर उठाकर रह गई। इस दयनीय याचनाको पूर्ण करनेके निमित्त उन्होंने अपने अधर रमणीके मुखमण्डलके निकट कर दिये। अब कहीं जाकर रोगिणी कुछ शान्त हुई तो क्षीण स्वरसे उसने कहा—शिशुको मेरे पास लाओ, मैं तो देखूँ कि तुम उसे कैसा प्यार करते हो। वह उठे और नवजात शिशुको रोगिणीके पास लाकर लिटा दिया। बालक तुरन्त चुप हो गया। उन्हें आगे बढ़ता देखकर रोगिणीने मना कर दिया, अतः वे सहम गये। उनके हाथ उस समय जल रहे थे। उन्हीं जलते हुए हाथोंसे, जिनसे उन्होंने किसी औरके, अभी कुछ देर हुए, प्रेम-कम्पित हाथ थामे थे, अब शीतमें डूबे हुए रोगिणीके हाथ थाम लिये। रह रह कर उनकी दृष्टि घड़ीकी ओर जाती थी।

कुछ देर हुई तब बारह बजे थे। अब एक बजा, और फिर धीरे धीरे दो बज गये। डाक्टर महोदय भी लेट गये। दोनों धात्री भी कुछ काल तक इधर उधर कमरेमें घूमनेके पश्चात् कुर्सियोंपर ही सो गईं। शिशु भी सो गया और जननीकी भी आँखें मिच गईं, मानो उसे भी नींद आगई हो।

उषःकालीन मन्द प्रकाश कमरेमें धीरे धीरे फैल रहा था। रोगिणीने अपने दोनों हाथ सहसा ऐसे झटकेसे फैलाये कि शिशु भी पृथ्वीपर गिरते गिरते बच गया। उसके गलेमें कुछ काल तक गड़गड़ाहट सुनाई दी और वह फिर एकदम पीठके बल निश्चल होकर गिर पड़ी। उसका प्राणान्त हो गया।

धात्री भी चौंक पड़ी, परन्तु वहाँ तो प्राणपखेरू एक क्षणमें उड़ गये। जैक्सने इस स्त्री—अपनी प्रेयसी—की ओर एक बार फिर देखा और फिर घड़ीकी ओर जो दृष्टि डाली तो चार बजे थे। हड़बड़ाहटमें वह वैसे ही अपना ओवरकोट तक छोड़कर, जल्दीसे शिशुको गोदमें लेकर भाग पड़े।

उधर नव-बधू पहले तो कुछ कालतक उसी जापानी कमरेमें बैठी हुई धैर्यपूर्वक उनकी प्रतीक्षा करती रही, परन्तु बहुत काल बीतनेपर भी उनको लौटता न देखकर वह अन्यमनस्का हो अपने बैठनेके कमरेमें आगई। माताने पुत्रीको अकेला देखकर पूछा कि पति कहाँ हैं, तो उसने कह दिया कि वे अपने बैठनेके कमरेमें हैं, अभी आते ही हैं।

घंटेभरहीमें यह बात सर्वत्र फैल गई। प्रत्येक व्यक्ति बधूसे यही प्रश्न करता था। अन्तमें चिट्ठीका आना और उसके पश्चात् जैक्सकी बदहवासी इत्यादि, सब कुछ ही उसे बतलाना पड़ा। किसी अनिष्टकी आशंकासे बधूके मनमें रह रहकर उथल पुथल होने लगी। बहुत काल तक प्रतीक्षा करनेके पश्चात् सब अतिथि चले गये, केवल निकटसम्बन्धी ही रह गये। अर्द्ध रात्रिके पश्चात् रोती विसूरती बधूको भी शयनागारमें भेज दिया गया। माता तथा दो फूफियाँ शय्यापरसे बधूका निःशब्द एवं नैराश्यजनक रुदन सुन रही थीं। पिता पुलिस-कमिश्नरके पास चले गये थे कि शायद वहाँ ही कुछ पता चले।

प्रातःकाल ५ बजे कुछ यों ही सा अस्फुट स्वर सुनाई दिया। ऐसा प्रतीत होता था मानो किसीने धीरेसे दर्वाज़ा खोलकर फिर बन्द कर दिया है। सहसा बिल्लीके 'म्याऊँ' सदृश शब्दसे घरकी निस्तब्धता भंग हुई। सुनते ही स्त्रियाँ उस ओर दौड़ पड़ीं। वर्थी अपने रात्रिहीके वस्त्रोंको पहने हुए माता, फूफी आदि सबको धकेलकर कूदती हुई सबसे पहले पहुँची।

जैक्सका मुख पीला हो रहा था, साँस फूल रहा था, और उनकी गोदमें एक शिशु था। स्त्रियाँ तो उन्हें इस दशामें देखकर भौचक्कीसी रह-गई; परन्तु वर्थी साहस कर आगे बढ़ी और धड़कते हुए हृदयको थामकर धैर्य्यपूर्वक बोली—क्यों, क्या बात है?

जैक्सने आँखें फाड़कर उसकी ओर देखकर कहा—मेरे पास शिशु है। इसकी माताका अभी देहान्त हुआ है। इतना कहकर उन्होंने शिशुको हाथ उठाकर उसकी ओर कर दिया। वर्थीने विना कुछ कहे उसे ले लिया और चुम्बनकर छातीसे लगा लिया। इसके उपरान्त बधूने सजल नेत्रोंसे पूछा कि तुम क्या कह रहे थे कि इसकी माताका अभी देहान्त हुआ है? उन्होंने कहा—हाँ अभी और मेरे ही हाथोंमें। मैंने उससे अपना सम्बन्ध पिछली ग्रीष्मऋतुहीमें विच्छेद कर लिया था। इसके पश्चात् मुझे तो आजतक यह भी ज्ञात न था कि वह कहाँ है और क्या करती है। सहसा आज डाक्टरने मुझे बुला भेजा था। वर्थीने अस्फुट स्वरसे कहा—कोई चिन्ता नहीं, हम इस नवजात शिशुका पालन पोषण करेंगे।

हीरेका कंठा।
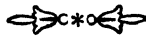
उसकी गणना उन सुन्दरी तथा कमनीय स्त्रियोंमें थी, जो कभी कभी विधिकी विडम्बनासे मध्य श्रेणीके घरानोंमें जन्म ले लेती हैं। उसके मातापिताके न तो प्रचुर धनराशि ही थी और न महती आकांक्षा। हृदयङ्गत भावोंको प्रत्यक्ष करनेका उसको अवसर ही न था। किसी उच्चपदाधिकारी अथवा प्रतिष्ठित पुरुषसे विवाह करनेकी आशा दुराशा मात्र थी, अतएव शिक्षाविभागके एक मामूली क्लर्कसे ही विवाह करनेमें उसने अपनेको धन्य माना।

वह मामूली कपड़े ही पहिनती थी, बढ़िया कपड़े भला कहाँ मिल सकते थे; अतएव वह सदा दुःखी रहा करती थी—मानों उच्च श्रेणीसे गिर गई हो। स्त्रियोंमें (यूरोपमें) न तो कोई श्रेणी ही है और न वर्णविभाग। रूप, लालित्य, सौकुमार्य ही उनके लिए उच्च वंश इत्यादिका कार्य करते हैं। नैसर्गिक प्रतिभा, सौन्दर्यकी ठीक ठीक परीक्षा, प्रत्युत्पन्नमति इत्यादि गुण निम्नश्रेणीकी स्त्रियोंको भी उच्चकुलाभिभूता श्रीमतियोंके तुल्य बना देते हैं।

मैथिल्डाका हृदय व्यथित रहता था—वह तो सदा यही सोचती थी कि मैं केवल ऐश्वर्य भोगनेके लिए ही उत्पन्न हुई हूँ। अपने वासस्थानकी तुच्छ दशाको देखकर—जहाँ कोरी दीवारें, पुरानी कुर्सियाँ तथा भद्दे पर्दोंके सिवाय और क्या था—उसे बड़ा दुःख होता। जिन वस्तुओंकी ओर उसी श्रेणीकी किसी और स्त्रीका ध्यान भी न जाता, उन वस्तुओंतकसे उसका हृदय क्षुभित हो जाता और वह जब तब खीज उठती थी। गरीब नौकरनी ब्रेटन जब काम करने आती, तो उसे देखकर उसका मन नैराश्यसे भर जाता और वह अद्भुत स्वप्न देखने लगती। विचार-तरङ्गोंमें पड़कर वह सोचती कि क्या ही अच्छा होता यदि मेरे यहाँ भी बहुतसे कमरे पूर्व-देशीय कारीगरीसे पूरित पर्दोंसे सुसज्जित होते और उनमें रात्रिको सुन्दर

पीतलके शामदानोंमें मोमबत्तियोंका प्रकाश होता, तथा बर्दी पहिने हुए बहुतसे भृत्य सदा 'आज्ञा' की प्रतीक्षामें खड़े रहते। कभी कभी वह यह सोचती कि अतिथि-सत्कारके लिए, अपूर्व पदार्थोंसे सुशोभित तथा सुन्दर रेशमी पर्दोंसे सुसज्जित, सुवासपूरित यदि बड़ा कमरा मेरे यहाँ भी होता, तो बड़े बड़े विद्वान् एवं प्रतिष्ठित नर-नारी मेरे यहाँ भी आकर अपने दर्शनोंसे मुझे कृतार्थ करते।

तीन तीन दिन तक बर्त्ते हुए हुए पुराने 'टेबिल-क्लाथ'से ढकी हुई गोल मेज़पर जब वह भोजन करने बैठती, तो पतिके भोजनकी प्रशंसा करते ही उसके मानसिक जगत्में रुचिर भोजन, दिव्य रजत-पात्र, एवं प्राचीन योद्धाओं, तथा जंगलोंमें उड़ते हुए पक्षियोंके चित्रोंसे सज्जित दीवारोंकी सृष्टि होने लगती और उसका मन उन कमनीय पात्रोंमें चुने हुए स्वादिष्ट एवं मधुर भोजनोंके लिए लालायित हो जाता।

उसके पास न तो कोई 'गाऊन' ही थी और न कोई आभूषण। उसको केवल इन ही वस्तुओंकी चाह थी। वह तो यह समझती थी कि विधाताने उसको इन्ही वस्तुओंके लिए उत्पन्न किया है। उसकी यह प्रबल आकांक्षा थी कि अन्य व्यक्ति उसको न केवल आश्चर्य एवं प्रेमसे ही अपि तु ईर्षाकी दृष्टिसे भी देखें।

स्कूलमें साथ पढ़ी हुई उसकी एक सहेली भी थी; परन्तु वह धनवान् थी, अत एव वह उससे भी नहीं मिला चाहती थी। एक वार वह स्वयं इससे मिलने आई; परन्तु उसके चले जानेके पश्चात् इसको अपनी अवस्थापर अतीव दुःख हुआ।

एक दिन सन्ध्या समय उसका पति एक बन्द लिफाफा हाथमें लिये इस तरह प्रसन्न होता हुआ घरपर आया, मानों कोई बड़ी भारी लड़ाई जीतकर आया हो।

आते ही उसने लिफाफ़ेको पत्नीकी ओर बढ़ाकर कहा—यह लो, मैं तुम्हारे लिए विशेष वस्तु लाया हूँ।

उसने तुरन्त ही लिफाफा फाड़ अंदरसे एक कार्ड निकालकर देखा, जिसमें निम्नलिखित शब्द छपे हुए थे—

" शिक्षाविभागके माननीय मंत्री महोदय तथा उनकी पत्नी अपने भवनमें १८ जनवरी, सोमवारके दिन, सन्ध्या-समय श्रीमान् लौयजल तथा उनकी पत्नीको सादर आमंत्रित करते हैं। "

उसके पतिने तो सोचा था कि वह इससे प्रसन्न होगी; परन्तु उसने निमंत्रणपत्रको झुँझलाकर मेजपर फेंक दिया और लगी बड़बड़ाने कि इसे तुम यहाँ किस वास्ते दिखाने लाये हो?

" मैं तो यह समझा था कि तुम इसे पाकर प्रसन्न होगी। तुम वैसे तो कभी बाहर जाती नहीं, फिर इस ऐसे अच्छे अवसरको क्यों हाथोंसे छोड़ती हो? मुझे इसके प्राप्त करनेमें विशेष यत्न करना पड़ा है। ऐसे स्थानोंमें जानेकी इच्छा तो प्रत्येक व्यक्तिकी होती है; परन्तु बुलाये तो केवल विशेष पुरुष ही जाते हैं। बेचारे क्लर्कोंकी तो कथा ही क्या है, उनको पूँछता ही कौन है, वहाँ तो केवल अफसर ही होंगे।

पतिकी यह लम्बी चौड़ी वक्तृता सुनकर वह भिन्ना उठी और बोली—तो मैं वहाँ क्या पहन कर जाऊँ?

बेचारेको इसका तनिकसा भी ध्यान न था, अतएव घबरा कर बोला—क्यों थियेटरमें जिस गाऊनको पहिन कर जाती हो, वह क्या हुई? मुझे तो वह अच्छी खासी मालूम होती है।

पतिके मुखसे यह शब्द निकले ही थे कि पत्नी सिसकियाँ भरने लगी। वास्तवमें बड़े बड़े अश्रुबिन्दु उसकी आँखोंसे निकलकर युगल कपोलोंपर बह रहे थे।

" अरे यह क्या? तुम रोती क्यों हो? "

बड़े यत्नसे अपनी हृदय-कथाको छिपा कर और सुन्दर कपोलोंकी अश्रु-धाराको पोंछते हुए, स्थिर भावसे उसने कहा—विशेष बात कुछ भी नहीं है। गाऊन न होनेके कारण मैं इस नृत्यमें न जा सकूँगी। तुम यह कार्ड अपने किसी ऐसे मित्रको दे दो जिसकी स्त्रीकी आर्थिक दशा मुझसे अच्छी हो।

उत्तर सुनकर वह निराश हो गया। परन्तु फिर बोला कि अच्छा जाने दो; परन्तु यह तो बताओ कि ऐसे अवसरोंपर पहिरने योग्य एक साधारण गाऊन कमसे कम कितनेमें तयार हो जायगी?

कुछ क्षण तक तो वह सोचती रही और मन ही मन हिसाब लगाती रही; परंतु उसका विशेष लक्ष्य इसी बातपर था कि मूल्य कहीं इतना अधिक न हो कि मितव्ययी क्लर्क महोदय एकदम घबरा कर अस्वीकार कर दें।

अन्तमें बहुत कुछ सोच विचारके पश्चात् वह बोली कि ठीक ठीक बताना तो बड़ा कठिन है; परन्तु मुझे विश्वास है कि ४०० फ्रैंकसे कममें ही यह कार्य हो जायगा।

सुनते ही पति महोदय पीले पड़ गये। कारण यह था कि उनके कुछ मित्र प्रत्येक रविवारको शिकार खेलने जाया करते थे। उन्होंने भी अबकी शिशिरऋतुमें उनके साथ शिकार खेलनेका निश्चय किया था और एक बंदूक मोल लेनेको केवल इतने ही रुपये बड़े कष्टसे जमा कर पाये थे; परन्तु फिर भी उन्होंने कहा—ठीक है। मैं ४०० फ्रैंक दे दूँगा। तुम एक अच्छीसी गाऊन शीघ्र ही सिलवा लो। गाऊन तयार हो गई; परन्तु ज्यों ज्यों नृत्य-दिवस समीप आता आता था, त्यों त्यों श्रीमती लौयज़लकी चिन्ता एवं मानसिक व्यथा बढ़ती जाती थी। यह देख उनके पतिने एक दिन संध्या समय पूछा कि क्या बात है? मैं गत तीन दिवससे देख रहा हूँ कि तुम कुछ सुस्तसी हो रही हो।

लौयज़ल-पत्नीने उत्तर दिया कि अपने पास एक भी रत्न अथवा आभूषण नहीं है, इससे मुझे बड़ा मानसिक कष्ट हो रहा है। मैं उस दिन क्या धारण करूँगी, यही सोच रही हूँ। विना आभूषणके मैं दरिद्रा सी दीखूँगी। मेरा जी तो इस प्रकारसे जानेको नहीं करता।

"इस तुच्छसी बातका इतना सोच कर रही हो? आजकल तो फूलोंका मौसम है। बस उनहीको आभूषणवत् धारण कर लेना। इसका फैशन भी है और फूल भी कुछ मँहगे नहीं हैं। केवल दस फ्रैंकमें ही तीन चार सुंदर गुलाबके फूल मिल जायँगे।"

परन्तु पत्नीको यह बात न जँची। वह बोली—नहीं, धनी स्त्रियोंके मध्य अपना दारिद्र्य दिखानेमें मुझे तो बड़ी लज्जा आती है।

पतिने यह सुनते ही ज़ोरसे कहा—तुम तो निरी मूर्खा हो। जाओ,

फिर अपनी सहेली श्रीमती फौरेस्टियरसे ही कुछ आभूषण माँग लाओ। तुम्हारी उनकी तो घनिष्ट मित्रता है।

सुनते ही वह प्रसन्नतासे उछल पड़ीं और बोलीं—तुम ठीक कहते हो; पर मुझे तो देखो इसका ध्यान तक भी न आया।

दूसरे ही दिन उन्होंने अपनी सहेलीके यहाँ जाकर अपनी सारी गाथा कह सुनाई। सुनते ही श्रीमती फौरेस्टियर अपनी शृंगार-कोठरीमें गईं जहाँ एक दर्पण भी लगा हुआ था उन्होंने एक बड़ी आभूषणोंकी सन्दूकची श्रीमती लौयज़लके सम्मुख खोल कर धर दी और कहा—इनमेंसे तुम अपनी इच्छानुसार जो चाहो ले लो।

संदूकचीमें सुन्दर सुन्दर चूड़ियाँ, मोतीके कंठे, बेनिसके बने हुए रत्नजटित सुवर्णके सलीव, इत्यादि-इत्यादि बहुतसे आभूषण थे। प्रत्येक आभूषणको दर्पणके समुख पहिनकर भी वह निश्चय न कर सकीं कि कौन सबसे उत्तम है। उन्हें तो सब ही एकसे एक अच्छे लगते थे, अतएव उन्होंने पूँछा—इनके सिवाय तुम्हारे पास कुछ और भी हैं?

"क्यों नहीं, बहुतसे हैं; परंतु मैं क्या कर सकती हूँ। न मालूम तुम कौनसा आभूषण पसंद करोगी।"

सहसा उनकी दृष्टि काली साटिनकी डिबियामें रक्खे हुए एक हीरेजड़े कंठेपर पड़ी। उसे देखते ही उनका हृदय उछलने लगा, यहाँ तक कि उसे निकालते समय उनके हाथ भी काँप उठे। उसे गर्दनमें पहिनकर जब उन्होंने दर्पणमें मुख देखा, तो स्वयं अपने ही ऊपर मोहितसी हो गईं। सशंक हृदयसे डरते डरते उन्होंने पूछा—मुझे यह आभूषण—केवल एक यही आभूषण, क्या दे सकोगी?

"क्यों नहीं, अवश्य।"

हर्षाधिक्यसे वह अपनी सहेलीके गलेसे चिपट गईं और प्रेमपूर्वक उनका चुम्बन कर बिदा हो शीघ्र ही घर आईं।

नृत्यकी रात्रि भी आ गई। श्रीमती लौयज़लकी वहाँ पूरी विजय हुई। कारण यह था कि उपस्थित स्त्रियोंमें यही सबसे सुन्दर, मृदुल, एवं प्रफुल्ल-वदन थीं। प्रत्येक पुरुष इनहीका नाम पूछता था, हरएक इनसे ही परिचित

होना चाहता था। सब प्रतिष्ठित व्यक्तियोंने इनके साथ नृत्य किया। मंत्री महोदय तकने इनकी प्रशंसा की। औत्सुक्य तथा आनन्दाधिक्यके कारण नृत्यसे इनकी वाँछियें खिल गईं। अपने सौन्दर्य-विजय, अपूर्वभूत साफल्य, एवं प्रशंसात्मक वाक्यरूप मेघोंके आवरणमें वह कुछ ऐसी तन्मय हो गई कि उन्हें अपने तनकी भी सुधि न रही। और यह है भी ठीक, क्यों कि स्त्रियोंको अपने विजयपर बहुत गर्व होता है।

पति तो आधी रातके पश्चात् ही थक कर बैठ रहे; परन्तु वह प्रातःकाल चार बजेतक नाचती रहीं। चलते समय उन्होंने एक साधारणसी चादर पत्नीके कंधोंपर डाल दी। नृत्यके वस्त्रोंको देखते हुए यह बहुत ही रद्दी मालूम पड़ती थी। अन्य स्त्रियाँ अपने शरीर बहुमूल्य संवूरसे ढक रही थीं। उनकी दृष्टिमें हेय न होनेके विचारसे भयभीत होकर लौयज़ल-पत्नी कतराकर निकल चलीं। पतिने उनको रोकते हुए कहा भी कि एक क्षणके लिए ही ठहर जाओ, मैं अभी गाड़ी ला देता हूँ। बाहर जानेसे ठंड लग जायगी। परन्तु उन्होंने एक न सुनी और शीघ्रतासे नीचे उतर आईं। सड़कपर एक भी गाड़ी न थी। बहुत मार्ग देखनेके पश्चात् कहीं एक गाड़ीवान् बहुत दूरीपर जाता हुआ दिखाई दिया; परन्तु वह बहुत पुकारने पर भी न आया।

अन्तमें निराश होकर वह दोनों ठंडसे काँपते हुए सीन नदीकी ओर पैदल ही चल दिये। वहाँ पहुँचकर सौभाग्यसे उनको एक पुरानी जर्जर गाड़ी मिल गई और उसीमें बैठकर बड़े ठंडे हृदयसे वह कहीं अपने घर पहुँच पाये। पत्नीके लिए नाटकका पटाक्षेप हो चुका था, पतिको भी फिर प्रातःकाल दस बजे दफ्तर जानेकी धुन लग गई थी।

पत्नीने अपनी शोभा फिर देखनेकी लालसासे दर्पणकी ओर मुख करके चादर उतारी ही थी कि सहसा उनके मुखसे एक चीख निकल पड़ी। गलेमें हीरेका कंठा न था! पतिने आधे ही कपड़े उतार पाये थे; परन्तु चीख सुनते ही वह चिल्लाकर बोले—खैर तो है? क्या हो गया?

निःश्वास लेकर पत्नीने कहा—श्रीमती फौरेस्टियरका हीरेका कंठा कहीं गिर पड़ा। सुनते ही उनका भी मानो श्वास सा रुक गया। बोले—कैसे? अरे यह असम्भव है!

फिर उन्होंने कपड़े लवादे और जेबेंतक ढूँढ़ डालीं, परन्तु कँठा न मिला।

"क्या तुम ठीक बता सकती हो कि नृत्य-भवनसे आते समय वह तुम्हारे कंठमें था ?

"हाँ, उससमय तो था। मैंने मंत्री महोदयके घरसे निकलते समय दहलीजमें गर्दन टटोली थी।"

"यदि वह सड़कमें कहीं गिरता, तो हमें अवश्य ही उसके गिरनेका शब्द सुनाई देता। निस्संदेह वह गाड़ीमें ही रह गया।"

"बहुत संभव है। तुम्हारे पास तो उसके नंबर लिखे होंगे ?"

"नहीं, मैंने नहीं लिखे। तुम्हे याद हैं ?"

"नहीं।"

दोनोंपर मानो बिजली ही पड़ गई। अन्तमें लौयज़ल महाशयने कपड़े पहिन कर कहा—जिस मार्गसे होकर आये हैं, मैं अब फिर उसी रास्तेपर पैदल जाकर ढूँढ़ता हूँ। संभव है कि कहीं पड़ा मिल जाय। यह कहकर वह तुरन्त ही चल दिये। पत्नी भी घबराकर बिना कपड़े उतारे निःसत्व एवं निश्चेष्ट होकर एक कुर्सीपर बैठ उनकी प्रतीक्षा करने लगी। थक कर पतिदेव सात बजे लौट आये। कंठा कहीं न मिला। थानेमें रिपोर्ट लिखाई, समाचारपत्रोंमें इनाम तक देनेके विज्ञापन निकलवाये, गाड़ियोंके अड्डे तक छान डाले, कहाँ तक गिनावें ऐसे ऐसे स्थान तक ढूँढ़ डाले जहाँ मिलनेकी अंश मात्र भी संभावना न थी।

इस घोर विपत्तिमें भयग्रस्ता पत्नी दिनभर बैठी प्रतीक्षा करती रही। बहुत रात्रि बीत जानेपर पति महाशय कहीं लौटकर घर आये। उनका मुख पीला और मुर्झाया हुआ था। इतना ढूँढ़ने पर भी उन्हें कंठेका पता न चला।

पतिने कहा कि अब तुम अपनी सहेलीको यह लिख दो कि कंठेकी घुंडी टूट गई है। ठीक करके उसको कुछ दिन पश्चात् भेज देंगे। इसी बहानेसे हमको कुछ और समय मिल जायगा।

पतिके आदेशानुसार पत्नीने पत्र लिख दिया।

पूरे एक सप्ताह तक ढूँढ़ने पर भी जब कंठा न मिला तो वे बिलकुल निराश हो गये। इतने ही दिनोंमें लौयज़लकी अवस्था पाँच वर्ष अधिक

प्रतीत होने लगी । अब उनको एक और वैसा ही आभूषण जुटानेकी चिन्ता व्यापने लगी ।

अगले ही दिन आभूषणकी डिबिया लेकर वह उसी जौहरीकी दूकान पर गये, जिसका नाम डिबियापर लिखा हुआ था । परन्तु अपनी बही देखकर उसने कहा—मैंने वह कंठा तो नहीं बेचा । ऐसा मालूम होता है कि केवल डिबिया ही मेरे यहाँसे मोल दी गई है ।

लाञ्छनके दुःख और भयके कारण वह दोनों अधमरेसे हो गये । उन्होंने बीसियों जौहरियोंकी दूकानें छान डालीं; परन्तु वैसा कंठा दिखाई न दिया । अन्तमें जाकर कहीं बड़े बाजारके एक जौहरीके पास वैसा ही हीरेका कंठा मिला । उसका मूल्य अड़तालीस हज़ार फ्रैंक था; परन्तु जौहरी उसको छत्तीस हज़ारहीमें देनेको तैयार हो गया ।

यह देख उन्होंने जौहरीसे प्रार्थना की कि भाई, तुम इसको अभी तीन दिन तक और किसीके हाथ न बेचना । हम इसे अवश्य ही मोल ले लेंगे । यदि हमारा खोया हुआ कंठा फरवरीके अन्त तक भी मिल जायगा, तो तुम इसको हमसे चौंतीस हजार फ्रैंकमें ही मोल ले लेना ।

जौहरीने उनकी यह बात मान ली ।

अठारह हज़ार फ्रैंक तो लौयज़लके पिता ही छोड़ गये थे । शेषको उन्होंने कर्ज़पर लेनेका विचार कर लिया ।

उन्होंने हज़ारका कहीं ऋण किया, पाँचसौका कहीं, पाँच यहाँसे लिये तीन वहाँसे । कहीं रुक्का लिखा तो कहीं अर्थघातक दस्तावेजें ही लिख दीं और भले बुरे सब ही प्रकारके ऋणदाताओंकी ठोड़ियोंमें हाथ डाले ।

बिना सोचे समझे कि यह रुपया मैं पटा भी सकूँगा अथवा नहीं, उन्होंने विविध प्रकारकी कड़ी शर्तोंके रुक्के, पर्चे, दस्तावेजें लिखकर अपने शेष जीवनका नाश कर डाला । ऐसा न करते तो बचनेका अन्य उपाय ही क्या था ? आभूषण न लौटानेसे तो उनका नैतिक पतन हो जाता । संसारकी बुराई भलाईकी बात एक ओर रही, स्वयं उनका अंतःकरण उन्हें उपालंभ देता और एक क्षणको भी शान्तिसे न बैठने देता । इन सबसे बचनेके लिए ही उन्होंने जौहरीकी दूकानपर जाकर छत्तीस हज़ार फ्रैंक देकर कंठा मोल ले लिया ।

श्रीमती लौयज़ल जब कंठा लौटाने गईं, तो श्रीमती फौरेस्टियरने कुछ रुखाईसे कहा कि तुमको इसे जल्दी लौटाना चाहिए था। यदि मुझको ही आवश्यकता पड़ जाती तो क्या होता?

लौयज़ल-पत्नी मनमें घबरा रहीं थीं कि कहीं वह डिबिया न खोल बैठें। ऐसा करनेसे तो बदली हुई वस्तु शीघ्र ही पहिचानी जाती, फिर न मालूम वह क्या कहतीं और क्या समझतीं। बहुत संभव था कि श्रीमती लौयज़लहीको चोर समझ लेतीं। परन्तु उन्होंने यह कुछ नहीं किया, केवल डिबिया उठा कर वैसे ही रख ली।

अब श्रीमती लौयज़लको यह अनुभव करनेका समय आया कि दरिद्रता कितनी भयंकर होती है। वह घबराई नहीं, प्रत्युत वीराङ्गनाकी भाँति उन्होंने सब कुछ सहन किया। इस भारी ऋणका परिशोध कैसे हो, यही चिन्ता उनको सदा लगी रहती थी। नौकर अलहिदा कर दिये गये और मकान बदलकर दूसरे स्थानपर पहिली मंज़िलपर एक अंधेरी कोठरी किरायेपर ले ली गई।

गृहकार्य एवं शिशुपालन कितना दुस्तर होता है, यह अब उनको भली भाँति विदित होने लगा। घीसे चिकनी रकाबी, डेकची तथा अन्य बर्त्तन तक उनको अपने सुकुमार हाथों और गुलाबी नखोंसे साफ़ करने पड़ते थे। कमीज़, रूमाल, चादर तथा अन्य वस्त्रोंको वे अब स्वयं धोया करती थीं। पर्याप्त शक्ति न होनेपर भी जैसे तैसे पानीकी बाल्टियाँ सड़कके नलोंपर जाकर भरतीं या धूर्त दूकानदारोंकी गुस्ताख़ी तक सहन करके वह अब निम्नश्रेणीकी स्त्रियोंकी भाँति बाज़ारमें जाकर स्वयं भोजनकी सामग्री, फल, शाक तक खरीदतीं! उनको तो अब एक एक पैसा बचानेकी चिन्ता हो रही थी।

प्रत्येक मास पति-पत्नी किसी महाजनके ऋणका परिशोध करते, किसीका कागज़ बदलते और किसीसे अवधि बढ़ानेकी ही प्रार्थना करते। पति महाशय अब संध्या समय दूकानदारोंके यहाँ जाकर हिसाब उतारते और कुछ पैसोंकी आशासे आधी आधी रात तक कागज़ोंकी नकलें किया करते थे।

इस तरह जब दस वर्ष बीत गये, तब कहीं जाकर समस्त ऋणका परिशोध

हुआ। मूल, ब्याज, दरब्याज सब कुछ उन्होंने इन दस वर्षोंमें चुका दिया। श्रीमती लौयज़ल अब वृद्धा दीख पड़ती थीं। उनकी दशा भी दीन स्त्रियों-कीसी हो गई थी, अर्थात् बलिष्ठ, कठोर और अनुदार। उनके केश दुर्गन्धित हो गये थे, गाऊन ऊँची रहती थी और हाथ लाल पड़ गये थे। सपाकेसे पानी बुहारते समय उनका स्वभाव अब चिल्लाकर बोलनेका भी पड़ गया था। परन्तु अब भी कभी कभी जब उनके स्वामी दफ्तरमें होते, तो वे खिड़कीके सम्मुख बैठकर उसी सन्ध्याका और उसी नृत्यका ध्यान करने लगतीं जिसमें उनके रूप लावण्यकी भूरि भूरि प्रशंसा हुई थी।

यदि कंठा न खोया होता, तो क्या होता? इस प्रश्नका उत्तर कौन दे सकता है? जीवनकी गति भी कैसी अद्भुत और अस्थायी है। तनिक-से कारणसे हम कैसे बन या बिगड़ जाते हैं!

परन्तु एक दिन रविवारको संध्या-समय पूरे सप्ताहकी थकान मिटानेके लिए वह कंपनी बागमें गई और वहाँपर उनकी दृष्टि सहज एक युवतीपर पड़ी जिसके साथ एक बालक भी था। यह थीं श्रीमती फौरेस्टियर, जो इस समय भी तरुण, सुन्दर एवं लावण्यमयी दीख पड़ती थीं। देखते ही श्रीमती लौयज़ल कुछ विचलित सी हो गईं। इनके मनमें प्रश्न उठा कि क्या इस समय बात करना योग्य है? उत्तर मिला—क्यों नहीं? इन्होंने तो सब ऋण चुका ही दिया, अब भेद खोलनेमें हर्ज ही क्या है। यह विचार कर वह आगे बढ़ीं और बोलीं—"जीन, प्रणाम।"

युवती अपना नाम इस घनिष्ठतासे उच्चारण होते देख, और वह भी एक साधारणसी स्त्रीद्वारा, प्रथम तो श्रीमती लौयज़लकी ओर कुछ काल तक देखती रही, जब इसपर भी न पहचान सकी तो घबराकर बोली—श्रीमती, मैं तो आपसे परिचित नहीं हूँ। आपको भ्रम तो नहीं हो गया है?

"नहीं, मेरा नाम मैथिल्डा लौयज़ल है।"

सुनते ही युवती चीख उठी। मेरी प्यारी मैथिल्डा, अरे तुम ऐसी परिवर्तित हो गई?

"क्या करूँ? अंतिम समय जब मेरी तुमसे भेट हुई थी, उसके पश्चात् मेरी जीवनयात्रा बड़ी कठिन हो गई थी। मुझे अतीव दरिद्र जीवन

व्यतीत करना पड़ा और वह भी तुम्हारे ही कारण।"

"मेरे कारण? क्यों? कैसे?"

"तुम्हें याद होगा कि मैंने तुमसे हीरेका कंठा मंत्री महोदयके यहाँ नाचमें जानेके लिए माँग लिया था।"

"हाँ; तो फिर इससे क्या हुआ?"

"वह मेरे पाससे खो गया।"

"क्या कह रही हो? तुम तो उसको लौटा गई थीं।"

"मैंने तुमको वैसा ही एक दूसरा कंठा लौटाया है, जिसका मूल्य चुकानेमें हमको दस वर्ष लग गये। यह तो तुम जान सकती हो कि हम जैसे निर्धन लोगोंके लिए यह कितना कठिन कार्य होगा। परन्तु ईश्वरकी कृपासे हमने अब सब चुका दिया।"

श्रीमती फौरेस्टियर कुछ क्षण तक स्तंभित रह गईं और फिर बोलीं— "तुमने क्या कहा कि मेरे कंठेके बदलेमें तुम्हें हीरेका कंठा देना पड़ा?"

"और क्या? तुमने नहीं देखा? अरे उनमें विभिन्नता ही न थी, मालूम कैसे पड़ता? इतना कहकर दर्पसे उनका मुख खिल पड़ा। श्रीमती फौरेस्टियरका हृदय यह सुनकर दहल उठा और अतीव समवेदनासे उन्होंने लौयज़ल-पत्नीके हाथ थाम कर कहा—प्यारी मैथिल्डा! तुमने तो गजब कर दिया। अरे मेरा कंठा तो झूठा था। उसका मूल्य अधिकसे अधिक ५०० फ्रैंक होगा।

प्रतीत होता था कि उनका जीवन विलासिताकी सीमाको पार कर गया है। पति महोदयकी तुच्छसे तुच्छ आवश्यकताओंका पत्नीको सदा अत्यन्त ध्यान रहता था और अपने प्रेमद्वारा वह उनको सदा रिझाये रहती थीं। भार्याकी असीम मोहन शक्तिके कारण, विवाहके छह वर्ष उपरान्त भी, श्री लाँटींको ऐसा भान होता था कि हनीमून (विवाहोपरान्त पतिपत्नीकी एकान्त यात्रा) के प्राथमिक दिवसोंसे भी कहीं अधिक, प्रेमसे, मैं अपनी पत्नीको इस समय प्यार करता हूँ।

उनकी दृष्टिमें, भार्याके स्वभावमें नाटक-प्रेम, और नक़ली आभूषण धारण करनेकी प्रवृत्ति, केवल यही दो दोष थे। किसी नवीन 'खेल' के प्रथम बार रंगमंचपर अभिनय होनेका अवसर आते ही पत्नीकी सहेलियाँ उनके लिए 'नाटकका बॉक्स' बहुधा, प्रथमहीसे 'रिज़र्व' करा दिया करती थीं; और इन अवसरोंपर इच्छासे अथवा अनिच्छासे, पति महोदयको लाचार होकर पत्नीके साथ जाना ही पड़ता था; परन्तु दिन भर दफ़्तरमें परिश्रम करनेके पश्चात् नाटकोंमें इस प्रकारकी उपस्थिति इनको बहुत ही खलती थी।

अन्तमें, कुछ काल पश्चात्, श्री लाँटींने अपनी पत्नीसे प्रार्थना की कि मेरे स्थानमें यदि तुम्हारी ही कोई सहेली तुम्हारे साथ साथ नाटकमें चली जाया करे और नाटक समाप्त होनेपर तुमको गृह तक पहुँचा दे, तो मैं बड़ा ही प्रसन्न हूँगा। पतिके इस प्रस्तावको सुनकर, प्रथम तो, पत्नीने इसका घोर विरोध किया; परन्तु बहुत कुछ अनुनय विनय करनेके पश्चात् वह इस बातपर राजी हो गई और पति महोदयको इस प्रकार छुटकारा पानेपर अत्यन्त ही हर्ष हुआ।

इस नाटक-प्रेमके पश्चात् धीरे धीरे आभूषणोंकी ओर भी श्रीमतीकी प्रवृत्ति हो चली थी। वस्त्र तो वह अब भी साधारण और संस्कृत-भाव-प्रदर्शक ही धारण करती थीं; परन्तु सच्चे, हीरोंकी भाँति चमकने वाले, बड़े बड़े नकली रत्न, धीरे धीरे उनके कर्ण-छिद्रोंसे लटकते हुए दृष्टिगोचर होने लगे। इसी प्रकार गलेमें झूठे मोतियोंकी माला, हाथोंमें नकली सोनेकी चूड़ियाँ और केश-कलापमें काचके नकली रत्नादिके जड़े हुए कंघे श्रीमतीके शरीर-देशकी शोभा बढ़ाने लगे।

पति महोदय बहुधा इन बातोंपर खीझकर कह उठते थे कि प्रिये, सच्चे रत्नादिकके आभूषणोंको मोल लेना शक्तिसे बाहर होनेके कारण, यदि तुम स्त्रियोचित नैसर्गिक सुन्दरता और शीलादिके अमूल्य आभूषणों द्वारा ही सुसज्जित रहना उचित समझो, तो अत्युत्तम होगा। परन्तु वह प्रेमपूर्वक मुस्कुरा करके केवल यही उत्तर देतीं कि "मैं लाचार हूँ। आभूषणोंसे मुझे अत्यन्त ही प्रेम है और यही मेरी एक दुर्बलता है। हम अपने स्वभाव किस प्रकार बदल सकते हैं?" और, मोतियोंका कंठा उँगलियोंमें लपेट रत्नादिकके मुखोंकी आभा चमकाकर पुनः यों कहने लगतीं—

"देखो, यह कैसे सुन्दर लगते हैं! कोई भी पुरुष इनको शपथपूर्वक वास्तविक रत्न कह सकता है।"

पत्नीकी इस प्रकारकी बातें सुनकर लॉटी मुस्कराकरके यही कह देते थे कि—प्यारी, तुम्हारा स्वभाव भी (पृथ्वीपर विचरण करनेवाली) 'जिप्सी' जातिके समान अर्ध बर्बर है।

कभी कभी सन्ध्या समय, अग्निके सम्मुख आपसमें गपशप करते समय, पत्नी महोदया, श्री लॉटींद्वारा तुच्छ नामसे संबोधित होकर इन आभूषणोंकी 'मरक्को लैदर'की पेटी चायकी मेजपर रखकर, इन झूठे रत्नोंकी ओर ऐसे आवेशयुक्त ध्यानसे देखती थीं, मानों इनके दर्शन मात्रसे उनको गम्भीर एवं रहस्यमय प्रसन्नता होती हो। ऐसे अवसरोंपर, बहुधा पतिदेवके कंठमें आग्रहपूर्वक कंठा पहिनाकर पत्नी खिल खिला कर हँस पड़ती थीं और यह कह कर कि 'तुम तो अब निरे विदूषकसे प्रतीत होते हो' पतिदेवके अंकमें आ उनका प्रेमपूर्वक चुम्बन करने लगती थीं।

शीतकालमें एक दिन सन्ध्यासमय वह सदाके अनुसार 'औपेरा (गीतिमय नाटक विशेष) देखने गईं और ठंड खाकर रात्रिको घर लौटीं। अगले दिन प्रातःकालसे ही उनको कफ जाने लगा और आठ दिनके पश्चात् फेफड़ोंमें सूजन हो जानेके कारण उनकी मृत्यु हो गई।

श्री लॉटींपर इस घटनाका ऐसा निराशामय प्रभाव पड़ा कि एक ही मासमें उनके केश श्वेत हो गये। इस विछोहके कारण उनकी आँखोंसे अविरत अश्रुधारा बहने लगी; मृत-पत्नीकी मन्द-मन्द मुसकान, शब्द तथा सौन्दर्यका स्मरण होते ही उनके हृदयके टुकड़े टुकड़े होने लगे।

समय बीतनेपर भी शोकका वेग कम न हुआ। बहुधा दफ्तरमें बैठे बैठे जब उनके अन्य साथी 'क्कर्क' सम-सामयिक घटनाओंपर वादानुवाद करनेमें रत होते थे, तब लॉर्टी महाशयके नेत्रोंसे सहसा अश्रुधारा बह पड़ती और उनका हृदयस्थ शोक चित्तद्रावक सिसकियोंद्वारा प्रकट होने लगता था। पत्नीके कमरेमें समस्त पदार्थ उस समय तक उसी भाँतिसे धरे हुए थे जिस प्रकारसे वह उनके जीवन-कालमें रक्खे गये थे। मेज़, कुर्सियाँ, यहाँ तक कि पत्नीके वस्त्र तक, उसी दशामें अपने अपने स्थानपर उनके मृत्यु दिवससे वैसे ही पड़े थे, अणुमात्र भी नहीं हटाये गये थे।

पति महोदयका जीवन भी अब संग्राममय हो चला। उनकी आय, जो पत्नीके जीवन-कालमें संपूर्ण सांसारिक आवश्यकताओंके लिए पर्याप्त होती थी, वही अब उनकी—अकेले पुरुषकी—अत्यन्त आवश्यक जरूर-तोंके लिए भी अपर्याप्त दीखने लगी। उनको अचंभा होता था कि वह देवी इतनी क्षुद्र आयद्वारा किस प्रकारसे सुन्दर एवं बहुमूल्य मदिरा और अपूर्व व्यंजनोंको मोल लेकर असंभवको संभव कर देती थी।

ऋण लेनेके कारण लॉर्टी महाशयकी अवस्था दिन प्रतिदिन गिरने लगी। एक दिन प्रातःकाल जेबमें १ सैंट (फ्रांसीसी सिक्का) तक भी न होनेपर उन्होंने घरके सामानको ही बेचनेकी ठानी। विचार आते ही उनका ध्यान मृत-पत्नीके नक़ली आभूषणोंकी ओर गया। इन 'कपट' पदार्थोंके प्रति जिनको देखकर यह भूतकालमें खीझ उठते थे, इनको अब भी हार्दिक घृणा थी; इनके हृदयमें अब भी द्वेषभाव चला जाता था। प्यारीका हृदयस्थ स्मृतिचित्र इन चीज़ोंके दर्शनमात्रसे कलुषित हो जाता था।

अंतिम रोगावस्थापर्य्यंत पत्नी महोदयाकी ख़रीदारी जारी रही थी। वह नित्य प्रति बाज़ारसे कोई न कोई नवीन रत्न मोल लेकर ही प्रायः सन्ध्या-समय घरको लौटती थीं। बहुत समय तक विचार करनेके अनन्तर पति-देवने 'भारी कंठे' के बेचनेका ही अन्तिम निश्चय किया। क्योंकि नक़ली होनेपर भी उत्तम पच्चीकारीके कामके कारण इसका मूल्य ६ या ७ फ्रैंक-तक मिलना संभव था।

आभूषणको जेबमें डालकर वह किसी विश्वसनीय जौहरीकी दूकान तलाश करनेकी चिन्तासे घरसे निकले। बहुत घूमने फिरनेके पश्चात् एक

ऐसी दूकान अन्तमें दिखाई भी दी; परन्तु उसके भीतर प्रवेश करते ही इतने तुच्छ पदार्थको बेचनेमें अपनी दीनता प्रकट होनेकी आशंकासे उनको किञ्चित् लज्जासी हो आई। जीवन-समस्या विकट होनेके कारण वह पुनः प्रयत्न कर आगे बढ़े और दूकानदारसे बोले—श्रीमन्, इसका मूल्य कितना है?

जौहरीने कंठा हाथमें लेकर कुछ काल पर्य्यन्त परीक्षा करनेके अनन्तर अपने मुनीमको बुलाकर कुछ शब्द दबी जवानसे कहे और फिर उसके पश्चात् आभूषणको पुनः 'डैस्क' पर रखकर आप वहाँसे जरा हटे और कुछ दूर जाकर उसका प्रभाव देखने लगे।

इन विधानोंसे उकताकर श्री लॉटी यह कहने ही वाले थे कि 'मुझसे पूँछिए जनाब, यह तो एक तुच्छ पदार्थ है' कि इतनेमें जौहरी बोल उठा—श्रीमन्, इस कंठेका मूल्य बारह हज़ारसे लेकर पन्द्रह हजार फ्रैंकतक कूता जा सकता है। परन्तु जबतक यह न मालूम हो कि आपके पास यह कहाँसे आया है, मैं इसको खरीदनेमें असमर्थ हूँ।

इन वाक्योंको सुनते ही विधुरकी आँखें पथरा गईं और मुख खुला हुआ ही रह गया। दूकानदारकी बातें उनकी समझमें भलेप्रकार न आईं। अन्तमें उन्होंने अस्फुट स्वरसे कहा—"आप कहते हैं......क्या आप ठीक ठीक कह रहे हैं?" यह सुन दूकानदारने रूखे स्वरसे कहा—किसी अन्य-स्थानपर ले जाकर परीक्षा कराकर देखो कि अन्य पुरुष कितना मूल्य आँकते हैं। मैं इसको अधिकसे अधिक पन्द्रह हज़ारका समझता हूँ। यदि इससे अधिकका कोई ग्राहक न हो, तो मेरे पास आ जाइएगा।

अत्यन्त ही आश्चर्यमें आकर श्री लॉटींने कंठा उठाकर वहाँसे कूँच कर दिया। वह वास्तवमें मनन एवं विचार करनेके लिए कुछ समय चाहते थे।

बाहर आते ही उनको कुछ हँसी सी आई और वह अपने मनमें कहने लगे—"मूर्ख! महामूर्ख! यदि मैं उसके वचनको सत्य समझ लेता! जौहरी भी नकली और असली हीरोंका भेद न समझ सका!"

कुछ ही क्षण उपरान्त वह र्‌यु-डै-लापाई नामक मुहल्लेकी अन्य दूकानमें जा घुसे। इस दूकानके स्वामीने ज्यों ही कंठेको देखा, त्यों ही वह चिल्ला

उठा—"वाह भाई वाह! इसको तो मैं खूब पहिचानता हूँ; यह तो हमारी ही दूकानसे बिककर गया है।"

श्री लॉर्टीने यह सुनकर कुछ घबराहटसे कहा—"इसका मूल्य क्या है?"

"अजी, मैंने तो इसको बीस हजार फ्रैंकमें बेचा था। यदि आप हमको बता दें कि यह आपके पास कहाँसे आया, तो मैं इसको अठारह हज़ारमें, इस समय ही, पुनः वापिस ले लूँगा।"

अब तो लॉर्टी महाशय सुन्न पड़ गये, परन्तु उन्होंने, पुनः साहस कर कहा—परन्तु—परन्तु–इसकी भली भाँति परीक्षा तो कर लीजिए। मैं तो इस क्षण तक, इसको नक़ली ही समझता था। जौहरीने प्रश्न किया—"श्रीमान् आपका नाम क्या है?" लॉर्टीने कहा—मैं आंतरिक विभागके मंत्री महोदयकी अधीनतामें 'क्लर्की' करता हूँ और मेरा निवासस्थान १६ रू-डे-मार्टी नामक मुहल्लेमें है।

दूकानदारने अपने रजिस्टरोंमें देखभाल कर पढ़नेके पश्चात् कहा कि यह कंठा श्रीमती लॉर्टीको १६ रू-डे-मार्टी नामक मुहल्लेके पतेसे २० जुलाई सन् १८७६ को भेजा गया था!

दोनों व्यक्ति अब एक दूसरेकी ओर दृष्टि मिलाकर देख रहे थे। विधुरके मुखसे तो मारे आश्चर्यके शब्द तक न निकलता था, और जौहरीको चोरीका भ्रम हो रहा था। अन्तमें दूकानदारहीने निस्तब्धता भंगकर कहा—क्या आप इसको मेरे पास २४ घंटेके लिए छोड़ सकते हैं? आपको इसकी रसीद दी जायगी, घबराइए मत।

श्री लॉर्टीने शीघ्रतापूर्वक उत्तर दिया—जी हाँ, अवश्य और रसीद जेबमें डालकर वे दूकानके बाहर आ गये।

अब वह उद्देश्यहीन हो गलियोंमें फिरने लगे। हृदयमें, इस समय, तुमुल आन्दोलन एवं गड़बड़ होते हुए भी उन्होंने मुआमिलेको समझनेका—युक्तियोंद्वारा सत्यको पहिचाननेका भरसक प्रयत्न किया। पत्नीके लिए तो इतने मूल्यके आभूषण खरीदना अशक्य था; यह बात असंभव थी; तो क्या फिर यह उपहार था? अवश्य ही यह उपहार ही होगा!

उपहारके अतिरिक्त और यह हो ही क्या सकता है! उपहार? अच्छा तो यह उपहार किसने भेजा? और क्यों भेजा?

राहके बीचमें वह चलते चलते रुक कर खड़े हो गये। एक भयंकर शंका उनके मनमें अब उत्पन्न हो गई थी—क्या मेरी पत्नी......? ऐसी दशामें तो सम्पूर्ण रत्नादिक उपहारहीमें आये होंगे! अब उनके पैरोंके नीचेसे धरती खिसकती हुई-सी, प्रतीत होने लगी और सामनेके वृक्ष गिरते हुए-से दीखने लगे; आँखोंके आगे अँधेरा-सा छा गया और वह हाथ फैला मूर्छित हो पृथ्वीपर गिर पड़े। राहगीरोंने उनको उठाकर एक औषधालयमें जा लिटाया और वहीं उन्होंने चैतन्य-लाभ किया। संज्ञा-लाभ करते ही उन्होंने गृह जानेकी इच्छा प्रकट की, और वाहनद्वारा निजवास-स्थानमें पहुँचते ही वह कमरा बन्द कर रात्रिपर्यन्त रोते रहे। अन्तमें, घोर श्रमके कारण वह अपने बिस्तरपर जा लेटे जहाँ उनको घोर निद्राने आकर दबा लिया।

अगले दिन प्रातःकाल सूर्योदयके पश्चात् उन्होंने ऑफिस जानेके लिए धीरे धीरे वस्त्र पहिरने प्रारम्भ किये। परन्तु इस आघातके अनन्तर कार्य करना अत्यन्त कठिन प्रतीत होनेके कारण उन्होंने अपने मालिकसे लिखकर अनुपस्थितिकी क्षमा-याचना कर ली। अब उन्हें जौहरीकी दूकानपर लौटनेका ध्यान आया। यद्यपि यह विचार कुछ रुचिकर न लगता था; परन्तु इसके साथ ही साथ वह कंठा भी तो इस प्रकारसे छोड़ना संभव न था। अंतमें वह कपड़े पहिर घरसे चल ही दिये।

दिवस भी अत्यन्त मनोहर था। स्वच्छ नीलाकाश नीचे बसे हुए कार्यरत नगरपर हँसता हुआ-सा प्रतीत होता था। फुरसतवाले लोगोंको जेबोंमें हाथ डाले धीरे धीरे टहलते हुए देखकर श्री लॉटींने विचार किया कि वास्तविक सुख धनी पुरुषोंहीको प्राप्त होता है। धन पास होनेपर दारुण दुःखका भी भूल जाना सम्भव है। धनसे मनुष्य मनचीते स्थानपर जा सकता है, और फिर यात्रामें चित्त लग जानेसे उसका शोक भी जाता रहता है। आह! मैं धनिक न हुआ!

इस समय उनको भूख लग आई थी; परन्तु जेब खाली थी। अब

उनको कंठेका पुनः ध्यान आया। अठारह हज़ार और पूरे अठारह हज़ार! कितनी बड़ी रक़म है!

बहुत ही शीघ्र वह रयू-डे-ला-पाई नामक मुहल्लेमें जौहरीवाली उपर्युक्त दूकानपर आगये। अठारह हजार फ्रैंक! बीसियों वार इस प्रचुर धन राशि-को वसूल करनेका उन्होंने मनमें निश्चय किया होगा; परन्तु प्रत्येक वार ही लज्जाने उनको ऐसा करनेसे रोका। इस समय उनको भूख लग रही थी; भूख भी कैसी? अत्यंत ही प्रचण्ड और जेबमें एक सैंट (फ्रान्सका सबसे छोटा सिक्का) भी न था। अन्तिम निश्चय कर, बुद्धिको स्थिति-मनन करनेका अवसर न देनेके विचारसे वह सड़कसे दौड़कर शीघ्रतापूर्वक दूकानमें घुस गये।

देखते ही स्वामीने तो आगे बढ़कर इनको एक कुर्सीपर शिष्टतापूर्वक बैठाया, परन्तु क्लार्क-समुदाय इनकी ओर परिचित कनखियोंसे देखने लगा।

जौहरीने कहा कि "मैंने अनुसन्धान कर लिया है। यदि आपकी इच्छा रत्नादिके बेचनेकी हो, तो मैं वही पूर्वकथित मूल्य अब भी दे सकता हूँ।"

लॉंटींने टूटे-फूटे स्वरसे कहा—"हाँ महाशय, मुझे स्वीकार है।"

उत्तर सुनते ही स्वामीने दराज खोल १८ बड़े बड़े नोट निकाल श्री लॉंटींके हाथोंमें एक-एक कर गिन दिये और उन्होंने उसकी रसीद दूकान-दारके हवाले कर काँपते हुए हाथोंसे नोट जेबमें रख लिये।

दूकानसे उठकर चलते समय कुछ ध्यान आते ही वह पुनः दूकानदारकी ओर (जिसके मुखमंडलपर पूर्वपरिचित मुस्कराहट अब भी वर्त्तमान थी) मुड़कर नत नेत्र किये हुए यह बोले—

"मेरे पास—मेरे पास इसी प्रकारसे आये हुए कुछ और रत्न भी हैं। क्या आप उनको भी ले लेंगे?"

नतमस्तक हो दूकानके स्वामीने कहा—"अवश्य, श्रीमान्!"

"मैं उनको भी आपहीके पास लिये आता हूँ।" यह बात गंभीरता-पूर्वक कह कर लॉंटीं महोदय चल दिये और एक घण्टेके पश्चात् ही समस्त रत्न लाकर दूकानदारको दे दिये।

हीरेके बड़े बड़े कर्णफूल बीस हज़ार फ्रैंकके, चूड़ियाँ पैंतीस हज़ारकी, छल्ले सोलह हज़ारके, पुखराज और पन्नोंकी जोड़ी चौदह हज़ारकी, एक बढ़िया सुवर्णहार चालीस हज़ारका—इस प्रकार सब वस्तुओंके कोई एक लाख तैंतालीस हज़ार कूते गये।

"खैर! एक व्यक्ति तो ऐसा मिला, जिसने अपना सर्वस्व रत्नोंकी खरीदारीहीमें लगा दिया।" जौहरीके इस प्रकार व्यंग कर कहनेपर श्रीलाँटींने गंभीरतापूर्वक उत्तर दिया—"पूँजी लगानेके अपने अपने ढंग ही तो हैं!"

आज उन्होंने वौयर्सी नामक होटलमें जाकर भोजन किया, और बीस फ्रैंक मूल्यवाली बोतलकी मदिराका पान किया। इसके पश्चात् वह किरायेकी गाड़ीमें बैठकर वौई नामक स्थानको चल दिये। रास्तेमें वाहनोंपर जाते हुए अन्य पुरुषोंको घृणाकी दृष्टिसे देखकर वह चिल्लाकर यह भी कह देते थे—मैं भी धनी हूँ। मेरे पास दो लाख फ्रैंक हैं!

सहसा अपने स्वामीका ध्यान आते ही उन्होंने गाड़ी उधरहीको फिरवाई और दफ्तरमें बहुत खुशी खुशी घुसकर कहा—

"श्रीमान्, मैं अपने पदसे इस्तीफा देने आया हूँ। मुझको तीन लाख फ्रैंक दायमें मिले हैं।" फिर अपने पुराने साथियोंसे हाथ मिलाकर और उनको भविष्यके अपने कुछ कुछ मंसूबे बता काफे-एंजलाए नामक प्रसिद्ध होटलमें भोजन करने चल दिये।

यहाँपर एक उच्चकुलाभिभूत पुरुषके पास बैठकर भोजन करते समय श्रीलाँटींने रहस्यपूर्वक उनसे यह भी कह दिया कि मुझे चार लाखकी सम्पत्ति मिली है!

अपने जीवनमें प्रथम वार ही आज उनको नाटक नहीं खला और शेष रात्रि उन्होंने इसी प्रकार आनन्द-प्रमोदमें व्यतीत की।

छह मास पश्चात् उन्होंने पुनः विवाह कर डाला। द्वितीय पत्नी अत्यंत ही सच्चरित्रा थी; परन्तु उसका स्वभाव तीखा होनेके कारण श्रीलाँटींको खूब ही क्लेश होता था।

तिरिया-चरित ।

"स्त्रियाँ!"

"हाँ, तो उनके संबंधमें आप क्या कहते हैं?"

"यही कि कोई कारण हो अथवा न हो, प्रत्येक संभवनीय अवसरपर, इनकी-सी दक्षतासे तो कोई जादूगर भी हमारी आँखोंमें धूल नहीं झोंक सकता। कभी कभी तो हमको छलकर प्रसन्नता प्राप्त करनेकी एक मात्र आशासे ही यह अपने इस व्यापारमें रत हो जाती हैं, और वह भी ऐसे भोलेपन, ऐसी आश्चर्यदायक निर्भीकता और असामान्य दक्षतासे कि उसके चिंतन मात्रसे हमारी बुद्धि चकरा जाती है। समस्त नारीसमाजद्वारा—यहाँ तक कि अत्यन्त खरी, नेक और बुद्धिमती कहलानेवाली स्त्रियोंद्वारा—भी हम लोग प्रातःकालसे लेकर रात्रिपर्यन्त मूर्ख बनाये जाते हैं। कभी कभी ऐसे आचरण करनेके लिए उन्हें वाध्य भी होना पड़ता है, यह बात मैं स्वीकार किये लेता हूँ। मूर्खताके कारण मनुष्योंको दुराग्रह और क्रूरेच्छा-ओंके सदा दौरे होते रहते हैं। घरमें सदा उपहास-जनक आज्ञाएँ देनेका पतिका स्वभाव सा पड़ जाता है; परन्तु कामचार (चापल्य)से ओतःप्रोत होनेके कारण, गृह-नारी धोखा देनेपर भी उसका मनोरंजन कर देती है। इस भयसे कि अधिक मूल्य बताने पर तो रौला करने लग जायँगे, पत्नी अमुक पदार्थका मूल्य कम बताकर ही स्वामीको संतुष्ट कर देती है। कभी कभी भाग्यवश इस मायाजालके प्रकट होनेपर जब पता चलता है कि बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ पड़ने पर भी वह सदा कैसे कैसे कौशल्योंद्वारा सुगमता-पूर्वक बच कर निकल जाती हैं, तो आश्चर्यान्वित होकर हम अवाक् रह जाते हैं और हमारे हृदयोंसे यही उद्गार निकलते हैं कि "इससे प्रथम यह बातें हमारी समझमें क्यों न आईं?"

* * * *

साम्राज्यके भूत-पूर्व मंत्री श्रीयुत ल......अपने उपर्युक्त विचार सम्मुख बैठे हुए कतिपय युवा पुरुषोंको सुना रहे थे। महा व्यसनी होनेपर भी यह महाशय जनताकी दृष्टिमें पूरे सोलह आने जैण्टिलमैन (भद्र) थे।

मंत्री महाशयने अपना सिलसिला न तोड़कर यों कहना प्रारंभ किया—

" एक साधारण नागरिक स्त्रीने मुझको भी एक बार ऐसा उल्लू बनाया था कि उसे याद करनेपर हँसी आती है; परन्तु तुमको सीख देनेके लिए मैं समस्त वृत्त ही सुनाए डालता हूँ—

" उन दिनों मैं परराष्ट्र-सचिवके पदपर था और प्रातःकाल ' शाम-इलाइज़े ' नामक स्थानमें नित्यप्रति खूब दूरतक टहला करता था। मईका महीना था और टहलते समय नवीन कोंपलोंकी सुगंधरंजित वायुको घ्राण करना मुझको अतीव प्रिय लगता था।

" इस प्रकारसे टहलते हुए, अधिक समय न बीता होगा कि मेरा एक कमनीय बालासे नित्यप्रति साक्षात्कार होने लगा। देखते ही मैं ताड़ गया कि इस ललितांगीपर पैरिस नगरीकी छाप लगी हुई है। क्या वह सुंदरी थी ? इस प्रश्नके उत्तरमें ' हाँ ' और ' न ' दोनों कहे जा सकते हैं। यदि यह पूँछते हो कि सुतन्वी थी ? तो मैं उत्तर दूँगा कि वह ललना इससे भी कुछ अधिक थी। उसका कटि-प्रदेश अत्यन्त क्षीण, कँधे खूब सकड़े और छातियाँ भरी हुईं थीं। ऐसी मानविक कठपुतलियाँ मुझको तो ' वीनस डे मिलो '*नामक शवरूप प्रतिमासे कहीं अधिक रुचिकर प्रतीत होती हैं।

" इसके अतिरिक्त, ऐसी स्त्रियाँ तो चलतीं भी ऐसी अतुलनीय विधिसे हैं कि उनके वस्त्रोंकी सरसराहट मात्रसे ही हमारी (अर्थात् पुरुषोंकी) हड्डियोंकी मज्जा तकमें कामना उत्पन्न हो जाती है। मेरे आगेसे होकर जाते समय, यह स्त्री मेरी ओर कुछ कुछ कनखियोंसे देखा करती थी।

* स्फटिककी यह प्राचीन मूर्ति संसारकी सबसे उत्तम प्रतिमा गिनी जाती है। सहस्रों नरनारी पैरिसके अद्भुतालयमें जाकर इसका नित्य प्रति-दर्शन करते हैं।

परन्तु इस प्रकारकी स्त्रियाँ तो भाँति भाँतिसे दृष्टिपात किया ही करती हैं; और उनका आशय, भला, कोई किस प्रकार बता सकता है।

"एक दिन प्रातःकाल उसको एक बैंचपर पुस्तक खोले हुए बैठे देखकर मैं भी उसके पास जा बैठा। कोई पाँच मिनट भी इस प्रकारसे बैठे हुए न बीते होंगे कि हम दोनोंमें मैत्री हो गई। इसके पश्चात् तो प्रत्येक दिवस 'गुड मार्निंग श्रीमती' और 'गुड मार्निंग महाशय' एक दूसरेके प्रति मुस्कराकर कहनेके अनंतर, हम दोनोंकी बातें छिड़ जाती थीं। बातचीत होनेपर पता चला कि वह एक सरकारी क्लार्ककी पत्नी है, और उसका जीवन सदा दुःखमय बना रहता है। सुखके अवसर तो कदाचित् ही उसे प्राप्त होते हैं। चिन्ताओंके कारण उसका चित्त सदा क्लेशित रहता है।

"कुछ तो मूर्खतावश और कुछ मिथ्या अभिमानके कारण मैंने उसको अपना ठीक ठीक परिचय दे दिया, जिसे सुनते ही वह प्रकाश्य रूपसे तो कुछ चौंक सी गई, परन्तु अगले ही दिन मुझसे भेंट करनेके लिए 'मंत्री-विभाग'में आ धमकी। फिर तो धीरे धीरे उसने वहाँ इतना अधिक आना प्रारंभ कर दिया कि नवागन्तुकोंको भीतर प्रवेश करानेवाले नौकरों-तकका ध्यान आकर्षित होनेके कारण वह भी आपसमें काना-फूँसी द्वारा उसको (मेरे क्रिश्चियन नामानुसार) 'श्रीमती लियो' कह कर संबोधित करने लगे।

"अपनेको रोचक एवं चित्ताकर्षक बनानेमें वह ऐसी सिद्धहस्त और कुशल थी कि तीन मास पर्यन्त लगातार प्रत्येक दिन प्रातःकालके समय उससे मिलने पर भी एक क्षणके लिए मेरा मन उससे नहीं ऊबा। परंतु एक दिन मैंने देखा कि अश्रु-वेग रोकनेके कारण उसके दैदीप्यमान नेत्र रक्त वर्णके हो गये हैं और चित्तके प्रथमहीसे किसी और दिशामें व्यस्त होनेके कारण उसके लिए शब्द तक मुखसे निकालना असंभवसा प्रतीत हो रहा है।

"इस घबड़ाहटका कारण जाननेके लिए, बहुत अनुनय विनय तथा प्रार्थना याचना करनेके अनंतर उसने काँप कर अस्फुट शब्दोंमें कहा—'मुझको—मुझको गर्भ रह गया है' और लगी फूट फूट कर रोने। सुनते ही मेरी मुखाकृति बिगड़ गई और जहाँ तक मुझे स्मरण होता है,

अन्य पुरुषोंकी भाँति इस समाचारके मिलते ही मेरा वदन भी पीला पड़ गया।

"इस प्रकार आकस्मिक रूपसे पिता बन जानेकी बात सुनकर मेरे हृदयमें खड्ग-प्रहारके समान कैसी उत्कट पीड़ा उठी, इसका आप लोग अनुभव तो क्या अनुमान भी नहीं कर सकते। प्रथम तो वह बाला ही सहम रही थी; परन्तु अब मेरी बारी आई। मैंने निःश्वास लेकर कहा— परन्तु—परन्तु—तुम्हारा तो विवाह हो चुका है। क्या तुम विवाहिता नहीं हो? उसने उत्तर दिया—'आप ठीक कह रहे हैं! परन्तु मेरा पति तो पिछले दो माससे इटैली गया हुआ है; और अभी कुछ काल तक उसके यहाँ लौटनेकी आशा भी नहीं है।'

"अपनी जिम्मेदारीसे 'येन केनापि प्रकारेण' बचनेकी प्रबल आकांक्षा होनेके कारण मैंने पुनः यों कहा—'तुम शीघ्रतापूर्वक उनके पास तुरन्त चली जाओ।'

"यह बात सुनते ही उसकी कनपटियें तक लाल हो आईं और नत नेत्रोंसे उसने कहा—'यह भी ठीक है-परन्तु—' शेष वाक्य कहनेका या तो उसमें सामर्थ्य ही न था अथवा उसने जान बूझकर पूरा न किया।

"आशय समझकर मैंने अब बुद्धिमानीसे उसके पास मार्गव्यय लिफाफ़ेमें बन्दकर भेज दिया।

"आठ दिनके पश्चात् उसने मुझे 'जिनोआ' नामक नगरसे एक पत्र भेजा और इससे अगले सप्ताहमें फ्लौरेंससे। तदनन्तर लैवौर्न, रोम और नैपिल्ससे भी मेरे पास बहुतसी चिट्ठियाँ आईं।

"पत्रोंमें यही लिखा रहता था कि मेरा स्वास्थ्य अच्छा होते हुए भी मेरी दशा भयंकरसी बनी रहती है। इस दशाके समाप्त होनेतक मैं तुमसे मिलना नहीं चाहती; तुमको भी इस समय मुझसे क्या अनुराग हो सकेगा? मेरे पति तनिकसा भी संदेह नहीं करते। उनका काम-धंधा अभी बहुत काल तक समाप्त न होगा, अतएव शिशु-प्रसवोपरान्त ही मेरा फ्रांसमें लौटना हो सकेगा।

"लगभग आठ मास पश्चात् वेनिस नगरसे मेरे पास कतिपय शब्द लिखे आये कि 'पुत्र प्रसव हुआ है।'

" इसके कुछ काल पश्चात् एक दिन प्रातःकाल वह सहसा मेरे आफिसमें घुस आई। इस समय वह मुझको पहलेसे भी कहीं अधिक नूतन और सुन्दर प्रतीत होती थी। आते ही वह मेरे बाहु-युगलमें आवेष्टित हो गई।

" अब हम दोनोंमें पुनः मैत्री हो गई थी।

" मंत्रित्व छोड़नेके पश्चात् वह र्‍यू-डे-ग्रेनेल नामक मुहल्लेमें आकर मेरे ही मकानके पास रहने लगी। अब नवजात शिशुके सम्बन्धमें भी वह बहुधा मुझसे बातें करने लगी; परन्तु अपना कुछ प्रयोजन न होनेके कारण मैं इन व्यर्थकी बातोंपर कुछ भी ध्यान न देता था। हाँ, कभी कभी पर्य्याप्त परिमाणमें धनराशि उसके हाथोंमें देकर यह अवश्य कह देता था कि 'इसको बचाकर उसके लिए रख लेना।'

" इस प्रकारसे और भी दो वर्ष बीत गये, परन्तु समयके साथ बच्चेके—अपने प्यारे लियोके—सम्बन्धमें कुछ न कुछ कहनेका चाव भी उसके चित्तमें उत्तरोत्तर बढ़ता जाता था। कभी कभी तो वह अपने कमल-नेत्रोंसे अश्रुधारा-विमोचन करती हुई कहने लगती थी कि 'तुमको उसकी तनिकसी भी चिन्ता नहीं है; तुम उसकी सूरत तक भी देखना नहीं चाहते। तुमको क्या पता कि तुम्हारे इस कठोर व्यवहारसे मुझे कितनी मानसिक व्यथा होती है।'

" अन्तमें उसके उलहनोंसे तंग आकर, मैंने एकदिन वचन ही दे डाला कि अगले दिवस प्रातःकालके समय जब तुम बालकसहित शाम-इला-इज़ेमें पधारोगी, तो मैं भी वहाँ अवश्य ही आऊँगा।

" अगले दिन, अपने गृहसे निकल कर मैं यथासमय प्रतिज्ञा पूर्ण करने जा ही रहा था कि मेरे मनमें सहसा एक शंका उत्पन्न हो गई। मनुष्य तो स्वभावसे ही दुर्बल और मूर्ख है। बहुत संभव है कि इसप्रकार मिलन होनेपर उस क्षुद्र प्राणीको—पुत्र कहलानेवाले उस मांस-पिंडको—देखकर मेरे हृदयमें कुछ पितृस्नेह ही उमड़ पड़े।

" इस समय मैंने सिरपर टोप धारण कर लिया था, और हाथोंमें दस्तानें तक चढ़ा लिये थे, परन्तु यह शंका उत्पन्न होते ही मैंने दस्तानोंको डैस्कपर

पटक दिया और टोपको कुर्सीपर फेंक कर मनमें कहा—नहीं। मैं अब कभी न जाऊँगा, न जाना ही बुद्धिमानी है।

"इतनेमें द्वार खुला और मेरे भ्राताने भीतर आकर एक गुमनाम पत्र जो उनको प्रातःकाल ही मिला था, मुझको अपने हाथसे दिया। उसमें लिखा था कि—

'अपने भ्राता, काउण्ट महाशय, श्रीयुत ल—को यह समझा दीजिए कि रयू-कैसैट नामक मुहल्लेकी वह युवती बड़ी धृष्टतापूर्वक उनको उल्लू बना रही है। वह इस नारीके सम्बन्धमें कुछ अनुसन्धान तो करें।'

"आजतक इस रहस्यके सम्बन्धमें किसीसे कुछ भी न कहनेपर, मैंने अब अपने भ्रातासे इसको और अधिक छिपाना उचित न समझा और आदिसे अन्ततक सम्पूर्ण कथा सुनाकर कहा—'मैं तो इस जंजालमें अब और अधिक पढ़कर व्यर्थका कष्ट भोगना नहीं चाहता, परन्तु तुम भद्र-पुरुषोचित रीतिसे उसके सम्बन्धमें यथाशक्य सब कुछ ही जाननेका प्रयत्न कर डालो।'

"भ्राताके चले जानेपर मैं विचार करने लगा कि वह मुझे क्यों कर छल सकती है? हो सकता है कि उसके अन्य प्रेमी भी हों; परन्तु इससे मुझको क्या? वह तो युवती भी है, नूतन भी है, और सुन्दरी भी है—सब ही बातें उसमें मौजूद हैं। इससे अधिक मुझको और किस बातकी आवश्यकता है? वह मुझपर अनुरक्त है और उससे प्रेम करनेमें मुझको अधिक व्यय भी नहीं करना पड़ता है। मेरी समझमें ही नहीं आता कि वास्तवमें यह मामला क्या है।

"मेरा भाई बहुत शीघ्र ही लौट कर आ गया। पुलिसद्वारा उसको, स्त्रीके पति-सम्बन्धी प्रायः समस्त जाननेयोग्य वृत्तोंका पता चल गया था। वह सरकारी गृहविभागमें क्लार्क था। उस विचारशील पुरुषका स्वभाव अच्छा, कार्य प्रशंसनीय, और जीवन युक्ताहार-विहारमय नियमबद्ध था, परन्तु उसका विवाह एक ऐसी अत्यन्त रूपवती स्त्रीसे हुआ था कि जिसका व्यय—या यों कहो कि अपव्यय—स्थितिसे कहीं अधिक बढ़ा चढ़ा था। पुलिसको केवल इतनी ही सूचना थी।

" इसके पश्चात् मेरे भ्राताने उसके गृहपर जाकर अनुसन्धान किया । उस समय सौभाग्यवश वह वहाँपर न थी, कहीं बाहर गई हुई थी। अवसर अच्छा देखकर मेरे भ्राताने स्वर्ण-मुद्राओंकी सहायतासे द्वार-रक्षिकाके मुखमें चाबी भर दी और उसने तुरन्त ही यह कहना प्रारंभ कर दिया कि,— श्रीमती......बड़ी ही योग्य हैं। उनके पति महाशय भी उनहीके अनुरूप हैं। उन्हें अहंकार तो छूकर नहीं गया है, और धनी न होनेपर भी वह अत्यन्त उदार हैं।

" बातोंका सिलसिला जारी रखनेके लिए मेरे भ्राताने पूछा—' उनका वह छोटा लड़का अब कितना बड़ा होगा?'

' महाशय, आप कह क्या रहे हैं! श्रीमतीके तो कोई भी पुत्र नहीं है।'

' क्यों? लियो नामक शिशुका क्या हुआ?'

' नहीं महाशय, आपको भ्रम हो गया है।'

' मेरा तात्पर्य उस बालकसे है जो उनके दो वर्ष हुए ' इटैलीमें ' उत्पन्न हुआ था।'

' महाशय, वह तो कभी इटैली ही नहीं गई । गत पाँच वर्षोंसे तो वह यहाँसे हिली तक नहीं हैं। न तो उनके कोई बालक है; और न कभी उन्होंने कोई यात्रा ही की है।'

" भ्राताकी बातें सुनकर मेरे आश्चर्यका ठिकाना न रहा । परन्तु प्रहसनका अन्तिम दृश्य क्या है, यह मेरी समझमें पूर्णतया अभीतक न आया था। अतएव मैंने अपने भ्रातासे कहा कि मैं अब ठीक ठीक हाल जानकर ही संतुष्ट होऊँगा। मैं कल उसको यहाँ बुलानेका पुनः निमंत्रण देता हूँ; परन्तु मेरे ख्यालमें तुम ही उसका स्वागत करना। बातचीतमें यदि यह सिद्ध हो जाय कि वास्तवमें उसने मुझसे छल किया है तो तुम ही यह दस हज़ार फ्रैंक उसको दे देना, मैं उसका मुख भी भविष्यमें देखना नहीं चाहता। सच तो यह है कि मेरा हृदय तक अब इस व्यापारसे भर गया है, इसका अब अन्त ही होना चाहिए।

" क्या आप मेरे इस कथनपर विश्वास करेंगे कि इससे प्रथम तो इस स्त्री-द्वारा शिशु उत्पन्न होनेके विचार मात्रसे मेरा हृदय दुःखित

हो रहा था; परन्तु अब यह ज्ञात हो जाने पर भी कि कोई संतान उत्पन्न नहीं हुई है लज्जा और झुँझलाहटके कारण मुझको मर्मक्रन्तन व्यथा-सी हो रही थी?

"सम्पूर्ण चिन्ताओं और उत्तरदायित्वसे छुटकारा हो जाने पर भी अपनी ऐसी परिस्थिति होते देख मुझको वारंवार मनमें अपने ऊपर क्रोध आ रहा था।

"अगले दिन प्रातःकाल मेरा भ्राता ऑफिसमें बैठकर उसकी प्रतीक्षा करने लगा। वह भी यथापूर्व हाथोंको फैलाकर उसकी ओर तीव्र गतिसे बढ़ी; परन्तु कुछ ही क्षणमें उसको पहिचानकर सहसा पीछेकी ओर हट गई।

"नतमस्तक हो भ्राताने क्षमा चाही और कहा—'भ्राताके स्थानमें मुझको बैठा देखकर आप कृपाकर क्षमा करें; परन्तु वे आपसे कुछ बातोंका उत्तर लिया चाहते हैं। स्वयं प्रश्न करने और उत्तर सुननेमें मानसिक व्यथा होनेके भयसे उन्होंने यह कार्य मेरे ही सुपुर्द कर दिया है।'

"इसके अनंतर तीव्र दृष्टिसे उस स्त्रीकी ओर देखते हुए भ्राताने सहसा यह कहा—'यह बात हम खूब जानते हैं कि भ्राताद्वारा तुम्हारे कोई सन्तान नहीं हुई है।'

"एक क्षणपर्यन्त तो वह जडवत् हो रही; परन्तु तदनन्तर शीघ्र ही चैतन्य लाभकर, पास रक्खी हुई चौकीपर बैठकर, अपने भाग्यविधाताकी ओर दृष्टि गड़ा, कुछ कुछ मुस्कराते हुए उसने बड़ी सरलतासे यों कहा—'नहीं, मेरे कोई शिशु नहीं है।'

'हमको यह भी मालूम है कि तुम कभी इटैली नहीं गईं।'

"यह वाक्य सुनते ही खूब खिलखिला कर हँसते हुए वह बोली—'नहीं। मैं वहाँ कभी नहीं गई।'

"उत्तर सुनते ही मेरे भ्राताने स्तंभित होकर कहा—'काउण्टने यह धनराशि देकर कहा है कि अब आप हमारा और अपना सम्बन्ध विच्छेद हुआ ही समझिए।'

"धनराशिको जेबमें रखकर उस स्त्रीने अब पुनः गम्भीरतापूर्वक शब्द-

कौशलसे कहना प्रारम्भ किया—'क्या काउण्ट महाशयका मैं अब मुख तक भी न देख पाऊँगी?'

'नहीं, श्रीमती। नहीं।'

"उत्तर सुनकर उसको दुःखसा हुआ; परन्तु उसने आवेशहीन वाणीसे पुनः यह कहा—'यह बहुत ही बुरा हुआ; मेरा तो उनपर अतीव अनुराग था।'

"स्त्रीको अब भी इस विषयमें इस प्रकारसे अड़कर डटते हुए देखकर मेरे भ्राताने मुस्कराकर यह कहा—'भला, आप यह तो बताइए कि इटैलीकी यात्रा और पुत्रोत्पत्ति आदि जटिल कथाओंकी आपने इस प्रकार मानस-सृष्टि किस कारण की?'

"मेरे भ्राताकी ओर आश्चर्यसे दृष्टि गड़ाकर मानो यह कहते हुए कि आपने क्या ही मूर्खताका प्रस्ताव किया है, उसने यह उत्तर दिया—'सुनिए। आप भी बड़े ईर्षालु जीव हैं। क्या आप यह समझते हैं कि मंत्री महोदय काउँट ल—सरीखे धनी, मानी एवं चरित्रभ्रष्ट पुरुषको मेरी-सी साधारण नागरिक युवतीके लिए विना ऐसा कष्ट उठाये तीन वर्ष तक निरन्तर अपने हाथों नचाना संभव था? परन्तु अब तो यह नाटक समाप्त ही हो गया। इसीका मुझको दुःख हो रहा है। यह बात सदा तो भला क्या रहती। खैर, तीन वर्ष तक ही रही, यह भी कुछ कम संतोषजनक नहीं है। आप मेरा संदेशा उनसे अवश्य कहिएगा।' इतना कह कर वह तो उठ खड़ी हुई, परन्तु मेरे भाईने प्रश्न करना बन्द न किया और कहा—'अजी, वह बालक तुम कहाँसे लाकर उनको दिखलातीं?'

"वास्तवमें वह मेरी भगिनीका पुत्र था। मैं थोड़े समयके लिए उस-हीसे माँग कर ले आई थी। मैं शर्त्त लगाकर कहती हूँ कि उसहीने आपसे यह सब बातें कहीं हैं।

'खूब। पर इटैलीसे भेजे हुए उन पत्रोंका क्या रहस्य है?'

"यह प्रश्न सुनकर तो वह हँसते हँसते लोट गई, और पुनः बैठकर कहने लगी—'अजी पत्रोंकी भी तुमने भली बात कही। वह तो एक काव्य है। काउण्ट महाशय क्या वैसे ही परराष्ट्रसचिव बन बैठे हैं?'

"परन्तु—वह बात?"

'वाह! वह तो निजी रहस्य है। मैं ऐसे मुआमिलोंमें किसीकी भी स्थिति संशयग्रस्त करना नहीं चाहती।'

"इतना कहकर, मुँह चिढ़ानेकी भाँति मेरे भ्राताकी ओर मुस्कराकर देखती हुई, अभिवादन कर, अभिनयके अन्तमें अपना पार्ट समाप्तकर विदा होनेवाली नटीके अनुरूप वह स्त्री कमरेके बाहर चली गई।"

अन्तमें काउण्ट महोदयने इस कथासे उपदेशतत्त्व निकालते हुए कहा—"ऐसी कबूतरियोंका भूलकर भी विश्वास न करना चाहिए।"

क्षमा।

—०—

उसका पोषण एक ऐसे कुटुम्बमें हुआ था, जिसका जीवन स्वकीय पारिवारिक घटनाओंतक ही परिमित था। इसके अतिरिक्त उसका शेष संसारसे जरा भी सम्बन्ध न था। मेज़पर बैठकर जिन राजनीतिक घटनाओंपर वादानुवाद किया जाता है, उनका भी ऐसे परिवारोंमें प्रवेश नहीं होता;उनको तो गवर्नमेंटके साधारण परिवर्त्तनोंकी भी इतने विलम्बसे सूचना मिलती है कि वे उनका, सोलहवें लुई (फ्रांसका महान् राजा) की मृत्यु, अथवा महान् नैपोलियनके फ्रांसदेशमें पुनरागमनकी महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओंके सदृश वर्णन करते हैं।

ऐसे परिवारोंमें वेश, भूषा, तथा आचार-विचारसम्बन्धी परिवर्त्तनोंकी भी कोई खबर नहीं रक्खी जाती और प्राचीन परम्पराका ही सदा एकच्छत्र राज्य बना रहता है। पास-पड़ोसमें कोई अनुचित अथवा अन्य प्रकारकी घटना हो जानेपर भी उसका ऐसे परिवारोंमें प्रवेश नहीं होने पाता। द्वार-देहलीपर पहुँचते ही उसकी अकृत्रिम मृत्यु-सी हो जाती है। बहुत हुआ तो माता-पिता किसी दिन सन्ध्या समय दीवारोंके कान होनेके भयसे—एकांतहीमें कुछ कानाफूँसी सी कर लेते हैं। पतिके श्वास रोककर यह कहनेपर कि "सुना तुमने, रिवौई परिवारमें कैसी शोचनीय घटना घटित हो गई है?" पत्नी कुछ यों ही उत्तर देती है कि, "अरे इसका तो किसीको स्वप्नमें भी ध्यान न था। बड़ी ही भयानक बात है।"

ऐसे परिवारोंके बच्चोंके, बड़े होने पर भी, आँखों और हृदयोंपर पट्टी ही सी बँधी रहती है। उनको वास्तविक जीवनका ज्ञान नहीं होता; वे इस बातसे अनभिज्ञ रहते हैं कि संसारमें पुरुषोंके मनमें कुछ होता है और वाणीमें कुछ, लोग कहते कुछ हैं और करते हैं कुछ और। युवा हो जानेपर भी ऐसे परिवारोंके लड़के यह नहीं जानते कि जीवन संग्राममय है; और शस्त्रास्त्रसे सुसज्जित होकर ही पुरुषका मानव-समाजमें शान्तिपूर्वक रहना

संभव है। इनको तो यह गुमान भी नहीं होता कि सीधे पुरुष ही सदा धोखा खाते हैं; सच्ची लगनसे कार्य करनेवालोंहीका मज़ाक़ उड़ाया जाता है और भले मनुष्योंकी दुर्दशा होती है।

कोई कोई पवित्रात्मा तो सत्य, धर्म और आत्म-गौरवके इतने अंधभक्त होते हैं कि उनके ज्ञान-नेत्र, किसी भी घटनासे मृत्युपर्यन्त नहीं खुल पाते। और कतिपय ऐसे भी होते हैं कि जो कपट-जालको देख लेनेपर भी भले प्रकार न समझ सकनेके कारण पुनः वैसी ही गलती करते हैं, और निराश होनेपर अपनेको विधाताके हाथोंकी कठपुतली और कुटिल मनुष्यों तथा विरुद्ध वस्तुस्थितियोंका अभागा शिकार समझकर जीवनका मोह छोड़ निःशंक हो जाते हैं।

सैविगनील दम्पतिने अपनी पुत्री 'बर्था'का विवाह अठारह वर्षकी अवस्था होनेपर पैरिसनिवासी 'जार्ज वारों' नामक एक युवासे कर दिया था। यह महाशय स्टॉक एक्सचैंजमें कुछ धन्धा करते थे। इनकी आकृति सुन्दर और वर्त्ताव अच्छा था। प्रकाश्यरूपसे समस्त वांछनीय गुण विद्यमान होनेपर भी जामाता महाशय आन्तरिक घृणाके कारण अपने सास–ससुरको अंतरंग मित्रमंडलीमें 'पुराने–दकियानूस' कह कर पुकारते थे।

पतिके कुलीन और पत्नीके धनी होनेके कारण यह नवीन जोड़ा पैरिसहीमें बस गया।

मुफस्सिलकी आई हुई अन्य हजारों नारियोंके समान 'वर्था' भी पैरिसमें आकर बस गई; परन्तु इस विशाल नगरीमें रहते हुए भी वह जिस प्रकार यहाँके मानविक जीवन, झूठ-मक्कारी, और रहस्योंसे अपरिचित् थी उसी प्रकार यहाँकी सामाजिक दशा, आमोद-प्रमोद और आचार-विचारोंसे भी अनभिज्ञ थी।

घरके काम-धन्धोंमें फँसी रहनेके कारण उसको अपने मुहल्लेसे बाहरकी घटनाओंकी सूचना तक न होती थी; और पैरिस नगरीके अन्य भागमें भाग्यवश कभी चले जानेपर तो उसको किसी पूर्वापरिचित एवं अज्ञात नगरकी लम्बी और कष्टप्रद यात्राके समान प्रतीत होता था। वहाँसे लौटनेपर वह पतिसे सन्ध्यासमय उसका जिक्र छेड़ कर कहती थी—

"आज मैं समुद्र-तटस्थ बाँधपर गई थी।"

वर्षमें केवल दो या तीन बार, पतिके साथ नाटक-अभिनय देखनेपर ही उसके हृदय-पटलपर ऐसा गहरा प्रभाव पड़ता था कि उनकी स्मृति तक कभी शिथिल न होती थी; और बहुत काल बीतनेके अनन्तर भी परिवारमें उनहीके चरचे होते रहते थे।

कभी कभी तो अभिनयके तीन मास पश्चात् भी वह सहसा खिल खिलाकर हँस पड़ती और पतिको सम्बोधन कर कहने लगती थी—"अजी तुम्हें उस मुर्गेकी भाँति बाँग देनेवाले जनरलवेशधारी 'नट' की भी याद है?"

इसकी मित्रता अपने निकटके सम्बन्धी केवल दो कुटुम्बों तक ही परिमित थी। वह उनको 'मार्टिन' और 'माइकेल' परिवार कहकर पुकारती थी।

पति महाशय भी अपना जीवन पूर्ण स्वतन्त्रतासे बिताते थे। घरमें आने तकका उनका कोई समय नियत न था—जब चाहते आजाते थे; कभी कभी तो काममें फँसे रहनेका बहाना कर वह प्रातःकाल पर्य्यन्त घरमें न आते थे। यह बात भली भाँति जाननेके कारण कि पत्नीके पवित्र एवं छल-छिद्ररहित, सरल हृदयमें किसी प्रकारकी शंका तक उत्पन्न नहीं हो सकती थी, वह उसको अपनी अनुपस्थितिका पूरा ब्यौरेवार वृत्तान्त तक न बताते थे।

परन्तु एक दिन प्रातःकाल पत्नीके नाम एक गुमनाम चिट्ठी आई। देखते ही उसपर मानों सैकड़ों बिजलियाँ पड़ गईं। पत्र-प्रेषकने सत्यसे प्रेम, पापसे घृणा और उसको सुखी करनेकी उत्कट इच्छा, केवल इन तीन हेतुओंसे प्रेरित हो पत्र लिखनेकी बात बतलाई थी। परन्तु अत्यन्त सरल हृदय होनेके कारण वह न तो इस गुमनाम पत्रप्रेषककी धूर्तताहीको समझ सकी और न उसने पत्रहीको घृणाकी दृष्टिसे देखा।

पत्र पढ़नेपर उसको पता चला कि उसका पति गत दो वर्षोंसे श्रीमती 'रोज' नामक एक युवती-विधवाके प्रेमपाशमें फँसनेके कारण, वहींपर—उसहीके निवास-स्थानमें—सन्ध्या समय प्रत्येक दिन जाता है।

बेचारी 'बर्था' न तो अपने दुःखको प्रकाशरूपसे छिपाना ही जानती थी, और न वह पतिदेवकी चाल-ढालकी 'खुफिया' की भाँति जाँच ही कर सकती थी। अतएव भोजनके समय पतिके गृह-प्रवेश करते ही यह पत्र उनकी ओर फेंक, रोती हुई वह अपने शयनागारमें चली गई। परिस्थितिपर विचार करने और उत्तर तयार करनेका अब उनको यथेष्ट समय मिल गया। सब ठीक-ठाककर वह पत्नीके शयनागारकी ओर चले और उन्होंने द्वार खटखटाया। द्वार तो एक क्षणमें खुल गया; परन्तु पत्नी उनसे आँखें न मिलाती थी। यह देख वह कुछ कुछ मुस्कराये और वहाँ बैठकर पत्नीको अपने घुटनोंकी ओर खींच कुछ कुछ विनोद-भरे स्वरमें कहने लगे—

"प्यारी, श्रीमती 'रोज़े' मेरी वास्तवमें मित्र हैं, परन्तु उनको तो मैं गत दश वर्षोंसे जानता हूँ; वे अत्यंत ही सच्चरित्रा हैं। उनके अतिरिक्त मेरी अन्य बीसियों व्यक्तियोंसे जान-पहिचान है; परन्तु तुमको तो नये व्यक्तियोंसे परिचय प्राप्त करनेकी, मित्रमंडलीमें बैठनेकी या और किसी अन्य कार्यविशेषमें भाग लेनेकी चाह ही नहीं है; इसी हेतुसे मैंने उनका कभी आजपर्यन्त तुमसे ज़िकर तक नहीं किया। परन्तु अब मैं इन कुत्सित आरोपोंका अन्त ही किये देता हूँ। मेरी इच्छा है कि तृतीय प्रहरके जलपानके पश्चात् तुम मेरे साथ इस सतीके घर चलो। मुझे विश्वास है कि मेरी भाँति तुम्हारी भी, उनसे बहुत शीघ्र मित्रता हो जायगी।"

यह सुनते ही, पत्नीने पतिको प्रेमपूर्वक आलिंगन कर लिया, और स्त्रियोचित उत्सुकताके कारण—जो एक वार जागृत हो जानेपर पुनः शान्त नहीं हो सकती—इस अपरिचित विधवाके घर जानेको, वह कुछ कुछ ईर्षा होते हुए भी तयार हो गई। इस समय उसके मनमें यह विचार भी सहसा उत्पन्न हो गया कि भयका कारण जानते ही, उसका उपाय या प्रतीकार भी समझमें आ जाता है।

एक भव्य एवं चित्ताकर्षक मकानके चौथे मंजिलमें उन्होंने प्रवेश किया। पाँच मिनट पर्यन्त प्रतीक्षा करनेके पश्चात् एक गोल कमरेका, जिसमें पर्दे पड़े रहनेके कारण अँधेरा हो रहा था, दर्वाजा खुला और एक कृष्णवर्ण, क्षुद्राकृति, मोटी युवती आश्चर्यसे हँसती हुई-सी बाहर आई।

जॉर्जने दोनोंका परिचय कराते हुए कहा—' यह मेरी सहधर्मिणी हैं। ' और ' आप श्रीमती ज्यूली रोज़े हैं। '

सुनते ही आश्चर्य और हर्षसे कुछ कुछ शब्द करती हुई वह युवती विधवा हाथ पसारे आगेको दौड़ी और कहने लगी—" मुझे कभी इसकी आशा तक न थी, कि ' वारों ' महाशयकी धर्मपत्नीसे भी कभी इस प्रकारसे परिचय होगा, क्यों कि मैंने तो यह सुन रक्खा था कि आप किसीसे मिलना तक नहीं चाहतीं। आपसे मिलकर मुझको अत्यन्त ही हर्ष हुआ। जॉर्ज (यह नाम श्रीमतीने बहिनकी भाँति परिचित स्वरसे कहा था) से अत्यन्त स्नेह होनेके कारण मेरी इच्छा तो आपसे भी परिचयद्वारा दृढ़ मैत्री स्थापन करनेकी हो रही थी।"

एक मास भी बीतने न पाया था कि इन दोनों नवीन सहेलियोंमें इतनी गाढ़ी मैत्री हो गई कि उनका पृथक् करना भी असंभव हो गया। दोनों एक दूसरेसे अब प्रतिदिन मिलतीं और कभी कभी तो दिनमें दो बार मिलन हो जाता था। संध्याका भोज भी दोनोंका एक ही स्थानपर होता था; कभी एकके घर और कभी दूसरीके घर। जॉर्जने भी घरसे बाहर रहना छोड़ दिया। अब वह कभी कामकी अधिकताकी शिकायत नहीं करते थे। उन-ही-के शब्दोंमें उनको अब, अपने ही घरमें अँगीठीके पास, बैठना अच्छा लगता था।

अपनी सहेलीके सहवासमें अधिक काल बितानेकी इच्छासे श्रीमती रोज़ेके मकानके एक मंजिलमें कुछ काल पश्चात् एक स्थान खाली होते ही ' वारों-पत्नी ' तुरंत ही घर-वार सहित उसीमें आ विराजीं। और दो वर्ष पर्यंत—पूरे दो वर्ष बीत जानेपर भी—उनकी मैत्रीके प्रकाशमें कोई सन्देहका काला बादल उत्पन्न नहीं हुआ। दोनोंका स्नेह मन और हृदयका बन्धन था अर्थात् संपूर्ण, कोमल और भक्तिमय। बर्थाके लिए तो ज्यूलीके नामोच्चारके विना किसी बातका कहना तक असंभव था। उसकी आँखोंमें तो श्रीमती ' रोज़े ' सर्वांगपूर्ण थीं। उनमें कोई कोर कसर न थी।

ऐसी सखीको पाकर अब वह संपूर्णतया सुखी थी; उसके चित्तमें शान्ति थी और किसी बातकी अभिलाषा न थी।

परन्तु इतनेमें श्रीमती ‘रोज़े’ को ज्वर आ गया। बर्था अब निरन्तर उनहीके पार्श्वमें बनी रहती, यहाँ तक कि दुःखके कारण रात्रिको भी वहाँसे न हटती थी। यह दशा देख पतिदेवका भी धैर्य छूट गया।

एक दिन प्रातःकाल डाक्टर महाशयने, रोगीको देखनेके उपरान्त जॉर्ज तथा जॉर्ज-पत्नीको एक ओर ले जाकर ‘ज्यूली’ की भयंकर स्थिति भले प्रकार जतला दी।

डाक्टरके बिदा होते ही एक-दूसरेके सम्मुख बैठे हुए पति-पत्नीके नयनोंसे, विषादके कारण, अश्रुधारा बह चली। रोगीके पार्श्वमें दोनोंने उस रात्रिको जागरण किया। बर्था वारम्वार अपनी प्रिय सहेलीका मुख चुम्बन कर रही थी, और बिस्तरके नीचेकी ओर खड़े हुए जॉर्ज महाशय रोगीके दुर्बल मुख-मंडलकी ओर टकटकी बाँधे देख रहे थे।

अगले दिन उसकी दशा और भी बिगड़ गई।

परन्तु सन्ध्यासमय रोगीने अपनी दशा कुछ अधिक अच्छी बतलाई और अपने मित्रोंको दृढतापूर्वक भोजन करने भेज दिया।

खिन्न मनसे दोनों आकर अपने भोजनागारमें बैठ तो गये; परन्तु भोजन करनेकी किसीको इच्छा तक न होती थी। इतनेमें दासीने आकर एक पर्चा जॉर्जके हाथमें दिया। उन्होंने उसे खोला और पढ़ते ही वे मृत्युकी भाँति पीले पड़ गये। अब वह मेज़से उठ बैठे और भर्राई हुई आवाज़से यह कह-कर शीघ्रतापूर्वक अपने कमरेकी ओर टोप लेने चल दिये कि—

“मेरी तनिक प्रतीक्षा करना। तुम्हें यहीं बैठा छोड़कर मैं जा रहा हूँ। दस मिनटमें अभी लौटकर यहाँ आता हूँ। तुम मुझे ढूँढने कहीं मत जाना।”

बर्था बैठे बैठे उनकी प्रतीक्षा करने लगी। बेचारी अब एक और संशयका शिकार हो रही थी; परन्तु सीधी तथा सरलहृदया होनेके कारण ही सहेलीके कमरेमें उसने पुनः लौटकर जाना न बिचारा।

बहुत काल बीत जानेपर भी जब पति महाशय न लौटे; तो सहसा उसके मनमें विचार उत्पन्न हुआ कि चलो जाकर एक वार उनकी बैठक

तो देख आऊँ, भला दस्ताने भी रक्खे हैं या नहीं। इससे ही पता चल जायगा कि वह कहीं बाहर गये हैं या यहीं-कहींपर हैं।

आखें उठाते ही वह तो उसे दूर-ही-से दीख गये और उनके पास ही एक मसोसा हुआ कागजका टुकड़ा पड़ा हुआ था जो किसीने शीघ्रताके कारण वहाँ फेंक दिया था।

देखते ही वह पहचान गई कि यह तो वही पर्चा है, जो जॉर्जके पास अभी आया था।

देखते ही उसके हृदयमें जीवनमें प्रथम वार ज्वालाके समान प्रबल प्रचंड इच्छा उत्पन्न हुई कि इसको पढ़कर पतिके इस प्रकारसे चले जानेका कारण मालूम कर लूँ। उसके आत्माने इच्छाशक्तिको रोकना भी चाहा; परन्तु अंतमें भयानक एवं सर्वभक्षी लालसाहीकी जय रही। उसने पर्चा उठा लिया, और उसकी सिलवटें निकालकर कंपायमान हस्तसे पैंसिल-द्वारा लिखी हुई ज्यूलीकी लिखावटको पहिचानकर पढ़ा—"मैं मरी जा रही हूँ। प्यारे, एक बार अकेले आकर मेरा चुम्बन कर लो।"

'ज्यूली'की भावी मृत्युकी चिन्ता होनेके कारण पहिले तो उसकी समझ-ही-में न आया कि इसका आशय क्या है। परन्तु फिर सहसा बिजलीकी चमककी भाँति इन वाक्योंका ठीक ठीक आशय उसकी समझमें भले प्रकार आ गया। इस पैंसिलसे लिखे हुए नोटने उसके जीवन-पर एक अपूर्व एवं भयंकर प्रकाश डाल दिया। वह कलंकित करनेवाला सत्य, वह समस्त कपट-व्यवहार, वह मिथ्या आचरण आज सबका ही नग्न स्वरूप उसने भली भाँति देख लिया। अब उसकी समझमें आया कि किस प्रकारसे वर्षों तक धोखा देकर उसको इन व्यक्तियोंने कठपुतलीसा बना रक्खा था। सन्ध्या समय उसने पुनः उन दोनोंको लैम्पके प्रकाशमें एक दूसरेके पार्श्वमें बैठकर वही पुस्तक पढ़ते हुए, और प्रत्येक पन्नेके अन्तमें एक दूसरेकी ओर कनखियोंद्वारा देखते हुए देखा।

यह दृश्य देखकर उस बेचारीका दुःखित, संतप्त और रुधिर-स्नावित हृदय भयंकर नैराश्यके असीम उदधिमें संपूर्णतया नीचेको बैठ गया। अब

पैरोंकी आहट निकट आती हुई प्रतीत होने लगी और वह भागकर अपने कमरेमें बंद हो बैठ गई।

इतनेमें पतिने आकर पुकारा—

"शीघ्रतासे आओ। श्रीमती रोज़ेकी मृत्यु हुआ चाहती है।" बर्था दरवाजा खोलकर बाहर आई और काँपते हुए ओठोंसे बोली—"तुम ही वहाँ जाओ, उनको मेरी आवश्यकता नहीं है।" तीव्र दुःखके कारण मूर्खकी भाँति उसकी ओर देखते हुए पतिने पुनः वही दोहराया—"शीघ्रता करो। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि उसकी मृत्यु निकट है।" बर्थाने उत्तर दिया—"तुम तो उसके स्थानमें मेरी मृत्यु चाहते होगे।"

अब उनकी समझमें आया कि क्या गुआमिला है और वह अकेले ही मरणासन्न स्त्रीके बिस्तरके पास जाकर बैठ गये।

पत्नीके दुःखकी संपूर्णतया उपेक्षाकर, उन्होंने निर्लज्ज होकर प्रेयसीका शोक मनाया। पत्नीने यह देख उनसे बात करना तो क्या, उनकी ओर देखना तक छोड़ दिया। घृणा, क्रोध, और मानके कारण अब वह एकान्त-वास कर दिनरात ईशवंदनामें रत रहने लगी।

पति-पत्नी अब भी एक ही घरमें रहते थे; परन्तु भोजनके समय एक दूसरेके सम्मुख बैठनेपर भी निस्तब्धता और नैराश्यका वायुमंडल पूर्ववत् बना रहता था।

धीरे धीरे पतिके शोकका आवेग प्रथमकी भाँति तीव्र न रहा; परन्तु पत्नीने फिर भी उनको क्षमा नहीं किया।

इस प्रकार दोनोंहीके जीवन, अब कठिन और विषाक्त हो गये थे।

प्रायः एक वर्ष पर्यन्त दोनोंका वर्त्ताव एक दूसरेके प्रति अपरिचित व्यक्तिकी भाँति रहा, मानों एकने दूसरेको कभी देखा ही न था। बर्था-की तो प्रायः बुद्धि ही जाती रही थी।

एक दिवस प्रातःकाल वह बहुत तड़केसे उठकर कहीं बाहर चली गई और आठ बजे श्वेत गुलाबके फूलोंका एक बड़ा भारी गुच्छा हाथोंमें लिये घरको लौटी।

आते ही पतिसे कहलवाया कि मैं तुमसे कुछ कहना चाहती हूँ।

चिन्तासे व्याकुल होकर पति महाशय आये। पत्नीने कहा—"हम दोनों साथ चलेंगे, कृपाकर इन फूलोंको तुम उठा लो; मुझे यह बहुत भारी लगते हैं।" अब गाड़ीमें बैठकर दोनों समाधिस्थल (कबरिस्तान) की ओर चले। द्वारपर गाड़ी रुकी और पत्नीने उतरकर आँसू-भरे नेत्रोंसे पतिकी ओर देखकर कहा—"जॉर्ज, मुझे उसकी समाधिपर ले चलो।"

सुनकर पति महाशय काँपने लगे और ठीक ठीक आशय न समझनेपर भी फूलोंको लिये हुए उसी ओरको चल पड़े। अन्तमें स्फटिकके एक सलीबकी ओर इंगितकर विना कोई शब्द उच्चारण किये वह रुक गये।

पतिके हाथोंसे फूलोंका गुच्छा ले पत्नीने घुटनोंके बल झुककर उसको समाधिस्थलपर रख दिया और स्वयं मौन हो हृदयसे प्रार्थना करने लगी।

पीछेकी ओर पति महोदय खड़े थे; अतीतकी स्मृतिसे उनका हृदय भी भर आया।

प्रार्थना करके वह उठी और अपने हाथोंको उनकी ओर फैलाकर बोली—"यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो हम दोनों अब भी मित्र हो सकते हैं।"
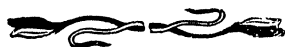
मारटाइन ।

यह एक रविवारकी बात थी । वह गिर्जाघरसे प्रार्थनाकर गलीकी राह अपने घरको लौट रहा था कि इतनेमें उसको 'मारटाइन' भी आगे आगे घरको जाती हुई दिखाई दी ।

मारटाइनके साथ उसका पिता भी धनी किसानकी भाँति ठस्सेसे जा रहा था; कुर्त्तेके स्थानमें उसके तनपर अब भूरे रंगके कपड़ेका कोट तथा सिरपर चौड़े किनारेवाला 'हैट' शोभायमान था ।

मारटाइन, सुनहरी किनारीदार चोली पहिने हुए—जिसके कारण उसकी कमर अधिक पतली तथा कंधे अधिक चौड़े प्रतीत होते थे—तनी और कुछ झूमती हुई सी अपने पिताके साथ जा रही थी । उसका टोप फूलोंसे सजा हुआ था । वायु तथा प्रकाशके कारण उसकी गोल एवं नरम गर्दनका पिछला भाग और भी अधिक लाल हो गया था और उसपर इधर उधर हवामें फहराते हुए कुछ बाल अद्भुत शोभा दे रहे थे ।

विनौयने केवल उसकी पीठ ही देखी थी । परन्तु इस चिरपरिचित मुखसे फिर भी उसे अत्यन्त ही प्रेम था; कहना न होगा कि इससे पूर्व उसने, इस बालाके मुखको इससे अधिक ध्यानपूर्वक कदाचित् ही देखा हो ।

'मारटाइन' को इस प्रकार सम्मुखसे जाते देख उसके मुखसे सहसा यह शब्द निकल पड़े "अहा ! यह कैसी सुन्दरी है ।"

हृदयस्थ प्रेमोल्लासके कारण विनौय मनमें वारम्वार उसकी चाल-ही-की प्रशंसा करता जाता था । युवकके मनमें बालाके मुख देखनेकी लालसा हो सो बात न थी; वह तो केवल उसके आकार-प्रकारपर ही लट्टू हो मन ही मन कहता था—क्या ही सुन्दरी है !

मारटाइनके पिताका नाम था 'जें-मारटाइन' और उनके निवासस्थानको 'ला-मारटिनियरी' कहते थे ।

अपने घरमें घुसनेके लिए, दाहिने हाथको मुड़ते ही मारटाइनकी दृष्टि पीछे आते हुए विनौयपर पड़ी और उसका अद्भुत रूप देखकर वह कुछ अचरजमें भी पड़ गई, परन्तु इसपर कुछ विचार न कर उसने पुकार-कर विनौय महाशयको प्रणाम कहा और विनौयने भी उसका उचित उत्तर दे अपनी राह पकड़ी।

घर पहुँचते पहुँचते भोजनका समय हो जानेके कारण विनौय सीधा भोजनकी मेज़पर जाकर माताके सम्मुख दूसरी ओरको, खेतपर काम करनेवाले मजदूरों और किसानोंके बराबर बैठ गया। नौकरनी मेज़पर सूप (रसेदार मांस) रखकर मदिरा लेने चली गई।

कुछ ही चमचे 'सूप' पीकर उसको प्याली खिसकाते देख माताने कहा—"बेटा! तुम्हारा चित्त कैसा है! कुछ विकार तो नहीं हो गया?" विनौयने कहा—"अम्मा, मेरे पेटमें मरोड़ी सी मालूम पड़ती है और इसी हेतु मेरी भूख तक जाती रही है।"

औरोंको भोजन करता देख उसने पुनः रोटीके टुकड़े तोड़कर धीरे धीरे अपने मुखमें रखने प्रारंभ किये; परन्तु उसको तो उनके चबानेमें भी महा कष्ट होता था। इस समय भी उसके मनमें यही विचार भर रहा था कि वह क्या ही सुंदरी है!

सहसा उसके मस्तिष्कमें यह विचार आया कि आजपर्यंत मैं इसकी ओर क्यों आकर्षित न हुआ? एक ही दिनमें यह कैसा परिवर्तन हो गया? इस विचार-धारामें पड़नेके अनंतर तो बेचारेको भोजन करना और भी अधिक दुस्तर हो गया और उसने भोजनसे हाथ ही खींच लिया।

पुत्रको इस प्रकार हाथ रोकते देख, माताने फिर खानेका आग्रह करके कहा कि भोजनकी चाह न होनेपर भी, कुछ न कुछ अवश्य ही खाना चाहिए, इससे भी लाभ ही होता है।

माताके कहनेपर दो-चार ग्रास और खाकर पुत्रने यह कहकर थाली सरका दी कि अब तो मुखमें कुछ भी नहीं चलता दीखता।

भोजन समाप्त कर वह खेतोंकी ओर चल दिया और वहाँ जा मज़दूरोंको यह कहकर घर जानेकी छुट्टी दे दी कि तुम चले-जाओ, ढोरोंको मैं ही हाँक लाऊँगा।

रविवारके कारण देहातमें भी सुनसान था। केवल कुछ गायें दूरके खेतोंमें जहाँ तहाँ, पेट तनाये धीरे धीरे पागुर करती हुई, भरी दुपहरियामें फिर रही थीं। किसी किसी खेतमें जुतासेके छोरपर खुले हुए हल पड़े थे और कहीं कहींपर जुती और लौटी हुई खेतकी धरतीमें तुरतके बोए हुए गेहूँ और जौकी भूरी कंसें निकल रही थीं।

मैदानमें प्रचंड वायु बहनेके कारण अनुमान होता था कि सूर्यास्त होते ही संध्या समय ठंड पड़ने लगेगी। एक खाईपर जा विनौय टोपको घुटनोंपर धरकर बैठ गया, मानों उसको मस्तिष्कके शीतल करनेकी आवश्यकता हो रही थी। उस निर्जन स्थानमें मनको सम्बोधितकर अब उसने पुनः यह कहना प्रारंभ किया—यदि सुन्दर स्त्रीकी कामना हो, तो वह अवश्य सुन्दरी है।

रात्रिमें शयन करते समय, और प्रातःकाल उठते समय, यही विचार उसके मनमें चक्कर मार रहा था। एक क्षणको भी चैन न पड़ता था।

उदास या असन्तुष्ट न होनेपर भी, उसको अपनी पीड़ा ठीक ठीक समझमें न आती थी। किसी अज्ञात वस्तुने उसको जकड़सा रक्खा था, या यह कहना चाहिए कि उसके मनपर ऐसा अधिकार कर लिया था कि जिससे उसका निस्तार न था, और जिसके कारण उसके हृदयमें वारम्वार एक विचित्र प्रकारकी गुदगुदी उठ रही थी। जिस प्रकार बंद कमरेमें मधु-मक्खीके भिन भिनकर इधर उधर उड़नेसे हमारे मनमें एक कुढ़न-सी पैदा हो जाती है और उसकी ध्वनि हमारे मस्तिष्कमें बैठ-सी जाती है। मधुमक्षिकाके बैठ जानेपर तो हम उसको भूल जाते हैं; परन्तु दोबारा शब्द होते ही हमारी गर्दन पुनः ऊपरकी ओर स्वयमेव ही उठ जाती है। न तो हम उसको पकड़ सकते हैं, न कमरेसे निकाल सकते हैं, न मार सकते हैं और न उसको चुप ही कर सकते हैं। पल भरके लिए वह बैठ जाती है और फिर वैसा ही शब्द करने लगती है।

ठीक उसी मधु-मक्खीकी भाँति, मारटाइनकी स्मृति भी विनौयके मनकी शान्तिको वारम्वार भंग कर रही थी।

मारटाइनके दर्शनकी लालसा उत्पन्न होनेपर 'मार्टिनियरी'के कई चक्कर

लगानेके बाद, विनौयको दो सेव-वृक्षोंके बीचमें तनी हुई डोरीपर, कपड़े सुखाती हुई, अपनी प्रिया दीख पड़ी।

गर्मीके कारण इस समय केवल छोटी कुर्ती और घाघरा ही पहिरे हुए होनेसे तौलिया सुखाते समय उसके आकारका उतार चढ़ाव पूर्ण रूपसे दिखाई पड़ता था। गृह-सीमापर लगी हुई झाड़ियोंकी आड़से खड़ा खड़ा विनौय यह सुंदर दृश्य देखता रहा और उसके चले जानेके उपरान्त भी एक घंटेभर वहाँसे न हटा। अन्तमें जैसे तैसे घर आया; परन्तु उस सुन्दर मूर्त्तिने उसके हृदयपर अब पूर्ण रूपसे अधिकार कर लिया था।

सम्पूर्ण मास बीत जानेपर भी 'मारटाइन' उसके मस्तिष्कसे न निकली। अब दशा यह हो गई थी कि उसके नामोच्चारके श्रवण मात्रसे विनौयका हृत्कम्प होने लगता था। न तो दिनमें उसको भूँख ही लगती थी और न रात्रिको नींद ही आती थी।

रविवारको प्रार्थनाके समय, गिरजाघरमें भी, उसकी दृष्टि सदा मारटा-इनपर ही रहती थी। उसने भी अब इसको देख लिया और अपने प्रति अनुराग करते देख वह भी कभी कभी मुस्किरा दिया करती थी।

एक दिनकी बात है कि सन्ध्यासमय राहमें उसको जाता देखकर वह खड़ी हो गई। विनौय भी यह देखकर उससे वार्त्तालाप करनेका दृढ संकल्प कर भय और आवेशमें तनिक उसकी ओर बढ़ा; परंतु उसके रुद्ध कण्ठसे केवल ये ही वाक्य, कुछ कुछ अटकते हुएसे, निकले कि "देखो मारटाइन, यह बात अब अधिक काल तक नहीं चल सकती।" उसको चिढ़ानेके लिए मारटाइनने कहा—"कौनसी बात अधिक कालतक नहीं चल सकती?'

"यही कि दिन रातमें जितने घंटे होते हैं, उन सबमें मैं तुम्हारा ही ध्यान करता हूँ।

मारटाइनने कमरपर हाथ रखकर कहा—"मैंने तो तुमसे ऐसा करनेके लिए कभी अनुरोध नहीं किया।"

इसपर विनौयने हड़बड़ाकर कहा—"नहीं तुम ही इसका कारण हो। अब न तो मुझको नींद आती है और न भूँख लगती है। न मेरे मनमें शान्ति है और न मेरा चित्त ही किसी कार्यमें लगता है।"

"तुम्हारा इलाज क्या है? किस प्रकार चंगे होगे?" मारटाइनके इन प्रश्नोंसे तो बेचारे विनौयकी आँखें पथरा-सी गईं। वह हाथ लटकाए और मुँह बाए जैसाका तैसा खड़ा रह गया और मारटाइन उसके पेटपर मुक्की मार भाग गई!

इसके पश्चात्, वह दोनों, गलियों और रास्तोंमें एक दूसरेसे मिलने लगे। संध्यासमय घोड़ोंको हलसे खोलकर घरको लाते हुए विनौयका गउओंको चराकर लौटती हुई मारटाइनसे अब खेतोंमें ही परस्पर मिलन हो जाता था।

धीरे धीरे उसको ऐसा प्रतीत होने लगा कि हृदय और शरीरकी कोई अद्भुत वेगवती शक्ति उसे मारटाइनकी ओर ले जा रही है। कभी कभी उसके मनमें मारटाइनको मसोसकर भोजनद्वारा या किसी अन्य प्रकारसे अपनी देहका भाग बना लेनेकी उन्मत्त-इच्छा होने लगती थी; और कभी कभी यह विचारकर कि अपनी आत्माका अंश होते हुए भी मेरा इस बालापर पूर्ण अधिकार नहीं है, उसका हृदय मारे क्रोधके उबल उठता और वह अत्यन्त अधीर हो जाता था।

अड़ोस-पड़ोसमें भी अब इनकी चर्चा होने लगी। लोग समझने लग गये कि इन दोनोंकी सगाई हो गई है। विनौयके एक दिन मारटाइनसे यों ही बातों बातोंमें प्रश्न करनेपर उसने इसकी पत्नी बनना स्वीकार भी कर लिया था।

अब दोनों मित्र-युगल अपने अपने माता पिताओंसे संबंध-स्वीकृति लेनेके सुअवसरकी ही राह देख रहे थे।

सहसा मारटाइनने विनौयसे मिलना छोड़ दिया। खेतोंमें ढूँढ़नेपर भी अब विनौयका उससे साक्षात्कार न होता था। रविवारके दिन केवल गिरजा-घरमें, प्रार्थनाके समय, उसको प्यारीकी झलक मात्र दीख जाती थी। अन्तमें एक दिवस रविवारके धर्मोपदेशके पश्चात् पादरी महोदयने विक्टोरिया-एडल-डे-मारटाइन और आइसी-डोर-वॉलिनके विवाहसंबंधकी सूचना दे दी।

सुनते ही विनौयके हाथोंमें सनसनी दौड़ गयी, मानो रक्तका संचार ही

बन्द हो गया हो, कान बजने लगे, वह बहरासा हो गया, और आँखोंसे आँसुओंकी बूँदें हाथपर रक्खी हुई बाईबिलके पृष्ठोंपर टपाटप गिरने लगीं।

एक मास तक अपने कमरे-ही-में रहनेके पश्चात् वह अपने काम-काजकी थोड़ी बहुत देखभाल करनेके योग्य हुआ; परन्तु आरोग्य-लाभ उसको अब भी न हुआ था। मस्तिष्कमें पुराने विचार ही निवास कर रहे थे। मारटाइनके गृहके वृक्ष तकके देखनेकी अनिच्छा होनेके कारण उसने उधरकी राह ही त्याग दी। ऐसा करनेसे उसको घर आनेमें अब बड़ा फेर पड़ता था; परन्तु अतीत-स्मृतिको भुला देनेके लिए उसने यह कष्ट सहना भी सहर्ष स्वीकार कर लिया।

मारटाइनका पति वॉलिन एक अत्यन्त धनी किसान था। विनौयका बाल्यसखा होनेपर भी, इस घटनाके उपरांत इन दोनोंका ऐसा सम्बन्ध-विच्छेद हुआ कि अब बात तक न होती थी।

एक दिन शामको म्यूनिसिपैलिटीकी ओर जाते समय विनौयको राहमें मारटाइनके गर्भवती होनेकी सूचना मिली। इसे सुनकर दुःखित होनेके स्थानमें, उसका हृदय और हलका हो गया। विवाहानंतर भी वह आज-पर्यंत उसके हृदयसे इतनी पृथक् नहीं हुई थी जितनी इस घटनासे हो गई। उसकी आत्मिक-इच्छा भी अब यही थी।

मासके पश्चात् मास बीतने लगे। गाँव-बस्तीमें आते जाते अब विनौयको भी उसके पैर कुछ भारी पड़ते प्रतीत होने लगे; परन्तु विनौयसे साक्षात्कार होते ही वह लज्जासे मुख नीचाकर शीघ्रतासे क़दम बढ़ा आगे निकल जाती थी और यह भी आँखें बचाये हुए रास्ता कतराकर चला जाता था।

अब विनौयको एक और चिन्ता हुई। प्रातःकालके समय मारटाइनसे चार आँखें हो जानेपर तो अवश्य ही कुछ न कुछ वार्त्तालाप करना पड़ेगा और यही उसके लिये बड़े असमंजसकी बात थी। पूर्वकालमें तो वह उसके दोनों हाथ पकड़कर कपोलोंपर लहराते हुए केश-जालका चुम्बन कर लेता था; परन्तु अब यह कैसे संभव था? राह चलते पूर्वकालिक ऐसी बहुत-सी घटनाओंको वह अब सोचा करता था। उसकी बुद्धिमें मारटाइनने प्रतिज्ञा-भंग कर बहुत ही अनुचित कार्य किया था।

धीरे धीरे उसका दुःख घटने लगा। अब केवल उदासीनता ही शेष रह गई थी। एक दिन मारटाइनके घरके सामनेवाले, उसी पुराने रास्तेपर जाते समय, उसकी दृष्टि दूरहीसे गृहकी छतकी ओर गई। आह! इसी घरमें अब वह अन्य पुरुषके साथ निवास करती है! सेवके वृक्ष फूल रहे थे। गोबरके विटौरोंपर बैठे हुए मुर्गे कुकड़ूँ-कूँकी आवाज़ लगा रहे थे। गृह भी खाली था—मजदूर तक खेतोंपर काम करने चले गये थे। विनौय द्वारपर आकर रुक गया और आँगनकी ओर देखने लगा। कुत्ता अपनी माँदके बाहर पड़ा सो रहा था। तीन बछियाँ एकके पीछे एक जल-कुंडकी ओर जा रही थीं और द्वारके निकट मोर नाटकके गायककी भाँति झूम झूमकर मोरनीके सम्मुख नृत्य कर रहा था।

विनौय द्वारके सहारे झुककर खड़ा हो गया। बेचारेकी आँखोंमें आँसू भर आये। परन्तु इसी समय उसको गृहके भीतरसे एक क्रन्दन ध्वनि सुनाई दी। स्वरसे प्रतीत होता था कि वह सहायताका प्रार्थी है। सुनते ही वह घबरा गया और द्वारस्थ किवाड़ोंसे कठहरोंको पकड़ आने वाले शब्दकी ओर ध्यानसे सुननेके लिए सजग हो खड़ा हो गया। इतनेमें पुनः वह शब्द सुनाई दिया। यह प्रथमसे भी अधिक तीव्र और हृदय-वेधक था। उसके कर्ण, शरीर और आत्मा तक इस आर्तनादसे बिध गये। 'अरे! यह तो मारटाइन है और सहायताके लिए प्रार्थना कर रही है।' वह कूदकर अहातेमें गया और क्षण-भरमें घासका मैदान पारकर सीधा गृहके भीतर जो घुसा तो किवाड़ खोलनेपर क्या देखता है कि मारटाइन फर्शपर पड़ी हुई है, उसके अंग प्रत्यंग तने हुए हैं, मुखका रंग उतरा हुआ है और आँखें फैल गई हैं।

यह प्रसव-पीड़ा थी। देखते ही वह भौंचक्का रह गया और मारटाइनसे भी अधिक पीला पड़ गया। इस प्रकार घबरा जानेपर भी उसने कहा—

"मारटाइन! अब मत घबराओ, मैं आ गया हूँ।"

टूटे-फूटे शब्दोंमें उसने कहा—"विनौय, मुझे ऐसी दशामें छोड़कर मत जाना।"

वह उसकी ओर देखता रहा; परन्तु क्या करना चाहिए, यह बात उसकी समझमें अब तक न आई थी। इतनेमें मारटाइन पुनः चिल्ला उठी—

"विनौय, मैं मरी जाती हूँ।"

उसके अंग-प्रत्यंग, इस समय, भयानक रूपसे ऐंठने प्रारम्भ हो गये थे।

विनौयके चित्तम भी सर्वतोभावेन सहायता करनेकी लगन लग रही थी। उसने झुककर मारटाइनको उठाया और शय्यापर लिटा दिया। मारे पीड़ाके वह इस समय भी चिल्ला रही थी। उसने फिर धीरे धीरे उसके वस्त्र—कुरती, साया, पैटीकोट—उतार डाले। घोर पीड़ाके कारण मारटाइन इस समय अपनी मुट्ठियोंको दाँतोंसे काट रही थी। घोड़ी, गाय, भेड़ इत्यादि-के प्रसव-कालमें जो प्रयोग विनौय किया करता था, वही उसने इस समय भी किये और प्रसवमें सहायता पहुँचाई। अन्तमें एक नवजात शिशु उसके हाथोंपर आ पड़ा।

अंग प्रत्यंग साफकर विनौयने, शिशुको वहाँ रक्खी हुई तौलियासे लपेट, मेज़पर इस्तरी करनेके लिए रक्खे हुए कुछ वस्त्रोंपर लिटा दिया। इसके पश्चात् उसने माताको पुनः धरतीपर लिटाया, उसके वस्त्र बदले और पुनः शय्यापर जा लिटाया। मारटाइन धीमे, अस्फुर स्वरसे बोली—"विनौय, तुम महान् आत्मा हो। मैं तुम्हें धन्यवाद किस प्रकार दूँ?" और रोने लगी। मानों उसके हृदयमें व्यथा हो रही थी। विनौयके हृदयमें अब मारटाइनके प्रति अनुराग न था—लेश-मात्र भी न था। वह नाटक तो समाप्त हो चुका था। कैसे, और कब, यह बात तो उसको भी मालूम न पड़ी थी। दस वर्षकी अनुपस्थितिसे भी उसे इतना आरोग्य नहीं हो सकता था, जितना इस बातसे हुआ।

काँपते हुए और घबराहटसे मारटाइनने पूछा—"क्या उत्पन्न हुआ?"

धैर्यपूर्वक विनौयने उत्तर दिया—"एक सुन्दर बालिका।"

इसके पश्चात् वह दोनों चुप हो गये। कुछ ही क्षणके उपरान्त माताने पुनः क्षीण स्वरसे कहा—"विनौय, बालिका, तनिक मुझको भी दिखा दो।"

सुन्दर नवजात शिशुको पवित्र मैमनेकी भाँति उठाकर वह मारटाइनको दिखा रहा था कि इतनेमें कपाट खुले और आईसी-डोर-वॉलिन सामने आ उपस्थित हुआ।

प्रथम तो वह कुछ न समझा; परन्तु फिर एक क्षणमें ही सब बातें उसकी समझमें आ गईं।

घबराकर विनौय कहने लगा—“ मैं इधरसे जा रहा था भाई! ठीक इधरसे ही जा रहा था कि मुझे इसका आर्त्तनाद सुनाई पड़ा—मैं यहाँपर आ गया। यह तुम्हारा शिशु है, इसको लो वॉलिन!” पिताकी आँखोंमें भी आँसू भर आये और उसने आगे बढ़कर उस नवजात प्राणपिंडको अपने हाथोंमें लेकर चुम्बन कर लिया। उद्वेगके कारण कुछ पलके लिए तो उसका कंठ भी रुँध गया और वह कुछ न कह सका। अन्तमें शिशुको शय्यापर लिटा, दोनो हाथोंको विनौयकी ओर फैलाकर उसने कहा— “ विनौय, तुम ही इसकी रक्षा करोगे। आजसे हम दोनों एक दूसरेको भले प्रकारसे समझ सकेंगे। यदि तुम स्वीकार करो तो हम दोनों आजसे मित्र हुए। क्यों ठीक है न?

विनौयने उत्तर दिया—“ मुझे पूर्णरूपेण स्वीकार है।”